||રામ||

।। रामकथा ।।

मोरारिबापू

मानस-बिहारी

पटना (बिहार)

मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।
रूप रासि नृप अजिर बिहारी। नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी।।

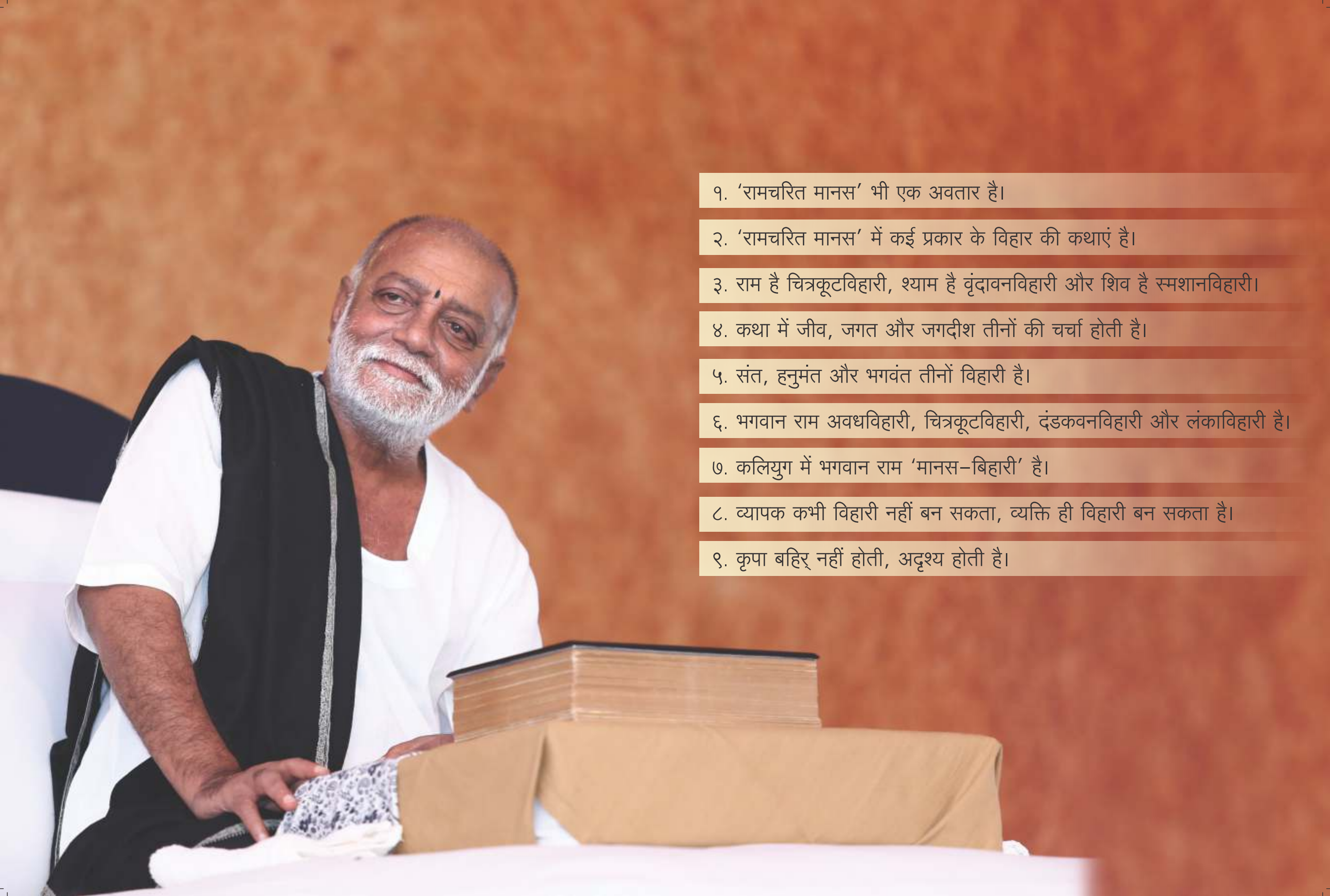

१. 'रामचरित मानस' भी एक अवतार है।

२. 'रामचरित मानस' में कई प्रकार के विहार की कथाएं है।

३. राम है चित्रकूटविहारी, श्याम है वृंदावनविहारी और शिव है स्मशानविहारी।

४. कथा में जीव, जगत और जगदीश तीनों की चर्चा होती है।

५. संत, हनुमंत और भगवंत तीनों विहारी है।

६. भगवान राम अवधविहारी, चित्रकूटविहारी, दंडकवनविहारी और लंकाविहारी है।

७. कलियुग में भगवान राम 'मानस–बिहारी' है।

८. व्यापक कभी विहारी नहीं बन सकता, व्यक्ति ही विहारी बन सकता है।

९. कृपा बहिर् नहीं होती, अदृश्य होती है।

।। **रामकथा** ।।
मानस-बिहारी

मोरारिबापू
पटना (बिहार)
दिनांक : ११-६-२०१६ से १९-६-२०१६
कथा-क्रमांक : ७९६

प्रकाशन :
जनवरी, २०१८

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

रामकथा पुस्तक प्राप्ति सम्पर्क-सूत्र :
ramkathabook@gmail.com
+91 704 534 2969 (only sms)

ग्राफिक्स
स्वर एनिम्स

प्रेम-पियाला

मोरारिबापू ने पटना (बिहार) में ११-६-२०१६ से १९-६-२०१६ के दिनों में रामकथा का गान किया, जो कथा का विषय रहा 'मानस-बिहारी।' बापू ने भारतवर्ष का विहार की भूमि के रूप में परिचय दिया और कहा कि यहां पहले पूरा देश विहारी ही तो था। जगद्गुरु शंकर ने विहार किया; बुद्ध ने विहार किया; महावीर ने विहार किया; पंडितों ने विहार किया; यहां सब विहार करते थे। पूरा देश विहारी है। ये विहार की भूमि है। और बिहार की भूमि के संदर्भ में बापू का कहना हुआ कि बिहार की पावन भूमि इतिहास और अध्यात्म की गंगा-जमुना का मिलन है।

'रामचरित मानस' में विधविध पात्रों ने किये विभिन्न प्रकार के विहार को निर्दिष्ट करते हुए बापू ने कहा, 'रामचरित मानस' में गगन-विहार भी है। 'मानस' में भूमि-विहार भी है। 'मानस' में वाटिका-विहार भी है। 'मानस' में योग-विहार भी है। 'मानस' में वियोग-विहार भी है। 'मानस' में अनुराग-विहार भी है। 'मानस' में विराग-विहार भी है। 'मानस' में वन-विहार भी है। 'मानस' में भवन-विहार भी है। व्यासपीठ को गुरुकृपा से जो समझ में आया है ऐसी बहुत बिहारी लीलाएं 'मानस' में है। 'रामचरित मानस' में कई प्रकार के विहार की कथाएं है।

कथा अंतर्गत बापू ने भगवान राम, कृष्ण और शिव तीनों के विशिष्ट विहार का भी जिक्र किया, ''भगवान राम को हम चित्रकूटविहारी कहते हैं। तो राम है चित्रकूटविहारी। और घनश्याम मानी श्याम है वृंदावनविहारी। शिव है स्मशानविहारी। भगवान शिव स्मशानविहारी है। स्मशान में उसकी क्रीड़ा है। वृंदावनविहारी की वृंदावन में क्रीड़ा है। राघव की चित्रकूट में क्रीड़ास्थली मानी गई है।''

'भगवान राम अवधविहारी, चित्रकूटविहारी, दंडकवनविहारी और लंकाविहारी है।' ऐसे सूत्रात्मक निवेदन के साथ बापू ने कहा, भगवान राम ने अपने जीवनकाल में, अवतारकाल में चार स्थान में विशेष विहार किया है। वैसे तो पांच है लेकिन मैं दो को साथ में रख दूंगा। एक तो भगवान अवधविहारी है। अयोध्या अंतर्गत राजाधिराज के आंगन में भी आपने विहार किया। लेकिन भगवान मिथिलाविहारी भी तो है। मिथिलावासी संत कहते हैं कि प्रभु ने हमारे यहां विहार किया है, नगरविहार, पुष्पवाटिका का विहार; आध्यात्मिकता से भरपूर विवाहमंडप का विहार। इसलिए भगवान मिथिला बिहारी भी है। फिर भगवान का दूसरा विहार है चित्रकूट। उसको हम चित्रकूट विहारी कहते हैं। भगवान का तीसरा विहार है दंडकवन में। और अंततोगत्वा जो मुख्य प्रयोजन था प्रभु का दुरित को नष्ट करना। उसके लिए प्रभु ने लंकाविहार किया।

बिहार की पवित्र भूमि पर गाई गई इस कथा अंतर्गत यूं 'मानस' के माध्यम से मोरारिबापू ने प्रभु की विहारलीला के संदर्भ में अपने दार्शनिक विचार प्रस्तुत किये।

– नीतिन वडगामा

मानस-बिहारी – १

'रामचरित मानस' भी एक अवतार है

मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।
रूप रासि नृप अजिर बिहारी। नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी।।

बाप! भगवद्कृपा से फिर एक बार बिहार की इस महिमावंत भूमि पर रामकथा गाने का अवसर प्राप्त हुआ। सबसे पहले मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। कथा का आरंभ होने जा रहा है तब सबसे पहले इस भूमि की हर एक क्षेत्र की तमाम चेतनाओं को मैं मेरी व्यासपीठ से प्रणाम कर रहा हूं। कथा में यत्र-तत्र कहीं भी बैठे हुए पूजनीय संतगण, विद्वत्गण और हमारे इस बिहार के आदरणीय मुख्यमंत्री श्री पधारे; मुझे अच्छा लगा कि आपने कहा कि मुझे पत्र मिला, निमंत्रण मिला, मैं आया, न मिलता तो भी आता। ये नीतिशकुमारजी नहीं बोल रहे हैं, ये बिहार का शील बोल रहा है; बिहार का संस्कार बोल रहा है। और अंततोगत्वा राजपीठ को कभी न कभी व्यासपीठ के पास आना ही होता है। ये हमारी परंपरा है। कितने सम्राट बुद्ध के पास गए! ये हमारी परंपरा है। और जब यहां के आदरणीय मुख्यमंत्रीश्री उसका निर्वहन कर रहे तब व्यासपीठ प्रसन्न होती है। मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

जब कहीं शुभ बातें होती है और ये शुभ बातें परिणाम में परिवर्तित होती है तब मुझे बड़ी प्रसन्नता होती है। और मैं हमारे आदरणीय मुख्यमंत्रीसाहब को बधाई देना चाहता हूं, व्यासपीठ से अभिनंदन करता हूं, अपने समग्र बिहार में नशाबंदी बिलकुल टोटल रूप में करके एक बहुत बड़ा कदम उठाया है। आपको महात्मा गांधीबापू के आशीर्वाद से बहुत बल मिलेगा ऐसी मैं हनुमानजी से प्रार्थना करूं। मैं चाहूंगा, पूरे देश में नशाबंदी हो। पूरे देश में गायों का सन्मान हो, हमारी गंगा पवित्र बहे। पवित्र तो है, स्वच्छ रहे और पूरे देश से भ्रष्टाचार नाबूद हो। और आप साहसी कदम उठा रहे हैं इसलिए मैं ओर तो क्या कहूं लेकिन व्यासपीठ पर बैठा हूं; आपको इसके लिए बहुत-बहुत बल मेरा हनुमान प्रदान करे और इस बल का फल और रस पूरी बिहार की प्रजा को प्राप्त हो ऐसी मेरी प्रभुप्रार्थना है।

बिहार तो विद्वानों की भूमि है साहब! मैं इस कथा का शीर्षक रखूंगा, 'मानस-बिहारी।' मुझे 'मानस-बिहारी' पर बोलना है मेरे गुरु की कृपा से। तो इस नौ दिन मुझे 'मानस-बिहारी' पर कहना है कि यहां पहले तो पूरा देश विहारी ही तो था। जगद्गुरु शंकर ने विहार किया, बुद्ध ने विहार किया, महावीर ने किया, पंडितों ने किया। यहां सब विहार करते थे। पूरा देश विहारी है। ये विहार की भूमि है। मुझे अपने बिहार के प्रति आदर है, प्यार है। मैं राजी हूं कि ऐसे साहसी कदम उठाये। अरे, परिणाम जो आये साहब! लेकिन साहस तो करना चाहिए। लेकिन मैं जनता को कहना चाहूंगा कि सरकारें लोकमंगल के कार्यों की उद्घोषणा करती हैं। उसके लिए कदम उठाती हैं, लेकिन आखिर में फ़र्ज हम सबका है। पूरी जनता का ये फ़र्ज है कि-

नशा तो मुझ में है शराब में नहीं,

यदि शराब में होता तो बोतलें क्यों न उछलती?

नशा तो इन्सान में संस्कार का होता है; अपने शील का होता है; अपने पूर्वज और बुद्धपुरुष की साधना का होता है।

बिहार की ये पावन भूमि इतिहास और अध्यात्म की गंगा-जमुना का मिलन है। यहां अध्यात्म इतना बहा। साहब! बुद्ध से कोई अछूता नहीं रह सकता। मेरे तुलसी को भी बुद्ध को प्रणाम करना पड़ा। लेकिन हमारी सनातन परंपरा में वेद को प्रमाण माना गया है। जहां वेद प्रमाणित न करे तो फिर उसको हम स्वीकारते नहीं ऐसी एक परंपरा-सी रह गई। संशोधन सबमें होना चाहिए। इसीलिए हमने बुद्ध को स्वीकारा अवतार में। लेकिन बुद्ध ने यज्ञों का आदि-आदि जो विरोध किया। थोड़ा वेद का विरोध किया। इसलिए हमने उसको नकारा भी। उसके दर्शन को नकारा। लेकिन बुद्ध से कौन अछूता रह सकता है? महावीर से कौन अछूता रह पाएगा?

भारत आज़ाद हो हमारा देश और सबसे पहले प्रथम नागरिक के रूप में एक बिहार के महामहिम व्यक्ति आकर उस डो. राजेन्द्रप्रसाद जो विराजमान हो। जो साधु-संतों को राष्ट्रपति भवन में बुलाकर के सत्संग का निमंत्रण देते थे राजेन्द्रप्रसादबाबू। जो आदमी अपने राष्ट्रपति भवन में हमारे जयपुर के एक प्रकांड पंडित, उसको बुलाकर के गोपीगीत की कथा करवाएं। स्वामी शरणानंदजी, प्रज्ञाचक्षु, उसको बुलाकर के राष्ट्रपति महोदय राजेन्द्रबाबू ने स्वागत करके कहा कि महाराजश्री, हम आपका मार्गदर्शन चाहते हैं। क्या? हमारी इच्छा है, रास्ता भी है, चलने को मन भी करता है, लेकिन हम काम क्यों नहीं कर पाते? आज़ाद भारत का राष्ट्रपति एक साधू से मार्गदर्शन प्राप्त करता है। स्वामी शरणानंदजी ने राजेन्द्रबाबू को कहा कि मेरा जवाब इतना ही है कि वेदना का अभाव है। जब प्रत्येक व्यक्ति में संवेदना प्रगट हो जाएगी राजेन्द्रबाबू, तो फिर रास्ते पर चलने में कौन रोकेगा लक्ष्यप्राप्त करने में? वेदना का अभाव है। बहुत खुश हुए राजेन्द्रबाबू और जिस देश के पास वेद हो और वेदना गंवा दे तो? जरूरी है संवेदना।

अब जो पंक्तियां मैंने इस नौ दिवसीय कथा के लिए चुनी है, 'रामचरित मानस' की पहली पंक्ति जो मैंने चुनी है वो 'बालकांड' से है। दूसरी पंक्ति जो मैंने ली है वो 'उत्तरकांड' से है। दोनों पंक्ति में 'बिहारी' शब्द है। और 'बिहारी' शब्द का शास्त्रीय रूप, आध्यात्मिक रूप, ऐतिहासिक रूप, शृंगारिक रूप भी यस। और बिहार की ये भूमि, ये मिथिला प्रांत, ये मैथिलि माँ जानकी की भूमि इसके लिए तो कहना ही क्या? भगवान राम ने चार लीलाएं की है। भगवान राम की समग्र संस्कार-लीला अयोध्या में हुई है। चूडाकरण संस्कार, यज्ञोपवित संस्कार, आदि-आदि जितनी संस्कार की जो लीलाएं है वो भगवान राम की अयोध्या में संपन्न हुई है। भगवान राम ने शृंगार-लीला जो की वो बिहार की भूमि पर की। माँ जानकी की ये भूमि है। तब तो सब बिहार ही है। शृंगार-लीला ठाकुरजी की यहां है। चित्रकूट में भगवान राम गए तो वहां उसकी विहार-लीला है।

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु।

तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुबीर बिहारु।।

विहार-लीला ठाकुरजी की चित्रकूट में हुई। और संहार-लीला लंका में हुई। इनमें बिहार की जो लीलाएं है 'बिहारी' शब्द लेकर के। बिहारी मीन्स विहार करनेवाला, विचरण करनेवाला, खेलनेवाला, क्रीड़ा करनेवाला। कितने अर्थ लगाये जाएं! तो मैंने सोचा कि बिहार की भूमि पर हम 'मानस-बिहारी' का कुछ दर्शन करें। उसके हर पहलूओं का हम साथ में मिलकर संवाद करेंगे।

'रामचरित मानस' के प्रसंग तो जरूर यथासमय उसका संवाद आपके साथ मैं करूंगा। लेकिन सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा केन्द्र में रहेगी। और केन्द्रीय विषय रहेगा 'मानस-बिहारी।' 'मानस' में किस क्षेत्र में किसने कैसा विहार किया और वो विहारी बने। तुलसी का 'रामचरित मानस' गाते-गाते हमको पूरा महसूस हो चुका है कि 'गुपुत प्रगट जहँ जो जेहि खानिक।' ये अनंत है। इसमें जितनी गुरुकृपा से खोज की जाये रोज नया अमृत प्राप्त होता है। और एक समय ऐसा आता है कि खोजते-खोजते साधक स्वयं खो जाता है। ऐसी अवस्था प्राप्त हो जाती है। ऐसा एक अद्भुत शास्त्र 'रामचरित मानस।'

रामकथा की एक परंपरा-सी है कि पहले दिन वक्ता को चाहिए कि शास्त्र का, सद्ग्रंथ का माहात्म्य यानी परिचय कराये कि किस शास्त्र की ये कथा है? सद्ग्रंथ परिचय। ज्यादातर माहात्म्य में क्या होता है कि प्रलोभन बताये जाते हें कि इस शास्त्र का ये माहात्म्य है। मैं इस प्रलोभनवाली बातों में नहीं जाना चाहता क्योंकि मेरी रुचि के अनुकूल नहीं। शास्त्र आदमी को प्रलोभन से मुक्त करता है। शास्त्र आदमी को भय नहीं दिखाता। शास्त्र आदमी को अभय प्रदान करता है। 'रामचरित मानस' ये सात सोपान का शास्त्र है। वाल्मीकिजी ने उसको कांड कहा। तुलसी ने 'कांड' शब्द का प्रयोग नहीं किया। तुलसी सोपान कहते हैं। तो सात सोपान का ये शास्त्र अद्भुत ग्रंथ है।

तो सात सोपान में ये पूरी रामकथा गोस्वामीजी ने बहुत संशोधन करके लिखी। रामकथा में लिखा है कि पार्वती ने प्रश्न पूछा था कि भगवन्, भगवान राम स्वधाम कैसे गए वो कथा भी मुझे सुनाइए। तुलसीदासजी ने ये कथा नहीं सुनाई। सीताजी को दूसरी बार सगर्भा में निष्कासित होना पड़ा, ये प्रसंग तुलसी ने 'मानस' में नहीं उठाया। श्रीभागवतजी के माहात्म्यकार ने ऐसा लिखा है, वक्ता ऐसा होना चाहिए, 'वेदशास्त्रविशुद्धिकृत।' समय-समय पर वेद-शास्त्र का भी संशोधन होना चाहिए। और तुलसी वाल्मीकि से बहुत-सी बातों में संशोधन कर रहे हैं। इसीलिए मेरे भाई-बहन, तुलसी ने कई प्रसंगों को हटा दिए हैं 'मानस' से जो परंपरा में थे।

तो ये सात सोपान में एक अद्भुत सद्ग्रंथ हमारे पास है। मेरी निष्ठा के कारण मैं बोलूं। आप सहमत हो न हो ये आपकी स्वतंत्रता है। ये आपका अधिकार है। फिर भी आप सुनते हैं, ये आपकी उदारता है। बाकी मैं कह सकता हूं कि विश्व के लिए, जब भी कोई माने, आखिरी अद्भुत शास्त्र है 'रामचरित मानस।' उसके बाद जगत को जरूरत पड़ेगी तो ये दुनिया वांझ नहीं रहती, कोई न कोई और नया शास्त्र आ सकता है। लेकिन 'रामचरित मानस' अद्भुत है। तो सात सोपान में ये ग्रंथ का सृजन हुआ है। और बड़ी कृपा तुलसी ने ये की कि संस्कृत के इतने प्रकांड विद्वान होते हुए श्लोक को लोक तक ले जाने के लिए, आखिरी व्यक्ति तक रामकथा पहुंचे इसलिए तुलसी लोकबोली में, एकदम हमारी देहाती भाषा में, ग्राम्यगिरा में पूरे शास्त्र को उतारते हैं। क्योंकि उसको श्लोक को लोक तक ले जाना है। कबीर ने भी यही काम किया। तुलसी ने भी यही काम किया। पचीस सौ साल पहले इस प्रदेश में भगवान बुद्ध ने और पूरे विश्व में यही काम किये कि अपनी ग्राम्य गिरा में बोले। शास्त्र आया ग्राम्य वाणी में। भगवान महावीर ने भी यही काम किया। तो कोई भी भाषा में आप लो लेकिन शास्त्र का सार आखिरी व्यक्ति तक जाना चाहिए। धन्य है ऐसे संतों को जिन्होंने संस्कृत के प्रकांड विद्वान होते हुए भी लोकबोली में लोक तक श्लोक को पहुंचाने का उपकारक मिशन चलाया। इनमें एक है गोस्वामी तुलसी जो ग्राम्यगिरा में रामकथा घर-घर पहुंचा दी। किसके घर में रामकथा नहीं? घर-घर में नहीं, घट-घट में रामकथा पहुंची हुई है साहब! और रामकथा रोज नई है। इसका भरोसा रखना। गंगा रोज नई है। और तुलसी ने रामकथा को गंगा कहा है।

पूछेहु रघुपति कथा प्रसंगा।

सकल लोक जग पावनि गंगा।।

पहले सोपान 'बालकांड' में तुलसीदासजी संस्कृत में मंगलाचरण करते हैं। और सात मंत्रों में करते हैं। तुलसी के 'रामचरित मानस' से आपको सात-सात की संख्या बहुत प्रेरणादायी रूप में प्राप्त होगी। आरंभ होता है सात मंत्रों में मंगलाचरण में। और आप जानते हैं, 'रामचरित मानस' के 'उत्तरकांड' में, जहां रामकथा समापन होती है वहां कागभुशुंडिजी के सात प्रश्नों के उत्तर में रामकथा समापन की ओर जाती है। सात आकाश है, सप्त पाताल है, संगीत के सात सूर है। हमारी मान्यता में सप्तसागर है। सात-सात कितनी-कितनी वस्तु है हमारे यहां! मानो सबको समाहित किये हुए तुलसी का ये शास्त्र। पहले सोपान में सात मंत्रों में मंगलाचरण करते हैं। एक-दो मंत्र का हम स्मरण कर लें-

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।

मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररूपिणम् ।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते ।।

पहले मंत्र में वाणी और विनायक की वंदना की। दूसरे में विश्वास और श्रद्धा के घनीभूत रूप शिव और पार्वती की वंदना की। तीसरे मंत्र में त्रिभुवन गुरु भगवान महादेव की वंदना की। फिर सीतारामजी की वंदना की। वाल्मीकि, हनुमानजी की वंदना की। और आखिर में गोस्वामीजी कहते हैं, मेरे स्वान्तः सुख के लिए मैं इस कथा को भाषाबद्ध कर रहा हूं। और सात मंत्र संस्कृत में लिखने के बाद तुरंत गोस्वामीजी देहाती भाषा में अपने सद्ग्रंथ को ऊतारते हैं। भगवान ब्रह्म को हम कहां पहुंचेंगे पाने के लिए? लेकिन ब्रह्म कौशल्या ने जैसा चाहा वैसा छोटा होता-होता कौशल्या की गोद में धरती पर आ गया। वैसे 'रामचरित मानस' भी एक अवतार है। सामान्य व्यक्ति की गोद तक ये रामकथा जा रही है लोकबोली में।

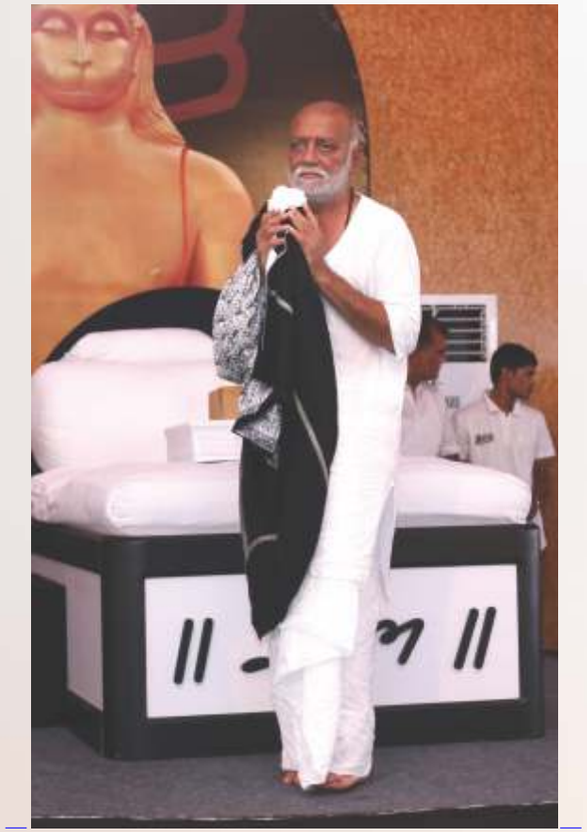

आखिर में जो मेरे पास रिपोर्ट आई विश्व संस्था हमारी यूनो (UNO) की, उसमें जितने देश सदस्य हैं आज, वर्तमान में। इन देशों की जो प्रधान भाषाएं हैं इन प्रत्येक प्रधान भाषा में 'रामचरित मानस' का अनुवाद हुआ है। और मैंने इसे वैश्विक ग्रंथ बहुत सालों पहले कहा है। प्रमाण मुझे अब मिल रहा है। हमारे लखनउ में एक हमारे मुस्लिम शायर जलालपुरीसाहब, उसने मुझे कहा कि बापू, आपको लखनउ आना पड़ेगा मेरे ग्रंथ का विमोचन करने। मैं गया भी। उसने 'श्रीमद् भगवद्गीता' को एक ओर श्लोक और एक ओर उसके सामने शेरो में उर्दू भाषा में पूरा 'श्रीमद् भगवद्गीता' का रूपांतर किया। और मुझे जाने का अवसर मिला। मैंने बहुत प्रसन्नता व्यक्त की और मैंने निवेदन किया, जलालपुरीसाहब, मैं एक प्रार्थना भी करूं कि जैसे 'गीता' का किया ऐसे शेरोशायरी में तुलसी की चौपाई को ऊतारो। बोले, बापू, कोशिश करूंगा। पहले 'हनुमानचालीसा' फिर 'सुन्दरकांड'; मैं ट्राई करूंगा।

प्रत्येक भाषा में राम है। और वो राम सीता के लिए, सीता के कारण राम है। और सीता राममढी में प्रगट हुई। सीता विशेष है। राम तो अनादि है, सवाल ही नहीं साहब! सीता एक विशेष रूप में राम के साथ जुड़ी है। वो सीताराम की कथा कहां नहीं है? तो हर एक भाषा में रामकथा है। हर एक देश को अपनी-अपनी रामकथा है। तो ऐसी रामकथा एक अवतार है। और जैसे राम माँ कौशल्या के अंक में निर्गुण ब्रह्म, साक्षात् ईश्वर, व्यापक ब्रह्म व्यक्ति बन जाता है; जगत का बाप किसी का बेटा बन जाता है; निराकार नराकार हो जाता है। वैसे रामकथा भी संस्कृत के गिरिशृंग से ऊतरकरके लोकहृदय तक एक झोंपडे तक पहुंची हुई ये भगवान की कथा है। और आज मुझे खुशी है कि देश-विदेश के आनंदवर्धन हो ऐसी संख्या में युवानों की झोली में 'रामचरित मानस' दिखने लगता है। ये प्रभु की कृपा है। मेरा लक्ष्य युवान भाई-बहन है। वो मेरे पास आये।

तो लोक बोली में कथा ऊतरी। तुलसीदासजी ने पांच सोरठे लिखे। इसमें पहले सोरठे में गणेश, दूसरे सोरठे में सूर्य, तीसरे सोरठे में भगवान शिव और पार्वती, भगवान विष्णु, पांच सोरठे में पांच देवों का स्मरण किया। जगद्गुरु आदि शंकराचार्य जो हमें पंचदेवों की बात कहते हैं कि सनातन धर्मावलंबियों को चाहिए कि पंचदेवों का स्मरण करें। तुलसीदासजी शैव नहीं है, वैष्णव है। लेकिन सेतु बनाया। ये शास्त्र सेतुबंध का शास्त्र है; जोड़ने का शास्त्र है। तो शांकर मत को अपनी कथा के आरंभ में सबसे पहले स्थापित किया और पांच देवों की स्मृति की। युवान भाई-बहन, गणेशपूजा, गौरीपूजा, शिवपूजा, सूर्यपूजा और विष्णुपूजा हमारी परंपरा की पूजाएं हैं। हर वक्त मेरा कहना रहा कि आप ये करो तो आप वंदनीय है, लेकिन यदि न कर सको तो इतना करें। गणेश पूजा मिन्स अपने विवेक को आदर देना तो गणेशपूजा है। गणेश मानी युवान लोग विवेक रखें। सूर्यपूजा का मेरा अर्थ है उजाले में रहने का संकल्प। जहां तक संभव हो हम उजाले में रहने की कोशिश करें। ये हो गई सूर्यपूजा। विष्णु की पूजा; विष्णु का अर्थ होता है व्यापकता, विशालता, औदार्य। युवान भाई-बहन, अपने विचारों को विशाल रखो, संकीर्ण नहीं। कूपमंडूकता नहीं। हमारी तकलीफ़ क्या है, दृष्टि हम सबके पास है, लेकिन दृष्टिकोण नहीं है। सत्संग हमें दृष्टिकोण का दान देता है।

काबे से बुतकदे से कभी बज़्मे जाम से।
आवाज़ दे रहा हूं तुम्हे हर मकाम से।

ये विशालता आनी चाहिए। ये औदार्य आना चाहिए। हमने अपने हेतुओं को सिद्ध करने के लिए कितनी संकीर्णता पैदा कर ली? विष्णुपूजा वो है जो विशाल दृष्टिकोण हो। सबको समाहित किया जाए। ये बहुत आवश्यक है। दुर्गा की पूजा मानी श्रद्धा। तुलसी कहते हैं-

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।

पार्वती मानी श्रद्धा। दुर्गापूजा तो करनी ही चाहिए लेकिन यदि न कर पाए तो हमारी श्रद्धा मिटे न। दो वस्तु हैं, शिव विश्वास है, भवानी श्रद्धा है। संतों ने अनुभव से कहा, श्रद्धा से परमात्मा मिलता है, विश्वास से भक्ति मिलती है। जिसको भगवान चाहिए वो श्रद्धा के मार्ग पर शुरू करे। तो पार्वती की पूजा, दुर्गापूजा मानी श्रद्धा। अश्रद्धा नहीं होनी चाहिए और अंधश्रद्धा भी नहीं होनी चाहिए। श्रद्धा तो होनी ही चाहिए। आचार्य चरण कहते हैं, 'आदौ श्रद्धा।' श्रद्धा के बिना जी ही नहीं पाएंगे हम। अंधश्रद्धा नहीं होनी चाहिए। गलत परिचय, गलत चमत्कार, तुमको भीरु बना दे, ये धागा, फलां-फलां तुमको प्रलोभन दे। इससे बाहर आओ। अंधश्रद्धा से बाहर निकलो। और अश्रद्धा से जीना संभव नहीं है। श्रद्धा चाहिए। मौलिक श्रद्धा, विशेषणमुक्त श्रद्धा ये पार्वती है, ये दुर्गा है। और पंचदेव में शिव की बात है। शिव का मतलब है कल्याण। जगद्गुरु शंकराचार्य ने एक प्रश्नोत्तरी लिखी है। श्रद्धा किम्? आदि आदि छोटे-छोटे प्रश्न और उत्तर देते हैं। उसमें एक प्रश्न ऐसा कि जगत में शीलवान, संस्कारवान और सच्चा धार्मिक कौन? तो शंकराचार्य कहते हैं, जिसको शिवतत्त्व में निष्ठा हो। जिसको शिवतत्त्व में निष्ठा नहीं वो न संस्कारी है, न धार्मिक है। शिव मानी यहां कल्याण। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः।' सबका शुभ हो।

युवान भाई-बहन, पंचदेव का मेरा मतलब गणेशपूजा मानी विवेक, सूर्यपूजा मानी उजाले में रहने का शिवसंकल्प। पार्वती की पूजा मानी श्रद्धा को अखंड रखो; मौलिक श्रद्धा को। विष्णु की वंदना मानी दृष्टिकोण विशाल हो। और शिव मानी कल्याणकारी विचारधारा हो। राम की कथा वैष्णवी कथा है, लेकिन पांच सोरठे में तुलसी ने पांच देवों का स्मरण करके स्थापना शंकराचार्य के मत से की। यही था सेतुबंध मेरे देश का। यही था एक-दूसरों को जोड़ने का एक शिवसंकल्प।

तुलसी ने 'रामचरित मानस' का जो पहला प्रकरण लिखा चौपाईयों में, दोहे में वो है गुरुवंदना, गुरुमहिमा। क्योंकि हम प्रवाही गुरु परंपरा के वहन करनेवाले लोग है। यद्यपि तथागत बुद्ध ने कहा कि कोई गुरु की जरूरत नहीं। हां, कोई ऐसा कह भी सकते हैं; ऐसे पा भी सकते हैं। लेकिन जहां तक हम जैसों का सवाल है, गुरु चाहिए। कोई न कोई मार्गदर्शक चाहिए। भगवान बुद्ध ने जरूर कहा कि 'अप्प दीपो भव।' हां, तेरा दीया तू जला। तू तेरे दीये के उजाले में चल। लेकिन कोई एक तत्त्व चाहिए कि जो दीया जला दे। इसीको हम गुरुतत्त्व कहते हैं। फिर तो उसी उजाले में हम यात्रा करें। गुरु बाधक नहीं। जो गुरु अपने आश्रित की स्वतंत्रता छिन ले वो गुरु है ही नहीं। गुरु वो है जो आश्रित को सदा-सर्वदा निजतंत्र रखे, निर्भय रखे। विनोबाजी ने आचार्य संघ की स्थापना की। और फिर हमारे उपनिषद कहते हैं, 'आचार्य देवो भव।' आचार्य की परिभाषा क्या? तो महामुनि विनोबाजी का वक्तव्य है कि तीन लक्षण जिसमें हों उसको आचार्य कहना। बड़े प्यारे लक्षण। एक, जो निर्भय हो वो आचार्य। डरे वो गुरु नहीं। घबराये वो गुरु काहे का? दूसरा, जो निष्पक्ष हो वो

आचार्य। जो बिलकुल असंग रहता हो। जिसको कोई रागद्वेष न हो। अपने-पराये का भेद न हो। सबको सलाम करता हो। सबके लिए दुआ करता हो। सबके साथ परस्पर प्रीत करता हो। निष्पक्ष हो। और तीसरा, गुरु निर्वैर हो। बिलकुल शत्रुता से मुक्त जिसका अंत:करण हो। गुरु के ये तीन लक्षण। ऐसे बुद्धपुरुष के शरण में जाना बाप कि अपनी अनुभूति में खरा ऊतरे कि ये आदमी निष्पक्ष है। ये आदमी निर्वैर है। किसी के साथ उसको विरोध नहीं। और ये आदमी निर्भय है।

तो गुरु की जरूरत होती है। ये गुरुओं का देश है। जिसको जरूरत न हो ये उनकी मौज है, ये उनकी यात्रा है। उसको प्रणाम करें। ऐसे पहुंचे हुए महापुरुषों की भी दुआ लें। लेकिन हम जैसों के लिए गुरु चाहिए। पुष्पदंत तो अपने स्तोत्र के समापन में कहते हैं, 'नास्ति तत्त्वं गुरो: परम।' इस विश्व में गुरु से ऊंचा कोई तत्त्व नहीं है। इसलिए हमने गुरु को ब्रह्मा कहा। गुरु को विष्णु कहा। गुरु को शिव कहा। कोई ऐसा मार्गदर्शक चाहिए जो हमारी गति करे। हमें परवश न करे लेकिन हमें लगे कि कोई हमारे अगल-बगल में है। आखिर में गुरु है जिसको तुलसी 'मानस' में कहते हैं, 'तुम्ह त्रिभुवन गुरु बेद बखाना।' तू त्रिभुवन का गुरु है। तू अस्तित्व है बाप! तो ऐसे गुरुतत्त्व की, ऐसे बुद्धत्व की हमारे देश ने, प्रेरणा ऐसे महापुरुषों से पाई। तो तुलसी पहले गुरुवंदना करते हैं। उसकी पंक्तियां जिसको मैं, मेरी निष्ठा के अनुकूल कहता हूं कि ये 'मानस-गुरुगीता' है। एक संस्कृत में गुरुगीता है, आप जानते हैं। शिव-पार्वती के संवाद में गुरुमहिमा की बातें हैं। लेकिन उसमें कहीं-कहीं डर भी है। तुलसी की 'मानस-गुरुगीता' में कोई डर नहीं, कोई प्रलोभन नहीं साहब! आपको निर्भय करती है। इसकी दो-तीन पंक्तियां हम गा लें।

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।
गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन।
नयन अमिअ दृग दोष बिभंजन।।

पहला प्रकरण गुरुमहिमा है, गुरुवंदना है। गुरु की चरणरज से मेरे नेत्रों को पवित्र करके तुलसी कहते हैं, संकल्प छोड़ते हैं कि मैं अब 'रामचरित मानस' वर्णन करने जा रहा हूं। लेकिन 'मानस' के पाठक, अध्यापक, अध्ययनकर्ता, पारायणकर्ता, श्रावक, वक्ता सब जानते हैं कि ये संकल्प तुलसी ने रखा लेकिन रामकथा शुरू नहीं कर पाए। रामकथा तो बहुत देर से शुरू की। इस घटना के बाद तो तुरंत उसने वंदना शुरू की। सबसे पहले ब्राह्मणों की वंदना की। फिर समाज के सज्जनों की वंदना की। संतों की और साधुसमाज की वंदना की। शठों की, खलों की, दुर्जनों की, रजनीचरों की, जड़ की, चेतन की सबकी वंदना करने लगे तुलसी। किसी ने कहा कि बाबा, आपने तो कहा कि गुरुचरणरज से आंख निर्मल करके मैं 'रामचरित मानस' वर्णन करने जा रहा हूं और आप तो विषयांतर कर गए! तुलसी ने कहा कि मैं मजबूर हूं। क्योंकि एक बार गुरु की चरणरज से आंख पवित्र हो जाती है तब आदमी वंदन किये बिना रह ही नहीं सकता। उसको पूरा जगत वंदनीय लगता है। यही प्रमाण है। हमारी आंख पवित्र हुई कि नहीं इसका एक मात्र प्रमाण कि सब हमको वंदनीय लगते हैं तो समझना आंख पवित्र हो गई। और वंदनीय न लगे और निंदनीय लगे तो समझना कि अभी हमारी आंख पवित्र नहीं हुई। तुलसी कहते हैं, आंख पवित्र हो गुरु की चरणरज से और पूरा जगत वंदनीय लगे, 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म।' हो जाए तब 'रामचरित मानस' की चर्चा होती है। ये सब भेद जब मिट जाए तब रामकथा का आरंभ होता है। और ये भेद मिटते हैं केवल किसी बुद्धपुरुष की चरणरज है। तुलसी की प्रसिद्ध पंक्ति आप सब जानते हैं, उसको गा लूं-

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

पूरे जगत को सीतारामम्य समझकर के मेरे दोनों हाथ जोड़कर मैं पूरे जगत को प्रणाम करता हूं। तुलसी ने सबकी वंदना की। इसी वंदना क्रम में तुलसी ने माँ कौशल्या की वंदना की। अन्य रानियां की वंदना की। महाराज दशरथजी की वंदना की। जनकराज की वंदना की। भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मणजी की वंदना की। पारिवारिक वंदना चल रही है। लेकिन इन पारिवारिक वंदना में बीच में तुलसी हनुमानजी की वंदना करते हैं। हनुमान की वंदना बीच में आती है। और मेरी दृष्टि में नितांत आवश्यक है हनुमंतवंदना, जो तुलसी ने की। राम और सीता की वंदना बाद में की। बीच में हनुमानजी की वंदना तुलसी ने की है।

मेरे भाई-बहन, हनुमान, ये कोई एक धर्म का देव नहीं है। हनुमंततत्त्व बिनसांप्रदायिक है। क्योंकि हनुमान पवनपुत्र है। और वायु सांप्रदायिक नहीं हो सकती। कोई लाख कोशिश करे उसको आप सांप्रदायिक नहीं कह सकते। इसलिए हनुमान पवनपुत्र है, प्राणतत्त्व है, वायुपुत्र है, मारुतनंदन है। इसलिए हनुमंततत्त्व सबका है। जिसको साधना करनी है, सामाजिक कार्य करना है, राष्ट्रीय कार्य करना है, आध्यात्मिक मार्ग में सफलता लेनी हो उसको हनुमंत का आश्रय करना चाहिए। क्योंकि इससे बल मिलता है। बल के साथ बुद्धि मिलती है। और बुद्धि के बाद विद्या प्राप्त होती है। क्योंकि आदमी को केवल बल मिले और बुद्धि न हो तो बल हिंसा कराएगा; विघटन कराएगा; अलगतावाद पैदा करेगा बल। इसलिए बल के साथ चाहिए बुद्धि जो सोचने को मजबूर करे। लेकिन केवल बुद्धि भी आखिर में बंधन में डालती है। इसलिए चाहिए विद्या। क्योंकि विद्या मुक्त करती है। 'हनुमानचालीसा' का हम सब पाठ करते हैं। वहां यही तो लिखा है-

बुद्धि हीन तनु जानिके, सुमिरौ पवन-कुमार।
बल बुद्धि बिद्या देहु मोहिं, हरहु कलेश बिकार।।

तो हनुमानजी है रामकथा का प्राणतत्त्व जिन्होंने 'रामचरित मानस' के पांच व्यक्तियों के प्राण बचाए हैं। तो तुलसी ने हनुमानजी की वंदना की। हनुमानजी का आश्रय करोगे तो आप जिस धर्म के होंगे उसी धर्म की ओर हनुमानजी आपको धक्का देंगे। तो किसी भी धर्म के आप अनुयायी क्यों न हो, जिद छोड़ो तो हनुमंततत्त्व अत्यंत आवश्यक है।

हमारे यहां एक गलत धारणा भी आ गई कि बहनलोग हनुमानजी को प्रणाम न कर सके। बहनलोग हनुमानजी की पूजा न कर सके। बहनलोग 'हनुमानचालीसा' का पाठ न कर सके। ये सब गलत धारणाएं हैं। कहीं कोई विशेष नियम हो तो उसको तोड़ना भी नहीं चाहिए। लेकिन मेरे देश की बहन-बेटियों को ये इनका अधिकार नहीं ऐसा क्यों? 'रामचरित मानस' ने सब द्वार खोल दिए हैं। आप जानते हैं, रावण पर विजय होने के बाद भगवान राम ने हनुमानजी को कहा कि हनुमान, तू अशोकवाटिका में जा और जानकी को कहो कि दुरित का नाश हो चुका है, अभी प्रभु का मिलन जल्दी आपको होगा। हनुमानजी जा रहे हैं अशोकवाटिका में, भगवान की आज्ञा लेकर। उसी समय गोस्वामीजी लिखते हैं लंका की राक्षसियां, राक्षसी स्त्रियां श्री हनुमानजी के चरण पकड़कर उसकी पूजा करती है। मेरा इतना ही कहना है कि यदि राक्षसियां को भी हनुमानजी की पूजा का अधिकार है तो मेरे देश की बहन-बेटियां को क्यों नहीं? ये हनुमंततत्त्व की छूट सबको होनी चाहिए। लेकिन कुछ न कुछ मना, डरपोक बना दिए हैं, भय बता दिए हैं! 'हनुमानचालीसा' आप कर सकते हैं। 'रामायण' का पाठ आप कर सकते हैं। तो हमारे यहां ये बात आई कि बहनलोग यज्ञ नहीं कर सकते। यज्ञ नहीं कर सकते, अधिकार नहीं, ऐसा नहीं। मेरी मान्यता ऐसी है कि बहनलोगों को यज्ञ करने की जरूरत ही नहीं। क्योंकि वो चूल्हे में इंधन डालकर रोटी पकाती है। गो ग्रास निकालती है, अतिथि को भोजन कराती है। बच्चों को और पति को पहले खिलाती है, बादमें खुद खाती है। जो चूल्हा जला करके रोटी पकती है उसको यज्ञ की जरूरत ही नहीं। वो रोज यज्ञ कर रही है। इसलिए हनुमंततत्त्व सबका है। तो हनुमानजी की वंदना 'मानस' में आई। 'विनयपत्रिका' के एक पद की एक-दो पंक्तियों का गायन करके हनुमंतवंदना पर आजकी कथा को हम विराम दे दें। गाईए-

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।
पवनतनय संतन-हितकारी।
हृदय बिराजत अवध-बिहारी।।

पहले सोपान 'बालकांड' में तुलसीदासजी संस्कृत में मंगलाचरण करते हैं। और सात मंत्र संस्कृत में लिखने के बाद तुरंत गोस्वामीजी देहाती भाषा में अपने सद्ग्रंथ को ऊतारते हैं। भगवान ब्रह्म को हम कहां पहुंचेंगे पाने के लिए? लेकिन ब्रह्म कौशल्या ने जैसा चाहा वैसा छोटा होता-होता कौशल्या की गोद में धरती पर आ गया। वैसे 'रामचरित मानस' भी एक अवतार है। सामान्य व्यक्ति की गोद तक ये रामकथा जा रही है लोकबोली में।

मानस-बिहारी - २

'रामचरित मानस' में कई प्रकार के विहार की कथाएं हैं

मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।
रूप रासि नृप अजिर बिहारी। नाचहिं निज प्रतिबिम्ब निहारी।।

बाप! जो दो पंक्तियों का आश्रय किया है, 'बालकांड' की ये दो पंक्ति। अर्थ करने की कोई जरूरत नहीं फिर भी जो भगवान मंगल के मंदिर हैं, मंगल के भवन हैं, अमंगल को हरनेवाले हैं, मिटानेवाले हैं ऐसे भगवान राम, परमात्मा राम, ईश्वर राम, ब्रह्म राम, सबकुछ राम। जो दशरथ के आंगन में विचरण करते हैं, विहार करते हैं, खेलते हैं, घूमते हैं, क्रीड़ा करते हैं वो मुझ पर द्रवीभूत हो। ऐसी एक मंगल प्रार्थना है इस पंक्ति में जो शिव की मानसिक स्तुति है। जो महादेव ने मन में इसे गुनगुनाया है। दूसरी पंक्ति फिर गोस्वामीजी 'उत्तरकांड' में भुशुंडि के द्वारा हमें वो पावन आंगन में लिए चलते हैं, दशरथजी के आंगन में जहां 'रूप रासि नृप अजिर बिहारी।' यहां 'दसरथ अजिर बिहारी' है। वहां 'नृप अजिर बिहारी' है। कुछ विशिष्टता है दोनों में।

तो जो रूप की राशि है, रूप समूह है, समस्त सौन्दर्य जिसमें समाहित है ऐसे भगवान राम बाल रूप में राजा के आंगन में विहार करते हैं, घूमते हैं, क्रीड़ा करते हैं, खेलते हैं। और महाराज दशरथजी के आंगन में मणि जड़ित फर्श है उसमें अपने प्रतिबिंब को देखकर भगवान राम नृत्य कर रहे हैं। 'रामचरितमानस' का पारायण करनेवाले भाई-बहन, रामकथा के प्रति अपार निष्ठा रखनेवाले भाई-बहन, भगवान ने कुछ महत्त्व के बिंदु पर अपने प्रतिबिंब को देखा है। वो कहां देखा है इसकी चर्चा भी पसंगोपात्त मैं आगे करूंगा लेकिन केवल संकेत करूं कि जनकपुर के विवाह मंडप में राम और जानकी जब भांवरी लेते हैं तब मणियों के खंभ में भगवान राम ने अपने प्रतिबिंब को देखा है। तब कई कामदेव, कई रतियां मानो इन मणि खंभ में घूम रहे हैं ऐसा प्रतीत हुआ है। दूसरा प्रतिबिंब, यहां राजा के आंगन में राम खुद का प्रतिबिंब बचपन में देखकर नृत्य कर रहे हैं। तीसरा प्रतिबिंब राम को देखने की इच्छा हुई कि मैं एक ओर प्रतिबिंब देखूं।

आज मेरे पास एक चिठ्ठी आई है कि बापू, आप फूलमाला क्यों नहीं पहनते? मैं फूल का अनादर नहीं कर रहा हूं। ये मेरी व्यक्तिगत एक मान्यता है। 'पत्रं पुष्पं फलं तोयं।' ये हमारे यहां की पद्धति है कि हम पुष्प अर्पण करते हैं। लेकिन

फूल बहुत नाजुक हैं साबह, बहुत कोमल हैं। फिर आप मुझे पहनायें। मैं जबरदस्ती न पहनूं। फूल पर इतना अत्याचार अच्छा नहीं है साहब! ये फूल की हिंसा है। स्वामी रामतीर्थ कहते थे कि भगवान को चढ़ाना है तो फूल क्यों तोड़ता है, पूरा पौधा ही चढ़ा दे न मानसिक रूप में। तो पूछा कि फूल न चढ़ाये तो क्या करें? तो आप ऐसा करो, आप कायम पीसफुल रहो ये सब से बड़ा फूल है। आप पीसफुल माइंड लेकर कथा में आये इससे तजोतरोजा फूल कौन हो सकता है? दूसरा फूल है, आप केरफुल रहे; सावधान रहे जीवन में। हर कदम उठाते समय 'रामायण' की पंक्तियों को याद रखें। हर चौपाई आपका कवच बन सकती है। हर चौपाई आपका मार्गदर्शक बन सकती है। मैं केवल अर्थवाद नहीं करता। कुछ अनुभूतियों के साथ आपके साथ अपनेआप को उडेल रहा हूं। ये 'मानस' है। हमें सावधान करता हैं। सावचेत रखता हैं। केरफुल रखता हैं। बहुत सावधान रहे आदमी। ये भी एक फूल है। आप तन-मन से ब्यूटीफुल रहे। क्योंकि सुन्दरता ये कोई गुनाह नहीं है। मेरे 'मानस' ने सौन्दर्य को बहुत सराहा।

सुन्दरता कहुँ सुन्दर करहिं।
छबि गृह दीपसिखा जनु बरहिं।।

मानव शरीर से सुन्दर हो। ये भी परमात्मा को अर्पण करने जैसा मानव जीवन, मानव शरीर एक बहुत बड़ा फूल है। लेकिन मैं साथ-साथ जोड़ता हूं, तन-मन दोनों जिसका सुन्दर हो, ये बहुत बड़ा फूल है। ये अर्पण करें परमात्मा की सेवा में, भगवत कार्य में, शुभ कार्यों में, मंगल कार्यों में। इस से सेवा हो, केवल भोग न हो। सौन्दर्य का एक जगत है। तुलसी मुग्ध है राम के सौन्दर्य पर भगवान राम की छवि देखकर 'रामचरितमानस' में। जनकपुर में जब राम दुल्हे की सवारी में निकले तो कितनी आंखें इनकी सुन्दरता देखने में डूब चुकी हैं! और भगवान राम भी सौन्दर्य प्रिय हैं। सीता के रूप में भगवान लुब्ध रहते हैं। मेरे गोस्वामीजी का 'विनय' का प्रसिद्ध पद है-

नव कंज लोचन कंज मुख कर कंज पद कंजारुणं।

आपके नेत्र सुन्दर हैं तो ये राम के नेत्र हैं। और तुलसी नेत्र को कंवल का फूल कहते हैं। प्रभु के रूप की महिमा है।

कंदर्प अगणित अमित छबि नवनील नीरद सुन्दरं।
पट पीत मानहु तडित रुचि शुचि नौमि जनक सुतावरं।।

तो व्यक्ति तन-मन से सुन्दर रहे। इस सौन्दर्य के लिए जगत है हमारे यहां। 'मानस' ने उसकी पूजा की है। फूल कई प्रकार के हैं। ये तो आपने छेड़ा और पूछा भी हैं इसलिए। और कुछ न करो तो हर दिन हर पल अप्रैल फूल रहो। अप्रैल में लोग विनोद करते हैं, आनंद करते हैं, मज़ाक करते हैं। रोज़ विनोद और आनंद में जीओ। ये भी एक फूल है। किसी को छलना नहीं; कनिंग मत बनना; लुच्चाई मत करना। किसी को गुमराह करके परेशान मत करना। लेकिन आनंद में रहना। शास्त्रकारों की आज्ञा है। आनंद हमारा स्वरूप है।

तो कई प्रकार के फूल होते हैं। फूल का ज्यादा बिगाड़ न हो। तो हम ऐसे फूल परमात्मा को पेश करें। कोई मेहमान आये, आप जरा मुस्कुरा करके, आप ऐसे सच्चे होठों को मुस्कुराहट दे करके उसका स्वागत करे तो कभी नहीं मुरझानेवाले फूल चढ़ा दिए आपने। सुन्दरता फूल है। और दूसरी बात ये भी कहकर आगे बढ़ूं कि फूल तोड़ने की मना है। याद रखना, फूल तोड़ने की मना है, फूल चुनने की मना नहीं है। चुनना और तोड़ना, बहुत फ़र्क हैं। तोड़ना हिंसा हैं, चुनना शृंगार है। प्रमाण 'मानस'-

एक बार चुनि कुसुम सुहाए। निज कर भूषन राम बनाए।।
सीतहि पहिराए प्रभु सादर। बैठे फटिक सिला पर सुंदर।।

'अरण्यकांड' में आप जानते हैं प्रसंग। भगवान राम ने एक बार फूल चुने हैं और आभूषण भी बनाए हैं। सीता को पहनाये हैं। क्योंकि चित्रकूट भगवान की विहार लीला की स्थली है। लेकिन मेरे दादाजी मुझे बताते थे बेटा, जानकी ने मना किया है। सीता ने कहा कि नहीं महाराज, आप मुझे फूल के गजरे, फूल की माला, फूल की बेनी, फूल के बाजूबंध, फूल की करधनी, फूल के पायल न पहनाएं। जानकी ने मना किया। मर्यादा तो कोई टूटती नहीं थी। लक्ष्मणजी तो कंदमूल, फल लेने के लिए बाहर गए हैं। राम-जानकी अपनी विहार स्थली में है। दादाजी बताते थे कि सीताजी ने मना किया। प्रभु बड़े प्रसन्न हैं। जानकीजी को उसको संवारना है। और मर्यादा नहीं, बिहार उसकी स्थली है ओलरेडी। करीब-करीब तेरह साल तक प्रभु ने वहां विहार किया। तो किशोरीजी को पूछते हैं ठाकुरजी कि देवी, मेरे मन में इतना भाव है, आप तो जानती हैं। आज मुझे मैंने गहने ओलरेडी बना लिए हैं फूल चुन के, मैं पहनाना चाहता हूं। तब जानकी ने कहा कि आप तो जानते हैं, मेरा शरीर दूसरे का स्पर्श सहन नहीं कर सकता। फूल भी पराया है। मेरे बदन पर राघव का स्पर्श हो। हां, मैंने कपड़ें, अलंकार पहने हैं लेकिन मेरे माँ-बाप ने मिथिला से

जो दिये वो पहने हैं। वो मेरे माँ-बाप के हैं। और मैं ससुराल में आई तो मेरे ससुरजी ने। जानकी ने कहा कि कभी अरुंधती माँ ने मुझे अलंकार दिए तो ये तो गुरुप्रसादी, गुरु पत्नी की प्रसादी। मेरा शरीर उसको ग्रहण कर सका क्योंकि ये गुरुप्रसाद था। वनवास के दौरान चित्रकूट की भूमि में भगवती अनसूया ने कुछ दिव्य वस्त्र, अलंकार मुझे दिए। वो मैंने शरीर पर धारण किए। लेकिन उसके सिवा प्रभु, मैं मेरे शरीर पर दूसरा सह नहीं सकती। बाकी हर इच्छा में इच्छा मिलानेवाली मैं कभी आपके अलंकारों का, पुष्प का इन्कार नहीं कर सकती। आपको अलंकार पहनाना ही है तो 'निजकर भूषन', आपके हाथ को मेरा अलंकार बनाओ। देखो, इसको कहते हैं मर्यादा का शृंगार। इसमें सबकुछ आ जाता है। अपने हाथ को आभूषण की तरह राम ने बनाये हैं, आश्लेष। और ज्यादा न कहूं। 'मानस' की पीठ है।

सीतहि पहिराए प्रभु सादर।

अपनी बाहों में; अपने आजानभुज का अलंकार जानकी को। सीता चाहती थी मेरा आभूषण मेरा भर्ता है। मेरा आभूषण आपके हाथ है। मेरे आभूषण आपके नेत्र है। मेरा आभूषण आपका विग्रह है। आपका छूना मेरा अलंकार है। कालिदास होता तो कुछ का कुछ कर देता! लेकिन ये तुलसीदास है। इतना फ़र्क है। और कालिदास ने कुछ का कुछ कर दिया इसीलिए उसको कुष्ट रोग हुआ। और तुलसी ने मर्यादा रखी इसलिए उसको इष्ट रोग हुआ। हरि का रोग हुआ। परमात्मा का रोग हुआ। कहां कुष्ट रोग, कहां इष्ट रोग! ये जानकी है साहब! ये शास्त्र बहुत रहस्यमय है साहब! हां, केवल भाषांतर करने से इसका पूरा मर्म हाथ में नहीं आता कोई गुरु के द्वारा भावांतर न हो तो।

बहुत बड़ा विहार का प्रसंग है। उसमें ज्यादा बोलने से डर लगता है कि कहीं दाग न लग जाए; कहीं मर्यादा भंग न हो जाए। बाकी साहब, जानकी के प्रति अपना भाव प्रदर्शित करने के लिए भगवान कोई भी अंग का चुनाव कर सकते थे। आंख के अंग का भी चुनाव कर सकते थे। आंखों से ऐसे देख लेते जानकी को कि उसको लगता कि मैं भर गई। अपने पैर जानकी के प्रति रखकर कहे कि जानकी, आप पैर दबा लो, छू लो तो इससे भी उसको तसल्ली हो सकती थी। भगवान राम मीठे बोल बोलकर भी जानकी को भर देते। लेकिन राम ने कौन से फूल चुने? 'निजकर भूषन।' राम ने हाथ के ही सुमन पसंद किये। हाथ को ही आभूषण बनाया। और 'सीतहि पहिराए प्रभु सादर।' सादर का अर्थ है स्नेहयुक्त; कोई कामयुक्त नहीं, भोगयुक्त नहीं, विकारयुक्त नहीं। केवल-केवल परिशुद्ध स्नेहयुक्त, श्रद्धायुक्त अपनी भुजाएं जानकीजी को पहना दी हैं। ऐसा अर्थ, तुलसी के जो रहस्य हैं इसको गुरुजन खोलते हैं। इसलिए किसी गुरु के पास बैठना। और जो आदमी को बैठना मिल गया उसके भाग्य की सराहना कौन कर सकता है साहब!

तो मेरे कहने का मतलब फूल तोड़ना हिंसा है। हाथ तोड़ना हिंसा है। हाथ मरोड़ना हिंसा है। आजानबाहु से जो हाथ विहार में जानकी के भूषण बने वो चुनना है, वो चुनाव है, वो पसंद है। युवान भाई-बहन, आप शृंगार में जीयो। 'मानस' छूट देता है। लेकिन एक बार 'रामचरित मानस' का शृंगार समझकर शृंगार में जीयो। शृंगार होते हुए फल देगा वैराग्य का। शृंगार सधेगा, परिणाम मिलेगा वैराग्य का। मैं आपको निमंत्रण देता हूं एक बार गिनती तो कर लीजिए मेरे राघव ने जानकी को 'मानस' में 'प्रिया' कितनी बार कहा। और जब भी प्रिया कहते हैं तब का शृंगार।

घन घमंड नभ गरजत घोरा।
प्रिया हीन डरपत मन मोरा।

और यहां तो जब सीता की बात चल रही है तो 'सुनहु प्रिया।' 'सीते' कह सकते थे, 'वैदेही' कह सकते हैं। लेकिन अंतरंग बात होती है तब कहते हैं, 'हे प्रिया।' तुलसी तुलसी है। एक तराजू में पूरे ब्रह्मांड रख दो और एक तराजू में 'रामचरित मानस' रख दो, ब्रह्मांड बेकार है साहब! इतना भारी शास्त्र है 'रामचरित मानस।' न कोई तोलनेवाला होगा न कोई कह सकेगा कि हमने उसको पा लिया।

तो भगवान का जो ये विहार है। ऐसे मंगल-मंगल भावों से हम धन्य हो जाते हैं। तो शृंगार भी 'मानस' का हो। तीन विशेषण दिए जानकी को। तीन संबोधन। 'सुनहु प्रिया।' पहले राम ने जानकी को कहा, हे प्रिया। 'व्रत रुचिर।' दूसरा विशेषण। तुम्हारा व्रत बहुत सुंदर है। जानकी रुचिरव्रता है। तीसरा 'सुसीला।' हे सुन्दर शीलसंपन्न मैथिली।

सुनहु प्रिया ब्रत रुचिर सुसीला।
मैं कछु करबि ललित नर लीला।।

कथा आरंभ करते हैं साहब! मंचन करने जैसा प्रसंग है। हे प्रिया, हे रुचिरव्रता, हे सुशीला, मुझे अब ललित नरलीला करनी है। अब मुझे दूसरे ढंग से विहार करना है। जानकीजी ने कहा, तेरह साल मुझे साथ रखा और आखिरी ललित नरलीला जब करनी है तब मुझे क्यों आप कहते हैं कि अग्नि में समा जाओ? मैंने आपको कोई बाधा पहुंचाई है ठाकुर? आपकी ललित नरलीला में मैं बाधा करूंगी क्या? और आप एक साल के लिए, दस महिने के लिए बिलग करेंगे तो प्रभु, ये बात मिथिला नहीं जाएगी? हां, मेरे माँ-बाप क्या सोचेंगे कि चौदहवीं साल में, आखिरी समय में जानकी को राम ने बिलग किया? खबर नहीं, लोग क्या-क्या बातें करेंगे! अयोध्या में बात जाएगी। माँ क्या सोचेगी? तो मुझे क्यों बिलग कर रहे हो? आपकी जो भी विहारलीला है उसमें मैं साथ हूं और आगे की संहारलीला है उसमें भी मैं साथ चलूंगी। आप क्यों मुझे बिलग कर रहे हो? कहा, देवी, ये तीन शब्द मैंने आपके संबोधन में प्रयुक्त किये तो आप ये रूप में होगी तब मैं किसी पर क्रोध नहीं कर पाऊंगा। अब मुझे क्रोध करना है। कभी किसीको प्रिया कहकर क्रोध किया जा सकता है? आज की बात छोड़ो! आपका 'प्रिया' संबोधन और आपका प्रिय चेहरा मैं देखूंगा तो मैं क्रोध नहीं कर पाऊंगा। तीन ही जगह है जहां ठाकुर ने क्रोध किया है। एक, कुंभकर्ण को मारने के लिए भगवान ने क्रोध किया। दूसरा राक्षस को मारने के लिए भगवान ने कोप को धारण किया। और तीसरा रावण के लिए। तो भगवान कहते हैं, आपको प्रिया कहूं तो मैं क्रोध नहीं कर सकता। मुझे मुस्कुराना ही पड़ता है। आपको रुचिरव्रता कहूं तो आपके इतने सुन्दर व्रत और मैं गुस्सा करूं ये मेरे से नहीं होगा। और तुम सुशील हो और मैं क्रोध करके दुशील हो जाऊं ये भी संभव नहीं। इसीलिए आप अग्नि में समा जाओ ताकि मैं अपनी लीला संपन्न कर सकूं।

तो बाप! भगवान राम 'नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी।' राजा के आंगन में राम अपना प्रतिबिंब निहार करके नाचते हैं। जनकराज के विवाह मंडप में भगवान जानकी दोनों का प्रतिबिंब रूप मणि खंभन में देखते हैं। और एक तीसरा प्रतिबिंब 'निज प्रतिबिंब राखि तहँ सीता।' क्योंकि सीता और राम एक हैं। 'गिरा अर्थ जल बिचि सम।' वहां भी प्रभु ही प्रतिबिंबित बने हैं। अथवा जानकी प्रतिबिंबित बनी है। ये तीसरी छाया है। जानकी छाया बन कर आई हैं। तो ये 'मानस-बिहारी' में भगवान कहां-कहां अपने प्रतिबिंब के साथ सुन्दर लीला कर रहे हैं?

तो 'मानस-बिहारी।' मेरी व्यासपीठ को गुरुकृपा से जो समझ है उसके मुताबिक 'मानस' में गगन विहार भी है। 'मानस' में भूमि विहार भी है। 'रामचरित मानस' में वाटिका विहार भी है। 'रामचरित मानस' में योग विहार भी है। 'रामचरित मानस' में वियोग विहार भी है। 'रामचरित मानस' में अनुराग विहार भी है। 'रामचरित मानस' में विराग विहार भी है। 'रामचरित मानस' में वन विहार भी है। 'रामचरित मानस' में भवन विहार भी है। व्यासपीठ को गुरुकृपा से जो समझ में आया है ऐसी बहुत बिहारी लीलाएं 'मानस' में है। जिसके आधार से हमारे जीवन का अंतरंग विकास और विश्राम को हम साध सकते हैं।

तो 'रामचरित मानस' में कई प्रकार के विहार की कथाएं है। कभी कोई योग में विहार कर रहा है। कभी कोई वियोग में विहार कर रहा है। दो व्यक्ति योग में विहार कर रहे हैं। एक दक्षकन्या सती। दूसरी भील कन्या शबरी, जिसने योगविहार किया है। ये योग विहारिणी है।

अस कही जोग अगिनि तनु जारा।
भयउ सकल मख हाहाकारा।।

योग में विहार कर रही है और ऐसी जगह पहुंची। जानकीजी की परीक्षा करने गई थी न सती? सीता तो अग्नि में समा गई थी। ये तो मायावी रूप लेकर रामजी ललित लीला कर रहे थे। भुशुंडि तो साफ़ कह देते हैं, 'पुनि माया सीता कर हरना।' माया सीता का अपहरण हुआ है। मूल जानकी तो अग्नि में है। लेकिन सती नहीं जान पायी थी। राम सीता के वियोग में ये ललित नरलीला चल रही थी, राम रो रहे थे। सती को शंका हो गई। शंकर ने लाख समझाया। भगवान राम ने भी सब कुछ दिखा दिया फिर भी सती के मन का वो भ्रम, वो संशय नहीं गया। आखिर में जब पता लगा कि जानकीजी तो सही में अग्नि में है। ये तो माया थी और मैं माया से भ्रमित हो गई। अब जानकी से कैसे माफ़ी मांगूं? तो जानकी जहां हो वहीं ही मुझे विहार करना होगा। और सीता अग्नि में है इसलिए 'अस कही जोग इगिन तनु जारा।' सती क्षमा मांगने के लिए सीता के पास विहार कर रही है। ये सती का अग्नि विहार। वैसे शबरी का भी योगाग्नि विहार है। तुलसी भी इसीको कुबूल करते हैं। 'जोग इगिन।' गोस्वामीजी 'उत्तरकांड' में भी इसका स्वीकार कर लेते हैं। तो शबरी और सीता महान पात्र दोनों। बहुत साम्य है, बहुत वैषम्य भी है।

सब बिधि भामिनि भवन भलाई।

जिस जानकी के लिए 'भामिनि' शब्द का प्रयोग किया वही शब्द शबरी के लिए भी गोस्वामीजी पसंद करते हैं। सती भी

विहारी हुई है, अग्नि की विहारी। शबरी भी योग विहारी हो गई। इन सभी पुण्यश्लोक पात्रों को, जो अजर-अमर पात्र हैं इनकी गाथाओं को गुरुकृपा से उठा-उठाकर हम 'मानस-बिहारी' का क्रमशः दर्शन करते जायेंगे।

कल हमने कथा के क्रम में श्री हनुमानजी महाराज की वंदना की थी। उसके बाद गोस्वामीजी ने भगवान के सखाओं का परिचय करवाया, वंदना की। आखिर में गोस्वामीजी ने सारभूत तत्त्व जो है, सर्वसार जिसको कहते हैं। हमारे यहां एक उपनिषद का नाम है 'सर्वसार उपनिषद।' जो सबका निचोड़ है। बहुत कम मंत्रोंवाला उपनिषद है ये। लेकिन है समस्त उपनिषदों का निचोड़। ये पूरा जो वंदना प्रकरण चल रहा है उसका सार वंदना है। 'जनक सुता जग जननि जानकी।' जनक कन्या, जनक पुत्री, जगत की माता और परमात्मा की अति प्रिया, करुनानिधान की प्रिया। गोस्वामीजी कहते हैं, मैं उनके चरणकमल की वंदना करके उससे विनय कर रहा हूं, मना रहा हूं। यद्यपि वो चरण रूठे नहीं है। हम रूठे से रहते हैं, हम विमुख हैं। वो तो सन्मुख ही है, फिर भी हमारी विमुखता के कारण हम उसको मना रहे हैं।

बुद्धि सब में है बाप! कोई बुद्धि बिना नहीं है। मात्रा में भेद होता है कम-ज्यादा; मंद बुद्धि, अति बुद्धि जो हो। लेकिन बुद्धि सबमें है। जैसे कल हम चर्चा कर रहे थे कि दृष्टि सबके पास है, दृष्टिकोण सबके पास नहीं है। ऐसे बुद्धि सबके पास है लेकिन सबकी बुद्धि निर्मल नहीं है। निर्मल बुद्धि करने के लिए जानकी के चरण को मनाना आवश्यक है। 'भगवद्गीता' ने एक दूसरी बात कही है कि बुद्धि को निर्मल करनी है तो एक फार्म्यूला है यज्ञ, दान और तप। इससे बुद्धिमानों की बुद्धि बार-बार पावन होती है, निर्मल होती है, पवित्र होती है। 'मानस' में जानकी के चरण मनाने से बुद्धि निर्मल होती है। 'भगवद्गीता' में यज्ञ, दान, तप, कर्म की बात आई। जानकी तत्त्वतः यज्ञ है। जानकी तत्त्वतः दान है। जानकी तत्त्वतः तपस्या की मूर्ति है। जानकी यज्ञ है। यज्ञ के कारण जानकी प्रगट हुई है। अकाल था जनक के राज्य में। पंडितों ने कहा कि यज्ञ करो। और यज्ञ के लिए भूमिशोधन करना था, हल चलाना था। मख के लिए मेदिनी। मेदिनी मानी पृथ्वी। ये मख और मेदिनी से कुछ धर्म में कुछ स्थान अपभ्रंश हो गए हैं। बाकी तत्त्वतः मूल में कोई मख है। कोई मेदिनी है। लेकिन कौन माने? और न माने, कौन उसको जबरदस्ती समझाए? तो कुछ बातें अपभ्रंश हुई हैं साहब! मूल में इस्लाम धर्म में कहते हैं हजरत नूह, हजरत मूसा, हजरत ईसा, हजरत मोहम्मद पैगम्बर साहब। पवित्र कुर्रान की आयातों से ऐसी बातें आती हैं। वहां एक शब्द आता है 'हजरत नूह।' लेकिन कौन कुबूल करे? उसको कैसे कहें? कोई न माने तो क्या करें? हज़रत नूह का अर्थ है स्वयंभू मनु। उसको कौन समझाए? और सत्य सत्य रहता है। 'स्वयंभू मनु अरु सतरूपा।' सब मेसेंजर है। सब पैगम्बर है। सब आदि सृष्टि के कर्ता हैं। कालांतर में सब बातें बदल जाती है! छोड़ो!

स्वयंभू मनु अरु सतरूपा। जिन्ह तें भै नर सृष्टि अनूपा।।

तो यज्ञ के लिए हल जोता था महाराज विदेहराज जनक ने। और जानकी निकली। मूल में तो यज्ञभाव है। सीता यज्ञ है। सीता दान है। महाराज ने अपनी बेटी का दान राघव को दिया। हिमालय ने दान दिया पार्वती का। और सीता तपस्या है; तप की मूर्ति है। कितना सहा भगवती ने! तो ये यज्ञरूपा है। जो दानरूपा है, जो तपरूपा है। तो ये जानकी है। यही ये तीनों है। तो पहले माँ जानकी की वंदना। उसके बाद, मन-वचन-कर्म से मैं भगवान राम की वंदना करता हूं। तो सीतारामजी की वंदना की। तत्त्वतः वो एक ही ब्रह्म के दो लीला पक्ष है। वो ही ब्रह्म सीता बनकर मिथिला में आया वो ही ब्रह्म राम बनकर अवध में आया। वो ही दो ब्रह्म एक बनकर के वनविहार करते हैं। वो ही ब्रह्म चित्रकूट विहार करते हैं। वो ही ब्रह्म जगत में विहार करते हुए जगत का पुनःस्थापन करते हैं। तो गोस्वामीजी ने इसलिए औपनिषदीय नियम का निर्वहन करते हुए जानकी और राम की वंदना की। उसके बाद नौ दोहे में पूर्णांक में रामनाम महाराज की महिमा गाई। तो सभी वंदना का सार गुरुकृपा से दृष्टि पवित्र होने से ब्राह्मणों से वंदना शुरू हुई। इन सभी वंदनाओं का सार सर्वस्व, सर्वसार ये सीताराम की वंदना। और उसका भी कोई सार है तो ये है हरिनाम, परमात्मा का नाम। रामनाम की महिमा रामनाम की वंदना मेरे गोस्वामीजी करते हैं।

तो विशद रूप में गोस्वामीजी ने नाम महिमा का वर्णन किया। रघुवर के कई नाम हैं। लेकिन इनमें जो रामनाम है उसकी मैं वंदना करता हूं। जो अग्नि, सूर्य और चंद्र का बीजक तत्त्व है, हेतु है। रामनाम स्वयं प्रणव रूप है। तो भगवान के नाम की महिमा यहां जो गाई गई। ये नामायन है। नाम का ये शास्त्र है। गोस्वामीजी ने बहुत विशाल अर्थ में हमको बताया है नाम की महिमा। भगवान राम ने त्रेतायुग में जो लीलाएं की। आज न तो त्रेतायुग है। कलियुग है। न तो हमारे सामने प्रत्यक्ष अवतार रूप भगवान राम है, न जानकी है। आज कलियुग में हम हैं तो हमारे लिए 'रामायण' कहां से लाये? तो तुलसी कहते हैं 'नामायण' की भी एक लीला है। त्रेतायुग में राम ने जो लीला की वही लीला कलियुग में और चारों जुग में नाम कर रहा है। फिर छोटे-छोटे प्रसंग गोस्वामीजी ने बता दिए कि राम ने ये किया, नाम ने ये किया। बहुत संगति बिठा करके तुलसी नाम की महिमा गाते हैं। ये स्वतंत्र प्रसंग है। मेरी व्यासपीठ को उस पर गाना बाकी है। लेकिन नाम महिमा गज़ब है। मेरी जो निष्ठा है वो मैं कहता रहता हूं कि हम गाते तो हैं, गाते रहेंगे, जनम-जनम गायेंगे, परमात्मा यदि मौका दे तो। लेकिन निष्ठा तो केवल, सार तो केवल रामनाम है। बाकी तो सब बोलना है साहब! बाकी आखिरी जो सारांश है, सार अंश जिसको कहते हैं वो तो प्रभु का नाम है। तो मेरे भाई-बहन, भगवान का नाम ग्रहण करें। जो रास आये। मेरा कोई आग्रह नहीं कि ये नाम लो। बाकी ये तो मैं बार-बार कहूंगा और दृढ़ता के साथ कहूंगा कि राम राम है। इसमें तो कोई सवाल ही नहीं। और मेरे कहने से नहीं होता; श्रुति भी गाती है रामनाम की महिमा। हर जगह नाम की महिमा है।

आज तो भगवान के संकीर्तन, एक ही नाम को रिपीट करने वैज्ञानिक संशोधन भी आखिर आ रहा है कि ऐसा करने से जिन लोगों ने स्मृति खो दी है उनकी स्मृति लौट आती है। वैज्ञानिक उपकरणों से सिद्ध होता जा रहा है। और जिस रूप में विज्ञान छलांग लगा रहा है। हमारे ये जो मूल्यवान सूत्र हैं उसको विज्ञान चरितार्थ कर देंगे कि परमात्मा के नाम से क्या होता है। कलिप्रभाव सब पर लागू हो गया है। केवल मानव पर नहीं, जलतत्त्व पर भी कलिप्रभाव है आज। पृथ्वी तत्त्व पर भी कलिप्रभाव आ गया। वायु तत्त्व पर भी कलिप्रभाव आ गया। आकाश तत्त्व पर भी कलिप्रभाव आ गया। अग्नि तत्त्व पर भी कलिप्रभाव आ गया। और पांचों के पुतले हम हैं। इसलिए हम पर भी कलि प्रभाव आया। कई उपाय हो सकते हैं कलि प्रभाव से मुक्त होने का। लेकिन एक बहुत बड़ा उपाय है और वो है हरिनाम। ऊर्ध्वबाहु हो करके उच्च स्वर से जिन्होंने हरि के नाम का गायन किया है। इनमें भी मूल नाम आदि-अनादि नाम जो राम है।

तो इन देहातों में रहनेवाले, किसानी करनेवाले, मज़दूरी करनेवाले कहां ध्यान करेंगे? कोई ध्यान करे तो प्रणाम करो। हम कहां बड़े-बड़े यज्ञ कर पायेंगे? हम कहां घंटों तक पूजा-पाठ कर पायेंगे? हमारे लिए तो एक ही उपाय है प्रभु का नाम। और जब अवसर मिले हरिनाम का उच्चारण करें। कलियुग में जो प्रभु का नाम गाएगा उसका ध्यान भी हो जाएगा, यज्ञ भी हो जाएगा, उसकी पूजा-पाठ-अर्चा भी हो जाएगी। और कलियुग में अंतःकरण की विशुद्धि होगी। नाम हरि से भी बड़ा है, श्रेष्ठ है। नामी से भी नाम बड़ा है। भाव, कुभाव, अनख, आलस कैसे भी। नाम जपो, दसों दिशाएं मंगल हो जाएगी, शुभ हो जाएगी। कुल मिलाकर हरिनाम की महिमा गोस्वामीजी ने बेहतर ढंग से बहत्तर पंक्तियों में गाई है। मुझे भी यही बात आपको कहनी है, योग करो, ध्यान करो, पूजा-पाठ करो, लेकिन कुछ यदि न हो तो हरिनाम काफ़ी है। प्रभु का नाम, लेकिन बिलकुल सरल है तो लोगों को ऐसा लगता है कि 'राम राम राम' कर रहे! कई पढ़े-लिखे लोग कहते कि 'राम राम राम' तोता रटन! ये तो वो जाने उसको पता लगे। जो कभी ले नहीं उसको क्या पता? हरिनाम का जिन्होंने स्वाद लिया, अनुभव किया है, शंकर ने अनुभव किया। विष विश्राम दे गया रामनाम की कृपा से। तो मेरे भाई-बहन, रामनाम की महिमा गज़ब है। जिस नाम में आपकी रुचि हो, निष्ठा हो। आप गुरु परंपरा के यदि आश्रित हैं तो आपके गुरु ने जो नाम दिया हो, जो मंत्र दिया हो उसमें निष्ठा रखकर लो। सब आखिर में रामनाम ही है। तो 'मानस'कार ने नाममहिमा का 'मानस' में बहुत गायन किया है।

'मानस' में गगन विहार भी है। 'मानस' में भूमि विहार भी है। 'रामचरित मानस' में वाटिका विहार भी है। 'रामचरित मानस' में योग विहार भी है। 'रामचरित मानस' में वियोग विहार भी है। 'रामचरित मानस' में अनुराग विहार भी है। 'रामचरित मानस' में विराग विहार भी है। 'रामचरित मानस' में वन विहार भी है। 'रामचरित मानस' में भवन विहार भी है। व्यासपीठ को गुरुकृपा से जो समझ में आया है ऐसी बहुत बिहारी लीलाएं 'मानस' में है। 'रामचरित मानस' में कई प्रकार के विहार की कथाएं है।

मानस–बिहारी – ३

राम है चित्रकूटविहारी, श्याम है वृंदावनविहारी और शिव है स्मशानविहारी

बाप! एक श्रोता ने पूछा है कि 'बापू, एक जिज्ञासा है, साधक की आध्यात्मिक यात्रा में श्रद्धा और विश्वास का क्रम क्या हो सकता है? साधक को प्रथमत: किस की उपलब्धि हो सकती है?' शायद कल किसी संदर्भ में या तो पहले दिन व्यासपीठ से कहा गया था कि आचार्यचरण का एक सूत्र है, 'आदौ श्रद्धा।' श्रद्धा को आदि माना है। और श्रद्धा और विश्वास तत्त्वत: अभिन्न है। यदि उसके तफ़ावत के बारे में कुछ जिज्ञासा है तो मैं इतना ही कहूंगा कि श्रद्धा से भगवत्प्राप्ति होती है, विश्वास से भक्ति की प्राप्ति होती है। दोनों जरूरी है। लेकिन श्रद्धा मौलिक हो। यद्यपि 'त्रिविधा भवति श्रद्धा।' भगवान योगेश्वर ने 'गीता' में कहा, ये तीन प्रकार की श्रद्धा होती है-राजसी, तामसी, सात्त्विकी। लेकिन गुणातीत श्रद्धा हो और पूर्ण विश्वास हो, किसी पर आधारित न हो। इसकी जीवन में बहुत जरूरत है।

हमारे देश में कई मनीषी लोग जो हुए हैं इनमें खास करके कृष्णमूर्ति वो 'विश्वास' शब्द को बिल्कुल अलग हटा देते हैं। विश्वास जब तक है, लोग गति नहीं कर पायेंगे, ऐसा आपका मंतव्य है। ओशो भी कई जगह आलोचना करते हैं। आपने व्यासपीठ को पूछा है और मैं कई बार मुखर हुआ हूं कि ये इन महान लोगों की मान्यता है। हमारी मान्यता है, विश्वास बहुत जरूरी है। एक बार मैं झूले पर बैठा था। रमणलाल बापा पाठक, वो आये तो मैंने आदर के साथ प्रणाम किया और झूले पर बिठाया कि आप बैठो। बैठे। उम्र भी आपकी; तो मैंने पूछा कि बापा, तबियत कैसी है? और मेरे सामने घटी घटना। उसने अपने दोनों हाथ उठाकर कहा, भगवान की कृपा। मैंने कहा, आपके मुख में भगवान कहां से टपक पड़ा? आप बिलकुल रेशनलिझम विचारधारा के आदमी हैं। क्योंकि अंततोगत्वा कहीं न कहीं विश्वास ही काम करता है। श्रद्धा ही काम करती है। और मैं अपने युवान भाई-बहनों को इतनी प्रार्थना जरूर करूं कि किसी लोगों को ज्यादा पढ़े-लिखे समझ करके उनके वक्तव्य को ऐसे ही सीधा मत पकड़ लेना कि विश्वास खोखला है। आजकल ऐसा बहुत होता है। हम रात को एक विश्वास के साथ सोते हैं कि सुबह जागेंगे। किसी के भरोसे पर किसी के विश्वास पर जीवन गति करता है। मेरी ये मान्यता है। इसीलिए मेरा ये जवाब है।

'बापू, कथा सत्संग भी सुनता हूं परंतु कामनाएं मिट नहीं रही है। पैंतीस वर्ष की उम्र है। क्या जीवन के अंत तक ऐसे ही चलेगा? आप कुछ कहे।' एक ही उपाय है, 'रामचरित मानस' ने बताया है कामना से मुक्त होने का। और बिलकुल सटीक, स्पष्ट, दो-टूक।

राम भजन बिनु मिटहिं कि कामा।
थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा।।

जिसका प्रभु का भजन ज्यादा बढ़ेगा। चिंता मत करो कामना मिटाने की। धीरे-धीरे कम होती जाएगी। भजन बढ़ना चाहिए। हम कामना मिटाने की चिंता में बहुत उम्र गुज़ार देते हैं! आपने पैंतीस साल निकाल दिए। भजन बढ़ना चाहिए। जिसका भजन बढ़ा है उसको कामना कामना नहीं दिखती। भजन बढ़ना चाहिए। तो कामनाएं धीरे-धीरे कम होंगी। और भजन के लिए फिर कामना रहे भी तो चिंता मत करो। 'अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।' ये 'गीता' का इतना टुकड़ा सीने में लिखकर रखो। भगवान कृष्ण ने कहा कि कामनाग्रस्त दुराचारी से दुराचारी व्यक्ति क्यों न हो लेकिन किसी की शरण में रहकर अनन्यभाव से वो भजता है तो साधु भी उसको सम्मति देते हैं कि वो परमात्मा को पा सकता है। ऐसा सूत्र कहीं नहीं मिलेगा मेरे भाई-बहन। तो भजन बढ़ना चाहिए, जितना हम कर सकें।

'बापू, ध्यान और तप में क्या अंतर है?' न हमको ध्यान आता है न हम कोई तप करते हैं। क्या जवाब दूं? लेकिन इतना कहूं, ध्यान आंतरिक अवस्था का नाम है। तप बहिर् दिखता है। तपस्वी को बाहर से आप पहचान पाओगे। ध्यानी को पहचानना मुश्किल है। अंतरंग अवस्था का नाम ध्यान है। मैं तीन शब्द ओर आपके सामने रखना चाहूंगा-उपासना, साधना और आराधना। उसको समानार्थी भी समझ सकते हैं। लेकिन हमारे यहां जब बिलग-बिलग शब्द आते हैं तो शास्त्रों में तो इसका अर्थ बदल जाता है। उपासना कहते हैं किसी के पास चुपचाप बैठना; निकट बैठना। आराधना का एक अर्थ होता है पुकार; गुजरात में जो संतवाणी है, भजन गाए जाते हैं इसमें एक 'आराध' प्रकार है। आराध गाते हैं। उसको आराधना कहते हैं। उपासना कहते हैं निकट बैठने। उपासना का पता लग जाएगा कि आदमी किस के पास बैठा है? आदमी का संग किसका है? आराधना तो एक प्रकार का पुकार है। उसका भी पता लग जाता है। साधना का किसी को पता नहीं लगता। साधक का कोई गणवेश नहीं होता। और मेरी व्यासपीठ की व्याख्या तो यही है, मैं साधक उसको मानता हूं जो जीवन में किसी को भी बाधक न बने उसी का नाम साधक है। न माता-पिता को बाधक बने; न बीबी-बच्चों को बाधक बने; न पडौसी को बाधक बने; राज्य-राष्ट्र किसी को भी बाधक न बने। कल्याणकारी धर्म में सावधान रहना उसीका नाम साधक है। 'सा' मानी सावधान। 'ध' मानी धर्म। 'क' मानी कल्याण। धर्म में सावधान रहना। लेकिन कौन से धर्म में? तथाकथित धर्मों में? जो कल्याणकारी हो ऐसे धर्म में सावधान रहना वो साधक है। और साधक जो साधना करता है उसको परखना। कई महापुरुष आप देखोगे, उसकी साधना का पता ही नहीं लगेगा कि आदमी करता क्या है? हमारे साथ रहे तो लगे कि हम जैसा है। बहुत गहराई से चिंतन करे तो लगे कि नहीं, नहीं, नहीं! बड़ी दूर नगरी है। उसकी साधना समझना मुश्किल है।

तो ध्यान है अंतरंग अवस्था। और तप है बहिर्। क्योंकि आदमी तप करता है, तेज बढ़ता है। तप से शरीर कमजोर भी होता है। तप दिखता है। कभी-कभी तो तप दिखाने की इच्छा भी होती है। तपस्या हमारे पास कुछ है उसको प्रदर्शित करने की हम जैसे मायावी जीवों में एक चाह रहती है। तप तो कितना बड़ा शास्त्रीय शब्द है? 'रामचरित मानस' में तो तप की महिमा का वर्णन करते हुए गोस्वामीजी ने लिखा-

तपबल रचइ प्रपंचु बिधाता।
तपबल बिष्नु सकल जग त्राता।।
तपबल संभु करहिं संघारा।
तपबल सेषु धरइ महिभारा।।

तप की बड़ी महिमा है। लेकिन तप जो भी करेगा, लाख छिपाये तो भी तप छिपा नहीं रहता। तप छिपता नहीं। तो तप और ध्यान के बारे में मुझे इतना ही कहना है।

''बापू, लक्ष्मणरेखा के अनुसार रेखा लांघने के बाद जल जाना था तो माँ सीता पार करने के बाद क्यों नहीं जली?'' तो नहीं जली तो अच्छा हुआ। आप चिंता क्यों करते हैं? माँ जले ये किसको अच्छा लगे? जानकी नहीं जलती क्योंकि ये वो जानकी है। अग्नि अग्नि को जला नहीं सकता। ये नियम है। और जानकी कौन है?

तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा।
जौं लगि करौं निसाचर नासा।।

रेखा जानकी नांघ सकती है। जानकी पर कोई पाबंदी नहीं है। ये 'उद्भवस्थितिसंहारकारिणिम्' है। ये पराम्बा है। परमात्मा की आह्लादिनी शक्ति है। उसको कोई बांध नहीं सकता। लेकिन बहिर् आदमी अंदर नहीं आ सकता। और जानकी स्वयं अग्नि में है। अग्नि से फिर प्रगट होगी। भगवान राम ने पंचवटी में जब सीताजी को कहा कि आप अग्नि में समा जाओ। मुझे अब ललित नरलीला करनी है। लेकिन

मुझे चिंता ये हो रही है कि आप अति सुकोमल है। आपको मैं अग्नि में समाविष्ट करने की इच्छा करता हूं। लेकिन चिंता भी है कि आपका शरीर अग्नि को सह पाएगा? मेरी आज्ञा का अनादर तो आप नहीं करोगी, मुझे खबर है। आप आर्य नारी है, आप जनककिशोरी है। कहा, महाराज, मैं अग्नि में समा जाऊंगी। और मुझे अग्नि कुछ कर नहीं पाएगा। जला नहीं पाएगा। कैसे? तो जानकीजी भगवान से बात करती हैं और पूछती हैं कि इस दुनिया में सबसे ठंडी चीज कौन है? शास्त्र गुरुमुख से ग्रहण करना पड़ता है वर्ना केवल भाषांतर मिलेगा। अंतरंग अवस्था का बोध नहीं होगा। इसलिए आदेश है शास्त्रों का कि व्यक्ति को गुरु के पास समिधपाणि जाना पड़ता है। कोई पहुंचे हुए फकीरों के पास जाना होता है। राजेश रेड्डी का शे'र है-

काफ़ी नहीं फ़कीरी में दुनिया को छोड़ना।
कुछ आपका मिजाज़ भी रुहानी होना चाहिए।

तो ये बात चली, शीतल से शीतल चीज़ कौन-सी? शीतल केवल एक तत्त्व है और वो है जल। उसमें भी जो नदियों में बहता जल है वो ज्यादा शीतल है। और मुझे कहने दो कि नदियों में भी गंगा का जल सबसे शीतल है। मैं आपको पूछुं कि गंगा निकली कहां से? 'मानस' में लिखा है-

नख निर्गता मुनि बंदिता त्रय लोक पावन सुरसरी।

भगवान के नख से निकली है, चरण से निकली है। तो मूल उसका जो उद्गमस्थान है वो भगवान के चरणारविंद से है। जानकी ने भगवान से कहा, प्रभु, शीतल से शीतल गंगा और वो गंगा आपके चरणों से निकली है तो आपके चरण कितने ठंडे होंगे? मैं उसी चरण को लेकर अग्नि में जाऊंगी। आपके चरणों को लेकर मैं अग्नि में बैठुंगी। कौन अग्नि मुझे जला पाएगा? क्योंकि इतना शैत्य है आपके चरणों का जहां से स्वयं गंगा निकली है। प्रभु बहुत प्रसन्न हुए। तो जानकी स्वयं अग्नि में समाविष्ट है। लक्ष्मण रेखा उसको अग्नि को अग्नि नहीं जला सकती। जैसे मैं कल कह रहा था कि शबरी और सती योग अग्नि में विहार कर गई। जानकी वियोग अग्नि में विहार करती हैं। आप 'सुन्दरकांड' सुचारु रूप से करते हैं। जानकीजी कितने लोगों से अग्नि मांग रही हैं? सबसे अग्नि की मांग कर रही है भिक्षुक बनके। सबसे पहले तो त्रिजटा से कहती हैं, हे माँ, मेरी विपत्ति की संगिनी तू है। कहीं से अग्नि ला और मुझे तू अग्नि दे। त्रिजटा ने कह दिया, रात्रि में राजकुमारी यहां अग्नि नहीं मिल सकती। तो जानकी की दृष्टि गई विधाता की ओर। तो जानकी जली नहीं। लक्ष्मणरेखा क्या जला पाएगी उसको? जानकीजी ने भगवान को कहा कि आप मुझे अग्नि में समाने के लिए कहते हैं तो एक काम करो, आपका नाम भी तो अग्नि है। 'जासु नाम पावक अध तूला।' आपका नाम ही तो अग्नि है तो मुझे आज्ञा करो, मैं आपके नाम में समा जाऊं। और परमात्मा विभूति योग में तो ये भी बोले कि पावक मैं हूं। जानकी कहीं और अग्नि में नहीं समाई। साक्षात् भगवान राम जो अग्निरूप है उसी में ही समाई है। बिलग हो ही नहीं सकती। संभव ही नहीं है।

आईए, हम विषय को पकड़ें, 'मानस-बिहारी।' तुलसीदासजी ने भी 'रामचरित मानस' में एक बार 'बिहार' शब्द लिख दिया है।

हर गिरिजा बिहार नित नयऊ।

वहां 'बिहार' शब्द है। और बिहार उसको कहते हैं जो रोज नया हो। और बिहार को ये करके दिखाना चाहिए। 'बालकांड' में नौ यज्ञ है। सबसे पहला यज्ञ 'बालकांड' में-

सृंगी रिषिहि बसिष्ठ बोलावा।
पुत्रकाम सुभ जग्य करावा।।

पहला यज्ञ था पुत्र कामेष्टि यज्ञ जिसके कारण जगत को राम प्राप्त हुए। मैं रामकथा को ज्ञानयज्ञ कहता ही नहीं। 'ग्यान के पंथ कृपाण के धारा।' तुलसी ने कह दिया। इसीलिए हम तो प्रेमयज्ञ कहते हैं। उसके बाद दूसरा यज्ञ आता है भगवान राम विश्वामित्र के संग यात्रा करते हैं तो ताडकादि आसुरी वृत्तियां का जो निर्वाण करते हैं। प्रभु ने दूसरा यज्ञ 'बालकांड' में किया उसका नाम है निर्वाणयज्ञ।

एकहिं बान प्रान हरि लीन्हा।
दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा।

उसको मेरी व्यासपीठ निर्वाणयज्ञ कहना चाहती है। तीसरा यज्ञ है 'रामचरित मानस' में विश्वामित्र का जपयज्ञ।

जहँ जप जग्य जोग मुनि करहीं।
अति मारीच सुबाहुहि डरहीं।।

विश्वामित्र का अनुष्ठान यज्ञ कह लो अथवा तो जपयज्ञ कह लो। ये तीसरा यज्ञ है। ये सब गुरुमुखी बातें है। चौथा यज्ञ 'बालकांड' में है उसका नाम है धैर्ययज्ञ।

गौतम नारि श्राप बस उपल देह धरि धीर।

ये अहल्या का जो यज्ञ है वो धैर्ययज्ञ है। पांचवां यज्ञ है 'बालकांड' में सौन्दर्ययज्ञ। भगवान राम जनकपुर पहुंचे। भगवान राम अपनी सुंदरता से पूरी जनकपुरी को मोहित करते हैं। जनकपुरी छोड़ो यार! लेकिन जनक महाराज जो विदेह है-

सहज बिरागरूप मनु मोरा।
थकित होत जिमि चंद चकोरा।

सुंदरता का यज्ञ जनकपुरी में। और छठ्ठा यज्ञ है 'मानस' में प्रणययज्ञ। जो राम और जानकी का प्रणय पुष्पवाटिका में जो है। मर्यादा से सभर, शील से सभर, जो शृंगार है पुष्पवाटिका का। ये प्रणययज्ञ है। प्रेमयज्ञ कह लो। सातवां यज्ञ है-

धनुषजग्य सुनि रघुकुल नाथा।
हरषि चले मुनिबर के साथा।।

जनकराज का धनुषयज्ञ सातवां यज्ञ है। आठवां यज्ञ है-

समर जग्य जग कोटि कीन्हा।

परशुराम का युद्धयज्ञ, समरयज्ञ। और नौंवां यज्ञ है विवाहयज्ञ। जो विवाहमंडप में चारों कुंअर और चारों कन्याओं का विवाह संपन्न हुआ। उसको व्यासपीठ विवाहयज्ञ कहती है। तो 'मानस' में क्या नहीं है? मैं युवान भाई-बहन को प्रार्थना करूं कि अपनी झोली में छोटा-सा 'रामचरित मानस' का गुटका रखो। आपको बहुत बल मिलेगा साहब!

तो बाप! जानकीजी विराहाग्नि में विचरण कर गई; विहार कर गई। तो कई प्रकार के विहार हम 'मानस' में खोज सकते हैं।

मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।
रूप रासि नृप अजिर बिहारी। नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी।।

तो तुलसीजी कहते हैं कि दशरथजी के आंगन में कौन विहारी बनके विहार कर रहा है? बोले, मंगल भवन। और दूसरा राम के बारे में शब्द है 'अमंगल हारी।' तो भगवान किन-किन मंगल का भवन है? जो इस पंक्ति में बिहारी विचरण कर रहे हैं, क्रीड़ा कर रहे हैं, खेल रहे हैं। अपने निज प्रतिबिंब को देख कर नाचते हैं। जैसे कोई अपने को देख के नाचे और दर्पण में भी खुद को नाचते देखे। जो 'भागवत' का भाव है। 'ब्रह्म लटकां करे ब्रह्म पासे।' जितनी-जितनी मंगल वस्तु 'मानस' में हैं उसके राघव भवन हैं। और वो भवन मंगल का भवन जो राम हैं वो दशरथजी के आंगन में विहार कर रहे हैं, क्रीड़ा कर रहे हैं, खेल रहे हैं।

मंगलं भगवान विष्णु मंगलं गरुडध्वजः।
मंगलं पुण्डरीकाक्ष मंगलायतनो हरि।

कहां से शुरू करूं? किन-किन मंगल के भवन है राम? एक तो राम की कथा मंगल है।

मंगल करनि कलिमल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की।
गति कूर कबिता सरित की ज्यों सरित पावन पाथ की।

एक तो कथा मंगल है। दूसरा राम का नाम मंगल है।

मंगल भवन अमंगल हारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी।।

तो नाम मंगल है।

कल्यान काज बिबाह मंगल सर्बदा सुखु पावहीं।

शिव-पार्वती के विवाह की कथा मंगल है। इन सब मंगलताओं से सभर है राघवेंद्र। 'मंगलायातनो हरि।' तो जितनी-जितनी मंगल वस्तु है वो विहार कर रहा है। और विहार मंगल करता है लेकिन साथ-साथ दूसरा काम भी करता है। अमंगल को हरता जाता है। उसका विहार निकृष्ट को हटाते हुए विहार है। भगवान ऐसे मंगलरूप है कि जो अमंगल को नष्ट कर दें। हमारे यहां जल को भी मंगल कहा है। राम जल रूप है। अन्न मंगल का प्रतीक है। राम अन्नरूप है। 'अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्।' राम ब्रह्म हैं, राम अन्न हैं। कई लोग कहते हैं कथा में खिलाना क्या? नहीं, नहीं, ये प्रसाद है। प्रसाद का कोई मूल्य नहीं होता। प्रसाद बांटा जाता है, बेचा नहीं जाता। तो जगत में जितनी-जितनी मंगल चीजें हैं। फूल को मंगल कहा है। और छोड़ो, ये जो पीछे बैठा है, 'मंगल मूरति मारुत नंदन।' ये मंगलमूर्ति है।

तो भगवान दशरथ के आंगन के बिहारी हैं। ये मंगलभवन हैं लेकिन अमंगल को हटाते हैं। महिमा वहां है कि अमंगल हटे। अमंगल-दुरित का नाश हो, ये नष्ट हो। तो ऐसे मंगलभवन अमंगल हारी दशरथजी के अजिर के बिहारी हैं। और 'रूप रासि नृप अजिर बिहारी।' भगवान राम के बारे में तुलसी ने कहा, ये रूपराशि हैं, रूप की खान हैं, समूह हैं। राम जैसा रूप कहां? और भगवान राम जब बालक बने होंगे तब रूपराशि की सीमा ही नहीं साहब! ऐसी रूपराशि दशरथजी के आंगन में खेल रही। और क्या अद्भुत लीला की विचरण करते हुए! 'नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी।' आदमी को खुद को देखकर खुद को दाद देनी चाहिए। भगवान राम खुद को देखकर नर्तन करते हैं, नाच रहे हैं। इसका मेरी समझ में तात्त्विक संदेश है कि आदमी खुद पर अहोभाव प्रगट करे। दूसरों को जरूर सराहो जहां शुभ है। तो भगवान राम को हम चित्रकूटविहारी कहते हैं। तो राम हैं चित्रकूटविहारी। और घनश्याम यानी श्याम है वृंदावनविहारी। शिव है स्मशानविहारी। शिव कहां

विचरण करते हैं? गन्धर्वराज कहता है-

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचरा-
श्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटीपरिकरः।
अमङ्गल्यं शीलं: तव भवतु नामैवमखिलं
तथापि स्मर्तृणां वरद परमं मङ्गलमसि।।

तो भगवान शिव स्मशान विहारी हैं। स्मशान में उसकी क्रीड़ा है। वृंदावन विहारी की वृंदावन में क्रीड़ा है। राघव की चित्रकूट में क्रीड़ास्थली मानी गई है। लेकिन सबसे ज्यादा कठिन विचरण है शिव का जब सती यज्ञकुंड में जल गई तब भगवान शिव सतत विहार करते रहते हैं, विचरते रहते हैं। कभी संतों के पास बैठ जाते हैं, कभी कथा सुनते हैं, कभी गाते हैं। लेकिन भगवान शंकर सतत विचरण में रहे। शिव का विचरण गजब है! अवतार लीला में तो परमात्मा का विचरण अथवा तो उसका विहार, ये अवतार लीला पूरी होते ही पूरा। लेकिन शिव का विचरण, ये तो अजन्मा है। उसकी लीला की तो कोई समाप्ति नहीं। कई रूप में शंकर का विचरण और सबसे बड़ी बात स्मशान में विहार करना बहुत कठिन है। एक महादेव है फ़कीरी लेकर घूमता रहता है, घूमता रहता है। कितना विहार शंकर का साहब! भगवान विवाह लीला में जाए तो शंकर उस लीला को देखने के लिए नंदी पर सवार हो कर आते हैं। और भगवान जब युद्ध के मैदान में संहारलीला करते हो तब भी भगवान शंकर। और आखिर में जब राज्यलीला शुरू करते हैं तब 'जय राम रमा रमणं समनं' कहते भगवान प्रगट होते हैं। तो शंकर का विहार निर्वाणदायक है। शिव इसलिए घूमते हैं। जो भी मिल जाए उसको निर्वाण देने के लिए विचरण त्रिभुवन में करते हैं शिव।

भगवान शिव स्मशानविहारी है। और दूसरा विहार शिव का, शिव भोगविहारी भी है और योगविहारी भी है। शिव जुगपद निर्वाह करते हैं। 'हर गिरिजा विहार नित नयऊ।' और तुलसी तो तुलसी है न! सीधी मर्यादा से काम लेते हैं। कालिदास की बात और है। शंकर-पार्वती का नितनूतन विहार इसमें जगतभर का शृंगार आ गया। स्मशान में विहार करना, वो वैराग्य विहार है। और शादी के बाद विहार करना वो राग विहार है। शिव दोनों में चलते हैं। उसी शंकर का वानर रूप हनुमान है। इसीलिए तुलसी हनुमानजी को वैराग्य का घनीभूत स्वरूप मानते हैं। तो बाप! शिव का विहार दोनों जगह है, शृंगार में भी, वैराग में भी। यही तो पूर्णता है। इसलिए बड़ी प्रसन्नता होती है कि भर्तृहरि ने दोनों शतक लिखे। 'शृंगार शतक' भी लिखा और 'वैराग्य शतक' भी लिखा।

तो, मूल तो दशरथ अजिर बिहारी केन्द्र में है। वृंदावन बिहारी भी अतिथि के रूप में आयेंगे कथा में। लेकिन आज मैं ये स्मशान बिहारी को जान बूझकर ले आया हूं। क्योंकि आज मुझे संक्षेप में आपके सामने थोड़ा शिवचरित्र पेश करना है कथा के क्रम में ताकि कल भौमवासर है, हम रामजन्म की कथा गा सके। क्योंकि श्रद्धा और विश्वास जब तक दंपती नहीं बनते, शादी नहीं कर लेते ये दोनों तत्त्व तब तक ईश्वर प्रगट ही नहीं होता। राम को प्रगट करने के लिए श्रद्धा और विश्वास जरूरी है।

तो बाप! थोड़ा शिवचरित्र का गायन कर लें कथा के क्रम में। नाम महिमा की चर्चा कल हुई। संक्षेप में आगे बढ़े तो उसके बाद गोस्वामीजी ने रामकथा के अनादि सर्जक की बात की। इस सद्ग्रंथ की रचना भगवान महेश ने की और अपने हृदय में रखी कि जब कोई योग्य मिलेगा तो उसके सामने मैं उसको खोलूंगा। और 'मानस'कार कहते हैं कि योग्य समय पाने पर शिवा के सामने शिव ने ये कथा का गायन किया। उसी 'रामचरित मानस' की कथा शिव से भुशुंडि को मिली। कैलास से सीधी नीलगिरि पर्वत पर कथा गाई। और वो ही कथा याज्ञवल्क्य को संगमी स्थान पर तीरथराज प्रयाग में आई जो भरद्वाजजी के प्रति गाई गई। उसी कथा 'मानस'कार कहते हैं, मैंने बचपन में सूकरखेत में मेरे गुरु से सुनी। वराहक्षेत्र में मैंने गुरुजी से ये कथा सुनी। लेकिन उस समय मेरा बचपना था इसलिए मैं इस कथा को पूर्णरूपेण आत्मसात् न कर सका। लेकिन गुरु बड़े कृपालु कि गुरु ने बार-बार कथा सुनाई। और गोस्वामीजी कहते हैं, मैंने गांठ बांध ली, संकल्प कर लिया, मैं उसको भाषाबद्ध करूंगा। शास्त्र में आदि, मध्य-अवसान की महिमा है। जो बात आदि में कही जाये वो मध्य में कहनी पड़ती है। उपसंहार में भी यही बात का प्रतिपादन करना पड़ता है। ये शास्त्र का नियम है। तो गोस्वामीजी तीन बार संकल्प छोड़ते हैं भाषाबद्ध का। ये बहुत रहस्यमयी शास्त्र है। वो शमीम जयपुरीसाहब का शे'र है न कि-

उलझनों में खुद उलझकर रह गए वो बदनसीब।
जो तेरी उलझी हुई झुल्फों को सुलझाने गए।।

तो कथा बार-बार सुननी पड़ेगी। गुरु ने बार-बार सुनाई। भाषाबद्ध करने का संकल्प कर लिया तुलसीजी ने। और 'रामचरित मानस' की रचना हुई। और उसके चार घाट बनाए। एक ज्ञानघाट बनाया जहां शिव पार्वती को कथा कहते हैं। दूसरा उपासनाघाट बनाया जहां बाबा भुशुंडि गरुड को कथा सुनाते हैं। तीसरा कर्म का घाट बनाया जहां बाबा याज्ञवल्क्यजी भरद्वाजजी को कथा सुनाते हैं। और चौथा घाट संतों से सुना शरणागति का, प्रपत्ति का, दैन्य का घाट जहां स्वयं तुलसी अपने मन को उद्बोधन कर रहे हैं। ये दीनता का घाट है। तो चार घाट बनाए 'मानस'सर का। सुन्दर रूपक बनाया। ये चलता-फिरता मानसरोवर है। ये जंगम मानसरोवर है। गोस्वामीजी अपनी दीनता के घाट से कथा का आरंभ करते हैं और हमको लिए चलते हैं कर्म के घाट पर।

गोस्वामीजी कहते हैं, तीरथराज प्रयाग में कल्पवास के लिए महात्मा, देवता, असुर सबलोग इकठ्ठे हुए। प्रतिवर्ष कुंभ लगता है। सब कल्पवास के लिए तीरथराज प्रयाग में आते हैं। एक बार कल्पवास पूरा हुआ। सब बिदा होने लगे। आखिर में परमविवेकी याज्ञवल्क्य महाराज ने विदा मांगी तब भरद्वाजजी ने चरण पकड़कर याज्ञवल्क्य महाराज को रोक लिया, महाराज, मेरे मन में एक संशय है। संशय जीवन में ना आये तो बहुत अच्छा। लेकिन आ भी जाये तो संशय का आना इतना बुरा नहीं है जितना संशय को अनधिकारी के सामने व्यक्त करना। अपने संशय को योग्य व्यक्ति के सामने पेश करना चाहिए। योग्य व्यक्ति के सामने, जहां-तहां नहीं। तुम्हारी बात को जो समझे। तो मर्मज्ञ की महिमा है। तो पूछना किसको? क्राइसिस है यदि तो ये है कि किसके पास बैठकर हमारे दिल की बात करे? तो महाराज, मैं बहुत बड़ा कुंभ कर चुका हूं लेकिन बहुत बड़ा संशय है मेरे मन में। आपके चरणों में रखता हूं। क्या संशय है? ये रामतत्त्व है क्या? जो संत, पुराण, उपनिषद गाए। स्वयं शिव जपे। सुंदर जिज्ञासा की। सुनते ही याज्ञवल्क्यबाबा मुस्कुराए। इसका मतलब ये कि प्रश्न अच्छा लगा। चेहरा प्रसन्न हुआ। और इस शब्द को पकड़कर मैं कहता रहता हूं कि भगवान का चरित्र जिसको गाना है, उसको मुस्कुराते रहना चाहिए। मेरे राम का तो ये नियम था साहब, किसी से भी बात कहे तो शब्द बाद में निकलते थे पहले तो मुस्कुराहट निकलती थी। मैं फिर एक बार कहूं, धर्म हंसता हुआ होना चाहिए। भगवान कृष्ण की मुस्कुराहट के लिए त्रिभुवन विमोहित स्मित कहा गया है। ईश्वर रसरूप है साहब! धर्म रस से भरा होना चाहिए। रसमय धर्म। जिस पेड़ का मूल-जड़ सूखा हो जाए, पेड़ गिर जाता है। मूल रसमय होना चाहिए। बुद्धपुरुष रसिक होता है। 'रसो वै सः।' का आशिक होता है।

मुस्कुराकर के याज्ञवल्क्य बोले कि भरद्वाजजी, मैं प्रसन्न हूं आपके प्रश्न से। लेकिन ये भी मुझे कहने दो कि आपको राम की प्रभुता का पूरा परिचय है। आप राम को तत्त्वतः जानते हैं। लेकिन मेरे से राम के गूढ़ रहस्य सुनना चाहते हैं इसलिए मूढ़ की तरह आपने पूछा ये आपकी चतुराई है। और आप जैसा श्रोता यदि मुझे मिल जाए तो आपको रामकथा सुनाऊंगा। प्रसन्न वक्ता हो और प्रपन्न श्रोता हो। ये दोनों का मेल हो जाए। वक्ता प्रसन्न होना चाहिए। जिस वक्ता को खुद को रस न आये वो क्या रस की सृष्टि करेगा? सीधी बात है। और श्रोता प्रपन्न कि नहीं, जो बातें आयेगी वो हमारे कल्याण की होगी। हम चुन लेंगे उसमें से। तो याज्ञवल्क्य प्रसन्नता व्यक्त करते हैं और कहते हैं महाराज, आपने मुझे राम के बारे में पूछा लेकिन रामतत्त्व की चर्चा से पहले मैं आपको शिवचरित्र सुनाऊं। पूछी रामकथा, याज्ञवल्क्य ने गाई पहले शिवकथा। क्यों? यही तो सेतुबंध था शैवों और वैष्णवों को जोड़ने का। कथा वैष्णवी, राम की। लेकिन उद्घाटन, प्रवेशद्वार शिवकथा। राममंदिर के निजगृह में पहुंचने के लिए शिव है द्वार। तो शिवकथा है द्वार रामगर्भगृह का। रामतत्त्व को अंतरंग रूप से जानने के लिए शिवतत्त्व आवश्यक है। रामेश्वर भगवान की स्थापना के समय स्वयं रामजी खुद बोले हैं-

संकर प्रिय मम द्रोही सिव द्रोही मम दास।
ते नर करहिं कलप भरि घोर नरक महुं बास।।

'मानस' सेतुबंध का शास्त्र है। ये जोड़ता है, समन्वय करता है। और भगवान याज्ञवल्क्य भरद्वाजजी को शिवचरित्र की कथा सुनाते हैं।

भगवान राम को हम चित्रकूटविहारी कहते हैं। तो राम हैं चित्रकूटविहारी। और घनश्याम यानी श्याम है वृंदावनविहारी। शिव है स्मशानविहारी। भगवान शिव स्मशानविहारी हैं। स्मशान में उसकी क्रीड़ा है। वृंदावनविहारी की वृंदावन में क्रीड़ा है। राघव की चित्रकूट में क्रीड़ास्थली मानी गई है। लेकिन सबसे ज्यादा कठिन विचरण है शिव का जब सती यज्ञकुंड में जल गई तब भगवान शिव सतत विहार करते रहते हैं, विचरते रहते हैं। कभी संतों के पास बैठ जाते हैं, कभी कथा सुनते हैं, कभी गाते हैं। कई रूप में शंकर का विचरण और सबसे बड़ी बात स्मशान में विहार करना बहुत कठिन है।

मानस-बिहारी - ४

कथा में जीव, जगत और जगदीश तीनों की चर्चा होती है

'मानस-बिहारी', उस कथा की कुछ संवाद के रूप में एक बातचीत हो रही है। कथा के कई रूप है। कथा का एक रूप है जिसमें जीव, जगत और जगदीश तीनों की चर्चा होती हो। तीन में से एक को यदि छोड़ दिया जाय तो ये अध्यात्म-त्रिकोण खंडित हो जाता है। एक अर्थ में कथा का वो भी भाव है कि जिसमें जीव की चर्चा हो; जगत की भी चर्चा हो और जगदीश की भी चर्चा हो। तीनों की चर्चा कथा में होती है। जीव है आधिभौतिक। जैसे हम मानव है, जीवात्मा है ये आधिभौतिक है। ये पूरा जगत यद्यपि भौतिक दिखता है लेकिन आधिदैविक है। रूपों को हमने देव समझा है। इसलिए तो हम सूर्य को भगवान कहते हैं। चंद्र को मामा कहते हैं। पृथ्वी को माता कहते हैं। सबको देवरूप में हमने देखा है। तो ये जगत है आधिदैविक। और जगदीश यानी परमात्मा है आध्यात्मिक। और मैं यहां से इस बिंदु से इसलिए शुरू कर रहा हूं कि ये तीनों कहीं न कहीं विहार कर रहे हैं। तीनों की विहारस्थली बिलग-बिलग है। इन तीनों का विहार यदि समझ में आ जाय तो हमारा सत्संग सफल हो जाय। जीव क्या है? कहां से आया? ये पहले कहां विहार करता था? अब कहां विहार कर रहा है? 'पुनरपि जननं पुनरपि मरणं' की एक शृंखला लगी है। उसमें भविष्य में कहां विहार करेगा उसकी चर्चा जिसमें हो उसको सत्संग कहते हैं। केवल भगवत् चर्चा ही सत्संग नहीं है। भगवान में सब कुछ आ जाता है इसलिए जगत की चर्चा भी जरूरी है।

मैं सोचता हूं कि 'नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी।' का मतलब क्या है? इस रूप की राशि भगवान राम महाराज दशरथजी के, राजा के आंगन में विहार करते हैं। और अपना प्रतिबिंब देख करके भगवान नृत्य करते हैं। क्या मतलब है? भगवान का प्रतिबिंब माने क्या? हमारा प्रतिबिंब तो हम देख पाते हैं। थोड़ी समझ आ जाय, थोड़ा ज्ञान का उजाला आ

जाय तो हमारे प्रतिबिंब का हमें खयाल आने लगता है। क्योंकि प्रतिबिंब यानी छाया उजाले में ही मिलती है, अंधेरे में नहीं मिलती। 'प्रतिबिंब' विज्ञान का शब्द है। जहां प्रतिबिंब न देखे तो अज्ञान की भूमिका है। भगवान अपने प्रतिबिंब को देख करके नृत्य करते हैं। भगवान को ऐसा मूड क्यों आ गया कि वो नाच रहा है। क्या है? भगवान कोई केवल नर्तक है क्या? क्या वो दशरथ के आंगन में नाचने के लिए आया है? क्यों ऐसी लीला कर रहा है?

एक, भगवान राम धरती पर दशरथजी के आंगन में नंगे पैर घूम रहे हैं। और दशरथजी का जो आंगन, जो धरती है इतनी, जो टुकड़ा है भूमि का उसमें फ़र्श पे मणि के वो लगे हुए हैं। और भगवान उसीमें अपना प्रतिबिंब देखते हैं। मणि में देखते हैं। मणि भूमि पर जड़े हुए हैं। इसका अंततोगत्वा अर्थ ये हो गया कि भगवान भूमि में अपना प्रतिबिंब देख रहे हैं। और प्रतिबिंब के आगे शब्द है 'निज।' मेरी समझ में इस पृथ्वी की सबसे बड़ी भेंट यदि विश्व को है तो ये है माँ जानकी। ये पृथ्वी ने जानकी को जनम न दिया होता तो शायद ये पृथ्वी विहार करने योग्य न होती। कई विनाशक तत्त्वों ने इस पृथ्वी को मिटाने की कोशिश की है धर्म के नाम पर, राज के नाम पर, सामाजिक स्तर पर। फिर भी ये पृथ्वी अभी भी है माँ जानकी के कारण। पहले माँ अपने गर्भ में बालक को बचाती है। फ़िर बड़ा करती है। बचपन से लेकर उसको पोषती है, पालती है। फिर वो बालक का कर्तव्य है वो अपनी माँ को बचाये। जानकी है पुत्री। पृथ्वी है माँ। और उसकी सुरक्षा जानकी करती है। और जानकी के लिए तुलसीदासजी ने यही शब्द प्रयोग किया 'मानस' में-

निज प्रतिबिंब राखि तहँ सीता।
तैसइ सील रूप सुबिनीता।।

जानकी के लिए भी शब्द आया 'निज प्रतिबिंब।' इस पर से मेरी व्यासपीठ गुरुकृपा से कहना चाहती है कि भगवान राम धरती पर नाचते हैं। मणि जड़ें हुए हैं और उसमें निज प्रतिबिंब ओर कोई नहीं, जानकी को देखकर नृत्य करते हैं। ये निज प्रतिबिंब है जानकी। इसको देखकर वो नृत्य कर रहे हैं। जानकी आह्लादिनी शक्ति है; पराम्बा है; आदि शक्ति है; महामाया है। यद्यपि विद्या है। उसको देखकर प्रभु नृत्य कर रहे हैं दशरथ के आंगन के विहारी।

दूसरा, परमात्मा का प्रतिबिंब ये जगत है। ये पूरा जगत परमात्मा की छबि है। मैं मेरे युवान भाई-बहनों को कहना चाहूंगा। सभी श्रोता मेरे युवान है। सबको कहना चाहता हूं कि ईश्वर स्वयं अपना प्रतिबिंब ये जगत जो है उसको देखकर नाचता है। तो आप जगत को देखकर रोते क्यों है? नाचो। ये जगत एन्जोय करने जैसा है। पृथ्वी देखकर नाचो। जल प्रवाह देखकर नाचो। आसमां देखकर नाचो। सूर्य-चंद्र के तेज देखकर नाचो। सदियों से-शताब्दियों से हमारे मन में कुछ ऐसी लगत धारणा तथाकथित लोगों ने डाल दी हैं इसलिए हम जगत को मिथ्या कहते हैं। जगद्गुरु ने मिथ्या कहा। मिथ्या का मतलब नाशवंत है, अवश्य। जगत में जो भी है ये नाशवंत है। लेकिन यदि जो शाश्वत है परमात्मा, अपनी कृति को देखकर नाचता है तो इसी जगत में हम जीव के नाते क्यों रो रहे हैं? क्यों ऊब रहे हैं? क्यों हम नृत्य नहीं कर सकते? केवल शारीरिक प्रक्रिया के बारे में नहीं बोल रहा हूं। शिवसूत्र है, 'आत्मा नर्तकः।' जो शाश्वत है उसको सत्य कहते हैं। जो नाशवंत है उसको मिथ्या कहते हैं। तो ये जगत मिथ्या का मतलब नाशवंत इतना ही करना। बेकार ऐसा मत करना। रहेगा नाम। रहेगा राम। तो इस दुनिया को आनंद से देखना चाहिए। जीव की इतनी निंदा क्यों? नहीं, जीव ईश्वर का अंश है। वो भी एक विहारी है। गोस्वामीजी तो स्वयं सराहना करते हुए कहते हैं-

ईस्वर अंस जीव अविनासी।
चेतन अमल सहज सुखरासी।।

जीव को सुखराशि कहा है। अब दुःख की व्यवस्था नहीं होनी चाहिए। तथागत बुद्ध ने जरूर कहा कि इस दुनिया में दुःख हैं। दुःख के कारण हैं। दुःख के उपाय हैं। दुःखों से मुक्ति हैं। भगवान ने उस समय की स्थिति देखकर अपने अनुभव से कहा होगा। बुद्ध को दंडवत् करके मैं कहता हूं, कई बार बोला हूं कि मेरी व्यासपीठ बुद्ध को नमन करके कहना चाहती है कि जगत में सुख भी है। सुख के उपाय भी है। सुख के कारण भी है। और एक न एक दिन 'न सौख्यं न दुःखं।' सुख से निवृत्ति भी है। क्यों पोझिटिव नहीं लेते? बुद्ध नाराज नहीं होंगे। सुख-दुःख सापेक्ष है। मैंने ईगो नष्ट कर दिया, वो एक नई बीमारी 'मैं' की आएगी! क्या करोगे? एक आदमी ने कृष्णमूर्ति से पूछा कि मुझ में एक

बहुत बड़ी आदत है। इस आदत से बचना है, क्या करूं? कृष्णमूर्ति ने कहा, एक तो तेरी आदत बुरी है और फिर इस आदत को मिटाने की तेरी आदत बुरी है। क्यों संघर्ष कर रहा है? करेगा वो। शरण हो जा। अहंकार से पूर्णतया निवृत्ति बहुत मुश्किल है। कम से कम सत्संग करके सम्यक् बनाया जाय। तुलसी ने सम्यक् बनाया। इसलिए कहा-

अस अभिमान जाइ जनि भोरे।
मैं सेवक रघुपति पति मोरे।।

मेरे में से ऐसा अभिमान कभी न जाये। तुलसी ने नहीं कहा कि ये छूट जाये। सम्यक् कर दिया कि ऐसा अभिमान बना रहे कि मैं सत्य का उपासक। मैं प्रेम का उपासक। मैं करुणा का उपासक। मैं राम का दास। मैं कृष्ण का किंकर। ये जरूरी है। मन जरूरी है। बुद्धि जरूरी है। चित्त जरूरी है। अहंकार भी जरूरी है। हम जीव हैं। हम जंतु हैं। ये सब नष्ट हो जाय, समाप्त हो जाय; ये व्याख्या में है, बहुतों की अनुभूति में नहीं है।

हम परमात्मा के प्रतिबिंब को एन्जोय नहीं कर पा रहे हैं। जो स्वयं नाच रहा है ठाकुर और हम लोग उससे ऊबे जा रहे हैं! उसको इस रूप में देखें। ये सीताराममय है। ये आनंद करने जैसा है। नाशवंत जरूर है। तुलसीदासजी ने इन सभी तत्त्वों को समेटा हुआ है। मैं ऐसे ही 'रामायण' की बड़ाई नहीं करता। और मेरे बड़ाई करने से 'रामायण' महान हो नहीं सकती। ये स्वत: महान है। तो ये पूरा भगवत से भरा जगत। कथा उसको कहते हैं जिसमें जीव की भी चर्चा हो, जगत की भी चर्चा हो और जगदीश की भी। ये तीनों भिन्न नहीं हैं। ये आध्यात्मिक त्रिकोण है। क्या हम न कह सके कि जगत में सुख है; सुख का उपाय है। 'संत मिलन सम जग सुख नाहीं।' साधु को मिलो, सुख का उपाय है। सुख का कारण है। कोई सत्संग का आयोजन करो, सुखमय वातावरण प्रगट होगा। आखिर में या तो सुख और दु:ख को सम करना पड़ता है या तो दोनों से निर्मुक्त होना पड़ता है। सुख से मुक्ति भी है। शे'र सुनिएगा-

याद इतनी शिद्दत से आई है कि यूं लगा वो खुद आया है।
आंसूओं तुम जरा अलग रहना उसने तन्हा मुझे बुलाया है।
- राज कौशिक

इसलिए मैं नाम कोई नहीं दे पाता क्योंकि रिश्ता ही तुमने ऐसा बनाया है। नाम देना है तो हरि पर छोड़ो कि वो कहे। तुम प्रस्ताव रख दो। सुख हमें अनुभव हो रहा है तो क्या करे? तुझ में रब दिखता है। और पृथ्वी आनंद देती है। तो हमारा कर्तव्य है, उसकी सुरक्षा करें। जो हमें प्रेम दे उससे प्रेम करो। जल बचाओ। सेव वोटर। पृथ्वी बचाओ। ये पूरा रब है। पूरा हरिरूप है। जगत में सुख है। और मेरे कहने की बात ज्यादा टिकाऊ न भी हो। तुलसी ने कहा है-

संत मिलन सम सुख जग नाहिं।

और दुनिया कभी संत और साधु से रिक्त नहीं हुई है। यदि रिक्त हो जाए तो दुनिया न रहे। कोई न कोई तो होता है जिसके संग से हमें सुख मिलता है। करो साधु संग। सुख है। क्योंकि हम जीव स्वयं सुखराशि है। और हमारा जीवात्मा सुख की समूह है। वैज्ञानिक जगत की चर्चा करते हैं और ठीक संवेदना रूप में वैज्ञानिक जब विश्व के तत्त्वों की चर्चा करता है तब मुझे लगता है, वैज्ञानिक कथा कह रहा है। वैज्ञानिक सत्संग करा रहा है। बहुत विशाल है सत्संग।

रूपरासि नृप अजिर बिहारी।
नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी।।

भगवान अपने प्रतिबिंब को देखकर नाचते हैं इसका मतलब अपना जगत, अपनी बनायी हुई कृति को देखकर प्रभु नृत्य करते हैं। इसी जगत में हम हैं। तो क्यों उसको आनंद से न लें? तो सुख है। सुखस्वरूप परमात्मा हमारे हृदय में बैठा है। कुछ किया जाये कि सुख प्रगट हो। 'रामचरित मानस' में शिव-पार्वती के विवाह के बाद कार्तिकेय का जन्म हुआ। तुलसीदासजी ने कार्तिकेय को पुरुषार्थ कहा है।

जगु जान षन्मुख जन्मु कर्मु प्रतापु पुरुषारथु महा।
तेहि हेतु मैं वृषकेतु सुत कर चरित संछेपहिं कहा।।
यह उमा संभु बिबाहु जे नर नारि कहहिं जे गावहीं।
कल्यान काज बिबाह मंगल सर्बदा सुखु पावहीं।।

क्यों सुख का आशीर्वाद दिया यहां? 'सुखु पावहीं', इसका मतलब सुख का उपाय है। गाओ 'रामायण।' सटे हुए दु:ख-सुख से विवेक से सुख को बिलग करना पड़ेगा। आदमी हंसवृत्ति से उसको बिलग करे। सत्संग से लब्ध विवेक से उसको बिलग कर दिया जाय। हम सुख के अधिकारी है। एक समय हमारे देश में आया; ऋषिमुनियों के बाद उपनिषदों के बाद एक ऐसा काल आया जिसमें सब लोग जगत छोड़कर भागे। दुनिया को इससे बहुत फ़ायदा नहीं हुआ जितना औपनिषदीय ऋषियों से पाया। सब ऋषि गृहस्थ थे। वो जगत से भागे नहीं थे। जगत में रहते हुए जागते रहते थे।

वेश तो लीधो वैरागनो देश रही गयो दूर।

तो मेरे भाई-बहन, कारण है यहां सुख के। उपाय हैं। सुख मिलता है। और साधना करते-करते तत्त्वत: आखिर में सभी से मुक्ति है। ये भी व्यवस्था है। तो पोज़िटिव दृष्टिकोण में लिया जाय। इसी रूप में मैं प्रारंभ कर रहा हूं कि जीव की भी चर्चा हो। जगत की भी चर्चा हो और जगदीश की भी चर्चा हो। उसी को कहते हैं कथा। जगदीश-परमात्मा स्वयं आध्यात्मिक तत्त्व हैं। पूर्ण ब्रह्म। लेकिन ये तीनों त्रिकोण में जुड़े हुए हैं। ऐसी है रामकथा। ऐसी है कृष्णकथा। ऐसी है शिवकथा। ऐसी है कोई भी शुभकथा, शुभ वार्ता। ये मंगलमय है। तो-

द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।

हमारे जीवन में सुख विहार करने के लिए तैयार है। तुलसी कहते हैं, सुख को विहार करने दो। और तुलसी ने क्या कहा?

पुलक बाटिका बाग बन सुख सुबिहंग बिहारु।

सुन्दर पक्षी सुख है। तुलसी 'बालकांड' के आरंभ में कथा की चर्चा करते हैं तब सुख को 'सुबिहंग' कहा। और बिहंग घोंसले में अंडे में पैदा होता है। लेकिन सीमा से बाहर आते ही पूरा आसमां उसका हो जाता है। सुख ऐसा सुबिहंग है। और दो पंख है सुख रूपी बिहंग की। वो ही विहार करता है। तुलसीदासजी तो कथा को केन्द्र में रखकर ये बात कह रहे हैं। इसलिए मैंने जीव-जगत और जगदीश की बात को कथा से जोड़ा। भगवान की कथा कैसी है? तुलसी कहते हैं, 'पुलक बाटिका बाग बन।' बाटिका, बाग और बन तुलसीदासजी ने तीन शब्द का 'मानस' में बार-बार प्रयोग किया है। अशोक को वन भी कहा। अशोक को वाटिका भी कहा। अशोक को बाग भी कह दिया। कथा में सुख विहार करता है सुबिहंग के रूप में।

कथा सुनते-सुनते तीन जगह पर आपको रोमांच हो तो समझना, सुखरूपी सुन्दर पक्षी तुम्हारे भीतर विहार करने को राजी हो चुका है। तीन शब्द है। 'बाटिका' पहला। 'बाग' दूसरा। 'बन' तीसरा। गोस्वामीजी ने 'नभबाटिका' शब्द प्रयोग किया है। आकाश; आकाश का अर्थ मैं ये करूं जो ऊपर है। ऊपर मस्तक है। कथा सुनते-सुनते मस्तिष्क में जितने अंग है। कान में मानो शहद घोल दिया जाय। आंखों में नीर आने लगे। मस्तिष्क में कुछ तरोताज़गी लगे, अंदर से कुछ दिमाग में बहुत अच्छा लगना। टेन्सन मात्र चला जाय। ये वाटिका का पुलक भाव है। मस्तिष्क तरोताज़ा हो जाय। कथा हम जैसे जीवों को फ्रेश करती है। हमको नहलाती है कथा। हमारा शृंगार करती है कथा। हमें सुशोभित करती है कथा। बाग कहते हैं हृदय को। हृदय जब प्रफुल्लित हो कथा सुनते-सुनते। हृदय द्रवीभूत होने लगे। हृदय जब झुमने लगे। कथा में ये होता है। मैं तो ये निरंतर महसूस करता हूं साहब! मन मानी पैर के तले से लेकर ऊपर की ताल तक रोम-रोम जब पुलकित हो जाय तब समझना 'सुख सुबिहंग बिहारु।' ये सबकी दशा होती है। ये होता है। हम उसको ठीक से पहचानते नहीं। तो आप दस मिनट सुनो, प्रसन्न चित्त से सुनो। मैं तुम्हारे पर काम कर रहा हूं साहब! जी तोड़कर काम कर रहा हूं। ये मेरी कथा एक प्रयोग है कि कुछ फलित हो कि कुछ परिणाम हो। ये पिटी पिटाई बात नहीं है, वाहवाह करने के लिए नहीं है। मैं आपको बहुत निकट रखना चाहता हूं। मैं आपको दूर जाने नहीं देता। आप मेरे निकट रहे। धर्म सबको निकट लाये। बशीर बद्र का शे'र है कि-

फ़ैंसला एक लम्हें में तय हो जाता।
दिल मिला लेते अगर हाथ मिलानेवाले।

उपनिषद का अर्थ ही है निकट बैठना। तो बाप! कथा को कथा के रूप में पीयो। प्रसन्नचित्त से पीयो। कोई सूत्र आपको मिल जाएगा और उसको आप पकड़ लेंगे, गांठ बांध लेंगे तो ये आपकी पूंजी, ये आपकी सम्पदा हो जाएगी। आप आनंदित होंगे। तो कथा में ये पुलकित भाव आता है। मस्तिष्क तरोताज़ा रहता है। हृदय बाग-बाग हो जाता है। और पूरा पैर के तलों से लेकर सिर तक एक रोमांच। पुलक मानी रोमांच कथा में होता है। तो बाग में तो पक्षी होते हैं। बन में भी चिड़ियां होती है। बाटिका में भी पक्षी होते हैं। जैसे पुष्पवाटिका में पक्षी 'चातक कोकिल कीर।' तो इस रोमांच भरे वातावरण में पक्षी कौन है? 'सुख सुबिहंग बिहारु।' सुन्दर पक्षी है, सुख है। जो विहार करता है। सुखरूपी पक्षी विहार करता रहता है। सुख का विहार क्या? सुख अपने घोंसले में बंदी न हो जाये। सुख अपने एक पेड़ की शाखा पर ही न बैठा रहे।

सुख उड़ान भरे। मेरे प्यारे श्रावक भाई-बहन, आपको परमात्मा की कथा से सुखरूपी सुविहंग की प्राप्ति हो। उसको विहार कराओ। कैद मत करो। मुझे जो मिला, मैं दूसरे को दूं। एक-दूसरे में बांटो। गुजराती में एक गज़ल है। शायर का नाम है मरीज़। मरीज़साहब को गुजराती गज़ल का गालिब माना गया है। वो परमात्मा से प्रार्थना करते हैं हाथ फैलाकर; हे परवरदिगार, तू मुझे इतनी समझ दे कि मुझे जब सुख मिले तब मुझे अपने आपका ही विचार न आये, सबका विचार आये। मेरा सुख सुबिहंग बिहार करे।

बस एटली समझ मने परवरदिगार दे।

सुख ज्यारे ज्यां मळे त्यां बधाना विचार दे।

और भाव तो उपनिषद ही का है। तू भोग मगर बांटकर भोग। तो सुखरूपी पक्षी उड़ना चाहिए। अपने घोंसले में न बैठ जाये। सुख बांटो। सुख सुबिहंग की पंखे मत काटो। उसको पिंजड़े का पंछी मत बनाओ। उसको आसमां का परिंदा बनाओ। ये विहार है। मुझे अच्छा लगता है। तुलसी कितना-कितना अर्थ लिए लिख देते हैं!

मैं सुबह की मेरी पूजा में बैठा था। एक गुलाब का फूल जो थोड़ा कलि जैसा था। थोड़ा खिला था, ज्यादा नहीं। तो मैंने मेरे हनुमानजी को चढ़ाया। फिर मेरा पाठ आदि जो पूरा हो गया। फिर मैं चुपचाप जरा लेटा। तो मेरी निगाह इस फूल पर रही। और मैंने देखा कि जैसे-जैसे सूरज का ताप निकला। खिड़कियां तो बंद थी लेकिन उजाला ज्यादा होने लगा तो मैंने देखा। लेकिन इतनी सूक्ष्म प्रक्रिया को मैं पकड़ नहीं पाया। मैंने सोचा कि मैं थोड़ी देर ऐसे ही लेटा रहूं। मैंने आधे घंटे के बाद फिर आंख खोलकर देखा तो फूल पूरा खिल गया था! कथा में कलियां खिलती है। उस गज़ल का आखिरी शे'र-

दुनियामां कंइक नो हुं करजदार छुं मरीज़।

चुकवुं बधांनुं देण जो अल्लाह उधार दे।।

तो सुख मिले तो बांटो। धन के कई दोष गिनाये हैं। एक तो धन स्वयं दोष है। अर्थ स्वयं अनर्थ है। भागवतकार तो उसमें पंद्रह अनर्थ देखते हैं। इसका मतलब ये नहीं कि हम धन छोड़ दे। धन चाहिए; सदुपयोग करे। धन स्वयं दोष है। फिर धनवान होने का अभिमान दूसरा दोष है। तीसरा मुझे अभी ओर मिले ये धन की तृष्णा तीसरा दोष है। तो बाप! सुखरूपी पक्षी को मुक्त रखो। विहार करने दो, सुख सबको मिले। आसमां में उड़ने दो।

माली सुमन सनेह जल सींचत लोचन चारु।

माली कौन है रामकथा का? रामकथा की बाटिका-बन-बाग क्या है? ये तीन जगह की पुलकावली। रामकथा का सुख क्या है? सुबिहंग सुख है। सुविहंग सुख है लेकिन विहार करता हुआ। जो बार-बार बल दे कर बोल रहा हूं; बांटता हुआ; अपनेआप को विस्तरित करता हुआ विहारी सुख हो। कथा का माली कौन है? माली सुमन। व्यक्ति का सुन्दर मन ही माली है। अपना सुन्दर मन। मन को सुधारने के लिए अपने गुरु की चरणरज। इससे मन निर्मल होता है। किसी बुद्धपुरुष की चरणरज। किसी बुद्धपुरुष का आचरणयुक्त संदेश। उसको रजमात्र कुबूल करना ये चरणरज है।

तो माली है रामकथा का 'सुमन।' पवित्र मन माली है। माली का काम है पौधे को सींचना। जो बाग, बन, बाटिका है; बिहंग विचरण कर रहे हैं। इसी बाटिका, बन और बाग को, पौधे को, वृक्ष को सींचना माली का काम है। तो पवित्र मन से सींचते रहते हैं। 'रामचरित मानस' में कुल बारह बार 'बिहार' शब्द का प्रयोग आया है। इसमें 'बिहार' भी है, 'बिहारी' भी है, 'बिहारु' भी है, 'बिहारिनी' भी है। फिर तुलसी साहित्य में तो कई बार है।

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु।

तुलसी सुभग सनेह बन सीय रघुबीर बिहारु।।

जैसे बांके बिहारी है वृंदावन में। जैसे अयोध्या में अजिर बिहारी है। वैसे हमारे में सीता-राम विहार करें ऐसी हमारी चाह। दशरथ का आंगन कितना दिव्य बन गया राम के विहार से? बांके बिहारी के विहार से वृंदावन कितना महान हो गया? परम स्मशान काशी में विहरने से काशी की महानता कितनी ऊंचाई पकड़ ली? शिवविहार; कैलास का विहार। हमारे हृदय में सीता-राम विहार करे इसके उपाय तुलसी ने बताये हैं। चित्रकूट के मुख्य-मुख्य केन्द्रबिंदु पकड़ें। एक तो चित्रकूट में मंदाकिनी है। चित्रकूट कामदगिरि है; सुन्दर वन है चित्रकूट के इर्द-गिर्द में कामदवन है पूरा। ये तीन वस्तु यदि हमारे जीवन में आ जाए तो अकेले राम नहीं, राम और जानकी; राम जिसका प्रतिबिंब फर्श में देखते हैं ये दोनों सीय-रघुबीर हमारे हृदय में विहार करने लगे। 'रामकथा मंदाकिनी।' हमारे जीवन में रामकथा मंदाकिनी बन कर बहती है। कथारूपी मंदाकिनी का हम सेवन करें। भगवान की कथा सुने-गाएं। तो ये मंदाकिनी है। और दूसरा सूत्र, 'चित्रकूट चित चारु।' हमारा चित्त इतना सुन्दर रहे, अचल रहे, विक्षेप मुक्त हो। वो ही अचल चित्त को चित्रकूट कहा। सुन्दर चित्रकूट। हमारा चित्त सुन्दर रहे वो चित्रकूट है। अब चारु चित्त कैसे किसको कहे? तीन मुद्दे को ध्यान रखो। एक मन; मन के लिए बहुत बड़ा खतरा है संशय का। संशय आते ही मन सुमन नहीं रहता। और हमारी बुद्धि को भ्रम का खतरा है। और चित्त को खतरा है विक्षेप; बार-बार विक्षेप होना।

मैं चित्रकूट की कथा से एक सूत्र कहने लगा हूं युवान भाईयों को, बहनों को कि आप कृत्य भी करे और नृत्य भी करे। कृत्य मानी कर्मयोग, नृत्य मानी भक्तियोग। मीरां ने कृत्य भी किया, नृत्य भी किया। गौरांग चैतन्य महाप्रभु ने कृत्य भी किया, नृत्य भी किया। देवऋषि नारद ने कृत्य भी किया। घूमते रहे जग कल्याण के लिए। और नृत्य भी किया। श्री हनुमानजी राम के सभी कृत्य सफल करते हैं। और बड़े नृत्यकार भी है। और मैं 'नृत्य' शब्द इसीलिए कह रहा हूं क्योंकि नृत्य तभी होता है जब चित्त में कोई विक्षेप न हो। तो तीन वस्तु हमारे जीवन में आये। एक तो कथा मंदाकिनी बन कर आये। हम चाहे तब कथा आये। विक्षेपमुक्त चित्त का अचल चित्रकूट हो। और सुन्दर स्नेह का वन हो। कथा स्नेह से सुनी जाये। कथा स्नेह से गाई जाये। तो ये तीन सूत्र जिसमें आ जाये तो वहां 'सीय रघुवीर बिहारु।' सीता और राम दोनों बिहारी बनकर विहरण करने लगते हैं। ऐसे 'मानस' बिहारी की चर्चा में जीव भी विहारक है। जगत भी विहारक है। और जगदीश भी विहारक है। तीनों विहारी है।

तो बाप! याज्ञवल्क्य महाराज मुस्कुराकर भगवान राम के गूढ रहस्यों को भरद्वाजजी के सामने खोलने के लिए गाने लगे। पहले शिवचरित्र सुनाया कि हे महात्मा, एक बार के त्रेतायुग में शिव और दक्षकन्या सती दोनों कुंभज ऋषि के आश्रम में गए। पूजा की अखिलेश्वर शिव-पार्वती की। और फिर भगवान शंकर ने जिज्ञासा की कि मुझे रामकथा सुनाओ। और कुंभज प्रसन्नता से भगवान की कथा सुनाते हैं। शिव ने परमसुख से कथा सुनी। सती ने कथा ध्यान से नहीं सुनी। कथा पूरी हुई। दंडकवन से शिव-सती निकले। वो त्रेतायुग भगवान राम की लीला वर्तमान थी। माया सीता का अपहरण हो चुका था। और राम नरलीला करते हुए सीता के वियोग में रोते हुए घूमते थे। उसी समय शिव और सती वहीं से गुजरे। भगवान राम के दर्शन करते ही शिव 'सच्चिदानंद' कह कर भावमग्न हो गए। सती ने उसका ऊल्टा अर्थ कर दिया कि ये कोई ब्रह्म है? ये तो रो रहा है! सती के मन में राम के प्रति संशय पैदा हुआ। भगवान शंकर सावधान होकर कहते हैं, आप अपने मन में ऐसा संशय न रखो। ये परमात्मा है। ये सत्चित्तआनंद हैं। सती को उपदेश नहीं आया। शिव को लगा कि सती बिना परीक्षा किये मानेगी नहीं। इसीलिए कहा देवी, मेरे वचन पर आपको विश्वास न हो तो आप जाकर राम की परीक्षा करो। सती दक्ष की कन्या है। बुद्धिमान की बेटी है इसलिए थोड़ी बौद्धिक स्तर पर काम करती है। अत्यंत बौद्धिक व्यक्ति बिना परीक्षा कुबूल नहीं करता। और अखंड विश्वासी लोग कोई परीक्षा नहीं करता; सीधा विश्वास कर देता है; सीधी प्रतीक्षा में डूब जाता है।

सती परीक्षा के लिए राम के पास जाती है। सीता का वेश बनाती है। राम पहचान लेते हैं। प्रभु ने ऐश्वर्य दिखाया। शिव के पास आयी। और शिव ने पूछा कि आपने

कथा के कई रूप है। कथा का एक रूप है जिसमें जीव, जगत और जगदीश तीनों की चर्चा होती हो। तीन में से एक को यदि छोड़ दिया जाय तो ये अध्यात्म-त्रिकोण खंड़ित हो जाता है। तीनों की चर्चा कथा में होती है। जीव है आधिभौतिक। ये पूरा जगत यद्यपि भौतिक दिखता है लेकिन आधिदैविक है। और जगदीश यानी परमात्मा है आध्यात्मिक। जीव की भी चर्चा हो। जगत की भी चर्चा हो और जगदीश की भी चर्चा हो। उसी को कहते हैं कथा। ऐसी है रामकथा। ऐसी है कृष्णकथा। ऐसी है शिवकथा। ऐसी है कोई भी शुभकथा, शुभ वार्ता।

कैसे परीक्षा की? सती ने छिपाया कि मैंने कोई परीक्षा नहीं की। भगवान शिव ने हृदय में ध्यान किया। सती ने जो कुछ किया वो समझ लिया! शिव सोचने लगे कि सीता तो मेरी माँ है। तो क्या करूं? राम का सिमरन किया। और अंदर से शिव संकल्प उठा कि सती का ये शरीर रहेगा तब तक सती भी मेरी माँ मानी जाएगी। शिव कैलास पहुंचते हैं और शिव को अखंड समाधि लग गई। भगवान शिव सत्तासी हजार साल के बाद जागते हैं। सती ने जाना कि जगतपति जागे हैं। जाकर प्रणाम करती है। शिव ने सती को सन्मुख किया। कथा कहने लगे। दक्ष के यज्ञ की कथा आयी। सब जा रहे थे यज्ञ में। सती ने जिद्द की, मैं भी जाऊं पिता के घर। शिव ने यद्यपि मना की लेकिन न मानी। सती को यज्ञ में भेजा। वहां शिव अपमान सहा नहीं गया और सती ने योग अग्नि में अपने शरीर को समाप्त कर दिया। योगाग्नि में जलते समय सती ने प्रभु से मांग की कि जनम-जनम मुझे शिव ही प्राप्त हो। इसी कारण हिमालय के घर पुत्री के रूप में पार्वती आई। नगाधिराज हिमालय के घर में पुत्री का आगमन होते ही हिमालय बहुत प्रसन्न। एक दिन नारदजी आये। नारदजी ने नामकरण किया और कन्या को पति कैसा मिलेगा वो हस्तरेखा देखकर बताया। पार्वती तप करती हैं। यहां भगवान निरंतर घूमते रहते हैं। फिर एक जगह बैठकर ध्यान करने लगे। राम प्रगट हुए। शिव से मांगा कि आप पार्वती से शादी कर लो। बाबा ने हां बोल दी और भगवान अंतर्धान हुए।

स्वार्थी देवगण आते हैं। भगवान की प्रशंसा की। ब्रह्मा ने कहा, आप ब्याहो। महादेव ने कहा, आप कहो और मैं ब्याहूं ऐसी बात नहीं। मेरे ठाकुर ने मुझे आदेश दिया है। चलो, मैं शादी करूंगा। भगवान शंकर के गण शिव को सर्पों के आभूषण, जटा का मुकुट, हाथ में कंगन, कानों में कुंडल सर्पों की, यज्ञोपवित भी सर्प की। चिता की भस्म का लेपन किया है। नंदी की सवारी। हाथ में त्रिशूल। ऐसे शृंगार किया है। बारात हिमालयप्रदेश पहुंची। शिव के रुद्र रूप को देखकर सब बेहोश हो गए! महाराणी मैना आरती करने आयी। लेकिन आरती करने गई ही और ये बिकट भेष बाबा का देखा! सब गिर गए! सखियां महारानी बेहोश हुई है उसको निजभवन में ले गई। इतने में नारद, सप्तऋषि और स्वयं नगाधिराज हिमालय निजगृह में आये। और नारद सबको समझा रहे हैं। आप जिसको बेटी मानती हैं न मैना, वो दुनिया की दृष्टि से आपकी बेटी है बाकी ये तुम्हारी भी माँ है। ये जगदम्बा है। ये परमशक्ति है। और तुमने जिसका अपमान किया द्वार पर वो शिव परमात्मा है। पूरे प्रसंग का इतना ही सूत्रात्मक सार है कि हमारे घर में शक्ति होती है। हमारे घर के द्वार पर शिव होता है लेकिन कोई नारद जैसा सद्गुरु हमें बताये नहीं तब तक हमें उसकी पहचान नहीं हो सकती है। सब पार्वती के चरणों में वंदन करने लगे। शिव के प्रति नूतन आदर प्रगट हुआ है। फिर लोक और वेदरीति से शिव और उमा का विवाह हुआ। माता-पिता का आशीर्वाद लेकर भवानी पतिगृह निकली। और भगवान शिव और पार्वती का नितनूतन विहार चला। समय पूरा होते ही कार्तिकेय को पार्वती ने जनम दिया। उसको तुलसीदासजी ने पुरुषार्थ कहा है। पुरुषार्थ षड्मुखी होता है।

तो शिवचरित्र सुनाया। अब शिवकथा के द्वार से राम के मंदिर में हमें लिये चलते हैं। और भगवान शंकर एक बार वेदविदित वट वृक्ष के नीचे सहजासन में बैठे हैं। पार्वती भल अवसर पाकर के आती हैं। भगवान शंकर वाम भाग में आदर दे कर बिठाते हैं। और पार्वती फिर जिज्ञासा करती हैं, मुझे आप रामकथा सुनाइए। और ये जिज्ञासा पर भगवान शंकर प्रसन्न हुए। ध्यानरस में डूबे शिव मन को बहिर् करते हैं। और मनमें सबसे पहले शिव के इष्टदेव बाल राम हैं। भुशुंडि के इष्टदेव भी बालक राम हैं। उसी समय कथा के बारे में जब भवानी ने पूछा तब भगवान शंकर ने इस बाल रूप को स्मरण किया, ध्यान किया, उसीमें ये पंक्ति आई है-

मंगल भवन अमंगल हारी।
द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।
धन्य धन्य गिरिराजकुमारी।
तुम समान नहिं कोउ उपकारी।।

भवानी को भगवान शिव कैलास में जो पहला वाक्य बोले वो ये था, हे भवानी, धन्य हो धन्य हो; आपके समान जगत में कोई उपकारी नहीं है। आपने ऐसी कथा मुझे पूछी जो समस्त लोक को पावन करनेवाली गंगा है। रामकथा की गंगा समस्त ब्रह्मांडों में चलती है। देवी के सामने कथा कहने के लिए शिव बिलकुल प्रसन्नचित्त से तैयार हुए।

मानस–बिहारी – ५

संत, हनुमंत और भगवंत तीनों बिहारी है

बाप! हम विषय में प्रवेश करें इससे पूर्व जो कुछ जिज्ञासायें है मेरे पास, गुरुकृपा से यथामति में कुछ आपसे बातें करूं। एक श्रोता का प्रश्न है, 'श्री राम भगवानजी ने जानकीजी से कहा कि मैं ललित नरलीला करना चाहता हूं, आप अग्नि में निवास करें। तो जानकीजी ने तुरंत अग्नि निवास कर लिया। 'रामचरित मानस' में इस संदर्भ में राम और जानकी के बीच कोई संवाद नहीं हुआ है? क्यों?' पहली बात तो तात्त्विक हो सकती है कि सीता-राम दो नहीं है। जैसे गोस्वामीजी ने भी कहा-

गिरा अरथ जल बीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न।

चर्चा तो दो में हो सकती है। यद्यपि हम अद्वैत की भी चर्चा करते हैं। एक सुखद आश्चर्य है। लेकिन चर्चा तो दो हो तब ही हो सकती है। तो राम-जानकी दो नहीं है, वाणी और अर्थ की तरह और सागर और उसकी लहरों की तरह। दूसरी बात जो परमात्मा की प्रभा के रूप में घूम रही है। चंद्र की चांदनी के रूप में साथ चल रही है। एक पुरुष की छाया के रूप में साथ चल रही है। छाया वार्तालाप नहीं करती। सूर्य की प्रभा सूर्य से दलीलें नहीं करती। चांद की चांदनी कोई बहस नहीं करती। वो अपने पूर्णरूपेण परम के आश्रय में जी लेती है। और यदि आप बातचीत सुनना चाहें तो भी 'मानस' में स्पष्ट रूप में यदि न लिखा हो लेकिन संतों की जुबां से आपको सुनना पड़ेगा कि बहुत-सी बातें हुई हैं। जानकी ने भगवान से कहा कि मैं अग्नि में समा जाऊं ऐसा आप कहते हैं। तो अग्नि जलाइये, मैं समा जाऊं। तब प्रभु ने कहा कि देवी, अग्नि जलाने की जरूरत नहीं। मेरा रूप ही पावक है। आप मेरे रूप में समा जाओ। मेरा नाम पावक है। मेरे नाम में समाविष्ट हो जाओ। मेरा बाण भी पावक है। आप मेरे बाण में समा जाओ। आपके बिना मैं जो भी बाण मारूंगा इससे दुरित का नाश नहीं होगा। आप जब मेरे बाण में समाविष्ट होगी तब ही दुरित का नाश होगा। आप मेरे बाण में समा जाओ। आप मेरी बानी में समा जाओ। ये दो व्यक्ति अकेले बैठे हैं। उसमें जो बातचीत हुई है वो किसी ने सुनी नहीं। गोस्वामीजी को लगा कि ये बिलकुल अंतरंग चर्चा है। और गोस्वामीजी का शब्द उसी प्रसंग में जिसने ये प्रश्न पूछा है, आपको खयाल में होगा-

लछिमनहूँ यह मरमु न जाना।
जो कछु चरित रचा भगवाना।।

आप सोचिए, चौदह साल जिसने जागृति का व्रत लिया है, मतलब बिलकुल जागृत व्यक्ति लक्ष्मण भी इन दोनों के बीच में क्या गुफ़्तगू हुई या योजना बनी इसका मर्म नहीं पा सका। हम और आप किस खेत की मूली हैं? हम उसको कैसे पकड़ पायें? कई बातें पकड़ में नहीं आती। मेरा एक वक्तव्य आपको याद होगा कि 'मानस' की दो पंक्तियों में जो लिखा है वो तो हम पढ़ते हैं, पढ़ना चाहिए। लेकिन कुछ रहस्य ऐसे होते हैं जो दो पंक्तियों के बीच में खाली जगह होती है वहां होते हैं। और ये खाली जगह में जो रहस्य है वो केवल गुरु समझा सकता है। ग्रंथों से भरी अलमारियां ये नहीं समझा सकती। इसमें चाहिए गुरु। रहस्यों से भरपूर रामकथा है। तो कुछ बातें ऐसी हैं मेरे भाई-बहन, हम नहीं जान पाते। तो सीताराम के बीच कुछ बातें हुई हैं जो अनलिखी है।

आपका दूसरा प्रश्न, 'जब कपटी मृगरूप मारीच की आवाज़ सुनकर माँ सीता ने लक्ष्मणजी को श्री रामजी के पास भेजा तब लक्ष्मण द्वारा सुविख्यात लक्ष्मणरेखा खींची जाने का कोई जिक्र 'रामचरित मानस' में नहीं है। तो ये लक्ष्मणरेखा आई कहां से?' ठीक है। वहां नहीं है। लेकिन लक्ष्मणरेखा की चर्चा मंदोदरी ने की है। आपने राम के लघुबंधु ने जो रेखा खिंची थी वो भी आप नांघ नहीं पाये। 'राम बंधु लघु रेख।' इसका संदर्भ वहां मिलता है। यहां नहीं है। 'रामचरित मानस' रहस्यपूर्ण ग्रंथ होने के नाते उसका यत्र-तत्र कहीं भी संदर्भ छिपा होता है। उसके लिए कोशिश करनी चाहिए।

'''रामचरित मानस' में तुलसीदासजी ने प्रभु राम के मुंह से ऐसी बातें जो मान्य नहीं हो सकती, क्यों कहलवाई? उनका क्या तात्पर्य है बापू? आप बताये।

पूजिअ बिप्र सील गुन हीना।
सुद्र न गुन गन ग्यान प्रबीना।।''

अब इसका भाषांतर करो तो तो गड़बड़ी हो जाएगी! आपके मन में जैसे ये बात उठी है, मैं जब मेरे दादा के चरणों में बैठकर रामकथा का अमृत पी रहा था तब मेरे मन में भी ये बात उठी थी कि ये कैसे हो सकता है कि ब्राह्मण में कोई शील न हो, गुण न हो तो भी वो पूज्य। और जिसको लोग उपेक्षित कहते हैं, वंचित कहते हैं, दलित कहते हैं, बिलकुल दूर फेंक दिए हैं वो गुण, गण, ज्ञान में प्रवीण है फिर भी उसको कोई आदर नहीं? ये तो सामाजिक न्याय नहीं हुआ। ऐसे अर्थघटन से तो हमारे यहां वर्गविग्रह पैदा होगा। वर्गवाद, जातिवाद, वर्णवाद ने हमसे कई बार युद्ध की ओर निमंत्रित किया है। तुलसी समन्वय का साधु है। तुलसी जोड़ते हैं। मेरे मन में जब ये बात उठी थी। सालों पहले की बात व्हेन आई वोझ टेन इयर्स अथवा इलेवन इयर्स ओल्ड। तो मेरे गुरु ने जो मुझको बताया वो अर्थ मैं आपको बताकर आगे बढ़ूं क्योंकि 'सदगुरु बैद बचन बिस्वासा।' मैं किसी का गुरु नहीं हूं। मेरे सब फ्लावर्स है; मेरे श्रोता बहुत है। शिष्य कोई नहीं। मजबूरसाहब का एक प्रसिद्ध शे'र कहूं-

ना कोई गुरु ना कोई चेला।
अकेले में मेला मेले में अकेला।

तो गुरु के वचन पर विश्वास रखकर साधक चले। किसी गुरु का आश्रय करो तो दृढ़ भरोसा रखो। मेरे गुरु ने जो बताया वो जवाब आपको दूं। मेरे दादाजी कहते थे कि बेटा, इसका अर्थ ये समझना कि ब्राह्मण में शील और गुण न हो तो भी पूजना? प्रश्नार्थ है। और शूद्र में गुण गण ज्ञान की प्रवीणता है तो भी उसको शूद्र कहना? यदि ब्राह्मण चरित्रवान नहीं है, यदि ब्राह्मण में शील नहीं है, उसको आदर दो। समाज उसको आदर दे। मैं भी चाहूं आदर दे। देना चाहिए। लेकिन ब्राह्मण को समझना चाहिए कि मैंने मेरी पूज्यता गवां दी। और कोई पतित, कोई अधम, अब ये शब्द ही निकाल देना चाहिए दुनिया से। शास्त्रों को भी अंतिम व्यक्ति के पास जाना पड़ेगा। धर्म को अंतिम व्यक्ति तक जाना चाहिए। सत्य को अंतिम व्यक्ति तक जाना चाहिए। सत्ता को अंतिम व्यक्ति तक जाना चाहिए। धन को अंतिम व्यक्ति तक जाना चाहिए। मोक्ष भी आपको मिले तो आपको अंतिम व्यक्ति तक जाना चाहिए। इस भूमि के भगवान तथागत बुद्ध ने कहा कि मैं तब तक निर्वाण नहीं ग्रहण करूंगा जब तक एक भी व्यक्ति निर्वाण से रहित हो। मोक्ष भी बांटना पड़ेगा। संपन्न लोगों को चाहिए कि आखिरी व्यक्ति तक जाए। धर्म को तो जाना ही चाहिए। राम कहां-कहां गये!

राम का समग्र जीवन बिहारी जीवन हैं, विहार का जीवन है। विश्वामित्र कोई भिखमंगे व्यक्ति नहीं थे। दशरथ के पास उसने ये कहा कि महाराज, आपका ये लाल, उसको क्या तुम अपने आंगन में ही विहार करते रखोगे? नहीं, सीमा से बाहर निकालो। उसको विश्व के सामने रखो, मैं विश्वामित्र हूं।

मेरे लिए राजभवन और अंतिम व्यक्ति में कोई भेद नहीं है क्योंकि मैं 'मानस' गा रहा हूं। मेरा राम दशरथ के आंगन का विहार बंद करके विश्वामित्र की हाकल पर बाहर निकल गये। गये ताडका तक। गये मारीच तक। गये सुबहु तक। गये समाज की अहल्याओं तक। भगवान गये गंगा तक। भगवान गये मिथिला तक। और उसके बाद इतने विहार में प्रभु ने सोचा कि अयोध्या से मिथिला तक का विहार विश्व को प्रसन्न करने में कामयाब हुआ। तो इतने सीमित समय का विहार काम नहीं लगेगा। अब मुझे चौदह वर्ष वनविहार करना चाहिए। और ये प्रभु की इच्छा से चौदह साल के वनवास की योजना प्रभु का पूरा जीवन विहार है। वो भीलों के पास गये। निषादों के पास गये। केवटों के पास गये। ऋषिमुनियों के पास गये। आदिवासी गिरि वनवासी के पास गये। अरे छोड़ो, भगवान पत्थरों के पास गये। सेतु बनाया। छोड़ो, भगवान राक्षसों के पास गये। यही है रामराज्य की यात्रा। तो 'सुद्र न गुन गन ग्यान प्रबीना।' कोई अगर ऐसा है, गुणवान है, शीलवान है। आम्बेडकरसाहब के लिए आप क्या सोचेंगे? बाबासाहब के लिए क्या सोचेंगे आप? उसको आदर नहीं दोगे क्या? जिसमें कुछ है उसका सन्मान करो। और जो आदि काल से सन्मानित है उसमें कुछ नहीं है तो भी उसको आदर दो, चलो। लेकिन उसको तो समझ लेना चाहिए कि मैंने मेरी पूज्यता खो दी है। मेरे दादा ने मुझे ये बताया था। ये गुरु वचन पर विश्वास रखकर मैं आपको ये कह रहा हूं।

एक प्रश्न है एक युवक का, 'बापू, ऋषि, मुनि, संत और महात्मा में क्या फ़र्क है?' आप सहमत हो ऐसा मैं नहीं कहूंगा। ऋषि और मुनि हमारे यहां अक्सर गृहस्थ हैं। ज्यादातर वो संसारी हैं। फ़र्क दोनों में इतना है, ऋषि मंत्रदृष्टा है; शास्त्र का ज्ञाता है; शास्त्र रचता है। मुनि बहुधा मौन रहने में जीवन व्यतीत करता है। है तत्त्वतः दोनों एक। संत उसको कहते हैं जिसका कोई अंत न हो। संत उसको कहते हैं जो अनंत है। 'जानेहु संत अनंत समाना।' संत उसको कहते हैं जो अनंत के समान है। और संत उसे कहते हैं जो किसी से किसी बात का तंत न करे, तकरार न करे। और संत वो है जिसके मन में महंत बनने की कभी तृष्णा प्रगट न हो। महंत होना खराब नहीं है। महात्मा कौन? महात्मा गांधी। महात्मा तुलसीदास। महात्मा मूलदास। हमारे बीच में रहकर जिन्होंने साधुता अर्जित कर ली वो महात्मा है। तो आईये, थोड़ा विषयप्रवेश करें।

मंगल भवन अमंगल हारी।
द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।

महाराज दशरथ जीव है। इस इन्द्रियों के रथ पर थोड़ा गुरुकृपा से कंट्रोल करनेवाला जीव दशरथ है। और राम कहां विहारी बने हैं? 'दशरथ अजिर।' अयोध्या का ये कनक भवन अथवा जो कहो। राम की जनम भूमि जो कहो। और उसके आंगन में भगवान विहार कर रहे हैं। आध्यात्मिक दृष्टि से दशरथजी हैं जीव। और दशरथरूपी जीव का आंगन है हृदय। भगवान तात्त्विक रूप से जीवात्मा के हृदय में विहार करते हैं। 'ईश्वरः सर्वभूतानाम्' लेकिन वहां तो 'तिष्ठति' है। विहार नहीं है। बैठा है। हमें चाहिए हमारे हृदय में विहार करे। तो जीव का हृदय ये आंगन है। और उसमें साक्षीभूत ईश्वर बैठा है वो नहीं। तुलसी कहते हैं वो सक्रिय हो। वो सगुण बनकर हमारे हृदय में विहार करे। ये निर्गुण के रूप में अंदर एक साक्षीभूत बैठे रहे ऐसे नहीं। निर्गुण ब्रह्म को संतों ने विहार करता कर दिया। गतिशील कर दिया। बिहारी बना दिया।

कबहूँ ससि मागत आरि करैं
कबहूँ प्रतिबिंब निहारी डरैं।

तुलसी 'कवितावली रामायण' में कहते हैं। जो अपना प्रतिबिंब देखकर नाचता है वो कभी-कभी अपना प्रतिबिंब देखकर डरता भी है! सुन्दर बाललीला है ठाकुर की। बाल रामजी आंगन में खेलते हुए एकदम जिद्द कर रहे हैं, रो रहे हैं, मुझे चांद ला दो, चांद ला दो। सुन्दर बाललीला, कितना प्यारा विहार है ये! समाज को बच्चे को देखना पड़ेगा तभी राम समझ में आएगा। तुम्हारे घर में जो ऐसे इतना छोटा बालक हो उसमें राम देखना शुरू करो तभी

अयोध्या का राम समझ में आएगा। 'बालं मुकुन्दं मनसा स्मरामि।' ये मंज़र तो दिल में रख दो। 'कवितावली' का मंज़र है। चांद-सूरज जिसके नेत्र हैं वो ठाकुरजी कितनी सुन्दर लीला कर रहे हैं! और माताएं अपने मन में आनंद से भर जाती हैं।

अवधेसके बालक चारि सदा
तुलसी-मन-मंदिर में बिहरैं।

ये है बिहारी। कहां बिहरे? दशरथ है जीव; उनका मन है आंगन। तो परमात्मा सक्रिय हो। 'गीता' का ईश्वर साक्षी बनकर बैठा है हृदय में। उसको सक्रिय किया जाये। निर्गुण को सगुण कर लिया जाए। और भक्त के भाव से 'सो अज प्रेम भक्ति बस कौसल्या की गोद।' माँ कौसल्या की गोद में उसका विहार है।

तो मेरे भाई-बहन, भगवान का विहार, जीव जगत और जगदीश तीनों की चर्चा होनी चाहिए कथा में क्योंकि जीव का विहार जगत में है। हम जीव हैं, जगत में विचरण कर रहे हैं। और जगत जगदीश में विहार करता है। तुलसी कहते हैं-

ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै।
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहै।।

अर्जुन ने भी 'गीता' में जब ये विराट रूप देखा तो पूरा जगत उस विराट में उसने दिखा। तो ये पूरा ब्रह्मांड ईश्वर में विहार कर रहा है। ईश्वर कहां विहार कर रहा है? सगुण रूप में जीव के हृदय में। ये पूरा वर्तुल है। पूरी साईकिल है। एक अर्थ में मेरी व्यासपीठ का ये त्रिकोण है, जीव, जगत, जगदीश।

आज एक ओर त्रिकोण, कथा में जिसका जिक्र होना चाहिए क्योंकि ये तीनों हमें विहार सिखाते हैं और वो है आध्यात्मिक त्रिकोण, उसका नाम मैंने पहले कभी गुरुपूर्णिमा में कहा है, संत, हनुमंत और भगवंत। हमारे जीवन में तीनों आ जाए। सक्रिय रूप में विचरण करे। ये है त्रिकोण। और कथा में तीनों की चर्चा होती है। कोई भी शास्त्र ऐसा नहीं कि जिसमें संतों के लक्षण की चर्चा न हुई हो। तो एक अर्थ में कथा उसको कहते हैं जिसमें संत, हनुमंत और भगवंत तीनों की चर्चा हो। क्योंकि तीनों बिहारी हैं। संत विहारी है। 'चरैवेति चरैवेति।' साधु निरंतर विचरण करता है। हमारे यहां कहते हैं न 'साधु तो चलता भला।' साधु का विहार ऐसा होता है कि जैसा समाज आया उसके समान वो मुड जाता है। कोई महान मिला, ठीक है। कोई तुच्छ मिला, ठीक है।

मैं युवानों को पांच बातें कहूं। युवान प्रेक्टिकल होना चाहिए। युवान पोझिटिव होना चाहिए। युवान पंक्च्युअल होना चाहिए। और युवान जीवन जीए तो प्लेग्राउंड की तरह दुनिया में जीना चाहिए। और युवान पीसफुल होना चाहिए। ये पांच 'प' वर्ग है। उसको अपवर्ग कहते हैं।

संत संग अपवर्ग के कामी भवकर पंथ।

आदमी को प्रेक्टिकल होना चाहिए। संत का विहार जिद्द से भरा नहीं होता। बहुत प्रेक्टिकल विहार होता है। तो संत भी विहार करते हैं। हम जैसों के पास आकर हमें धन्य करता है। हनुमंत का गगन विहार है। आसमां का विहार है।

बार बार रघुबीर संभारी।
तरकेउ पवनतनय बल भारी।।
जहिं गिरि चरन देइ हनुमंता।
चलेउ सो गा पाताल तुरंता।।

श्री हनुमानजी निरंतर विहार करते हैं। रामकार्य पूरा होने के बाद श्री हनुमानजी का विहार है भगवद्कथा। श्रवण में उसका विहार है। कथा सुनना बस। वायु के रूप में तो सतत बहते ही रहते हैं। विचरण ही उसका स्वभाव पवन के रूप में। और भगवंत भी विहार करते रहते हैं। आप शांति से सोचे कि नंद-यशोदा का इतना प्रेम। गोपीजनों का इतना प्रेम। ये सब छोड़कर कृष्ण क्यों विहार कर गये मथुरा? ये क्यों केवल वृंदावन विहारी न रहे? ये क्यों केवल बांकेबिहारी न रहे? क्यों मथुरा की ओर विचरण? और कृष्ण का पूरा जीवन विहार है। मथुरा गये। वहीं से द्वारका गये। द्वारका से कुरुक्षेत्र गये। खबर नहीं, ये आदमी पूरे जीवन में घूमता रहा! आखिर में जब समय आया तो यही द्वारकाधीश ने विहार किया सौराष्ट्र के सोमनाथ की ओर। प्रभास क्षेत्र की ओर। जहां उसने देहोत्सर्ग को कुबूल किया। समग्र जीवन बांकेबिहारी का विहार है। परमतत्त्वों का एक जगह ठिकाना नहीं होता है। ये सदा-सदा बिहारी ही रहते हैं। भगवान कृष्ण को देखूं तो भी मुझे बिहारी

लगते हैं। मेरे ठाकुर राम को देखूं तो भी बिहारी लगते हैं। किसी संत को देखूं तो भी बिहारी लगते हैं। हनुमंत को देखूं तो भी बिहारी लगते हैं। और भगवंत तो बिहारी है ही। तो ये विहारलीलाओं ने हमें कृतकृत्य किया है। हमें धन्य किया है।

तो बाप! ऐसे भगवान दशरथ के हृदयरूपी आंगन में विहार करते हैं। तुलसी के मनमंदिर में विहार करते हैं। कभी वैकुंठ विहारी तुलसी ने उसको कह दिया। कभी रामपुर विहारी कह दिया तुलसी ने अपने-अपने अन्य ग्रंथों में। परमात्मा करे, हमारे हृदय में परमात्मा का ये बिहारी रूप बना रहे। और अर्जुन कृष्ण का ये सखाभाव के विहार को देखकर ही तो विश्वरूप देखकर के रोया। हे गोविंद, अब मुझे माफ़ करना। हमने दोनों ने जो विहार किये उसमें तो मैंने तुझे मेरा सखा समझा, मेरा मित्र समझा। 'सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं।' हे कृष्ण, हे यादव, हे सखेति, मैंने तुझे, 'तू' कहा। 'विहारशय्यासनभोजनेषु।' यहां भी विहार है। आपके साथ शय्या विहार। भोजन एक साथ करते थे। खेलते थे एक साथ में। मैं तुझे पहचान नहीं पाया। आज मैं क्षमा मांग रहा हूं। मुझे माफ़ करना। मैंने तेरे महिमा को नहीं जाना। 'मया प्रमादात्प्रणयेन वाऽपि।' और नहीं जाना इसमें जीव का प्रमाद ही कारण है। प्रमाद। वर्ना तो सबको अधिकार है हरि को पाने का। लेकिन प्रमाद बाधा है। कई अर्थों में ये बात आई। नरसिंह मेहता ने नागदमन की कथा लिखी उसमें नागिनियां जो होती है, कालीनाग की पत्नियां वो नरसिंह मेहता की बोली में कृष्ण को कहती है-

अमे अपराधी कांई न समज्या, न ओळख्या भगवंतने।

हम भगवान को नहीं पहचान पाये। परशुराम भी 'जाना राम प्रभाव तब।' राम की महिमा जानी तो 'मानस' में कहते हैं, 'अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता।' हे ठाकुर, मैंने अज्ञानवश। दो ही शब्द है, एक विज्ञानवश होना, एक अज्ञानवश होना। कई लोग विज्ञानवश है। कौन? मेरा हनुमान।

वन्दे विशुद्धविज्ञानौ कवीश्वर कपीश्वरौ।

वाल्मीकि विज्ञानवश है। हनुमानजी विज्ञानवश है। हम जैसे मूढ जीव अज्ञानवश है। यद्यपि आध्यात्मिक रहस्य का जवाब केवल विज्ञान नहीं दे पायेगा। फिर भी विज्ञान की एक जगह है। उसको हमें स्वीकार करना चाहिए। भगवान राम का एक वचन है, 'ग्यानी ते मोहि प्रिय बिग्यानी।' तो या तो विज्ञान का या तो अज्ञान का वरण करो। परशुरामजी ने जब अज्ञानता मिटी। समझ आई तो इसी टोन में बोलते हैं-

अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता।
छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता।।
जय रघुबंस बनज बन भानू।
गहन दनुज कुल दहन कृसानू।।

मेरी मूढता थी राघव कि मैंने कुछ ऐसे बचन बोल दिए। आपका प्रभाव नहीं जान पाया। मुझे क्षमा करना। ऐसा परशुराम बोले हैं। हमारा अज्ञान कितना प्रगाढ़ है! कोई कल्पना नहीं है साहब!

अमीरे शहर कहता है कि ज़माना मुझसे चलता है।

ये मूढ़ता है। राज कौशिक की एक गज़ल है।

अमीरे शहर कहता है कि ज़माना मुझसे चलता है।
पर उसकी बात पर खुलकर फ़कीरे दश्त हंसता है।
अजब काजल मेरी आंखों में उसने ये लगा डाला।
कोई चेहरा हो कैसा भी मुझे सुन्दर ही दिखता है।

गुरु ने क्या किया? तुलसी लिखते हैं-

गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन।
नयन अमिअ दृग दोष बिभंजन।।
तेहि करि बिमल बिबेक बिलोचन।
बरनउँ राम चरित भव मोचन।।

गुरु की चरण की रज का जो अंजन है, एक ऐसा काजल है। शायर अपने ढंग से कहता है। तो भगवंत के विहार की कथा, हनुमंत के विहार की कथा और संत के विहार की कथा।

कल की कथा में हमने देखा, भवानी ने शिव से जिज्ञासा की कि रामतत्त्व क्या है? और भगवान शंकर पहले निराकार का प्रतिपादन करते हैं, 'बिनु पद चलई' आदि-आदि कहकर। फिर भगवान के अवतार की भूमिका बताते हैं। 'जब जब होहिं धरम के हानि।' करीब-करीब 'गीता' के न्याय से ही लिया है। 'यदा यदा ही धर्मस्य।'

कुछ परिवर्तन के साथ। राम का अवतार क्यों हुआ? कौन कारण से हुआ? कोई कारण इदमित्थ नहीं है। लेकिन मैं आपको राम के अवतार के पांच कारण बताउं। शिव ने पांच कारण कहे। पहला कारण वैकुंठ के द्वारपाल जय-विजय, जिसको सनतकुमारों ने शाप दिया और उसको असुर योनि में आना पड़ा। उसका उद्धार करने के लिए परमात्मा को एक अवतार में राम होना पड़ा। दूसरा सती वृंदा। विष्णु छल करते हैं। और वृंदा ने जलंधर की धर्मपत्नी ने शाप दिया इसलिए प्रभु को राम अवतार लेना पड़ा। तीसरा कारण नारदजी ने भगवान को शाप दिया इसलिए भगवान को अवतार लेना पड़ा। चौथा कारण मनु और शतरूपाजी ने नैमिषारण्य में धेनुमति के तट पर बहुत तप किया। तप की फलश्रुति में प्रभु ने वचन दिया कि मैं आपके घर पुत्र बनकर आऊंगा। पांचवां और अंतिम कारण है राजा प्रतापभानु को ब्राह्मणों का शाप। इन पांच कारणों में चार कारणों में शाप है। एक कारण में परमात्मा की कृपा है। तो ब्राह्मणों के शाप के कारण प्रतापभानु दूसरे जन्म में रावण होता है। अरिमर्दन कुंभकर्ण बना। दूसरी माता के उदर से जन्म लेकर धर्मरुचि नाम का सविच था, वो विभीषण हुआ।

रामकथा में राम के अवतार से पहले रावण के अवतार की कथा लिखी गई। क्योंकि सूरज निकलता है इससे पहले अंधेरा होता है। पहले निशिचरों की कथा कही, बाद में सूर्यवंश की कथा कही। तीनों भाई बहुत उग्र तीक्ष्ण तप करते हैं। और बड़े दुर्लभ और दुर्गम वरदान प्राप्त करते हैं। इस वरदान के कारण रावण बिलकुल मनस्वी बनकर घूम रहा है। बहुत अत्याचार किया। पूरी धरती अकुला गई। गाय का रूप लेकर पृथ्वी ऋषिमुनियों के पास जाकर रोई कि मुझे बचाओ। ऋषिमुनियों ने कहा कि रावण के त्रास के कारण हमारा चिंतन-मनन तक रुक गया है। सब गये देवताओं के पास। देवताओं ने कहा कि हमारे पुण्य खतम होने जा रहे हैं। हम सब पितामह ब्रह्मा के पास जाएं। सब ब्रह्मा के पास गये। ब्रह्मा ने कहा, भगवान को पुकारें। प्रार्थना करें। सब देवता, ऋषिमुनि और पूरी पृथ्वी का प्रतिनिधित्व गाय के रूप में करती हुई धरा और महादेव सब मिलकर ब्रह्मा की अगवानी में भगवान की स्तुति करते हैं। सबने मिलकर के प्रभु को पुकारा। प्रत्युत्तर मिला आकाशवाणी के द्वारा, 'धरती, मुनिगण, देवगण, डरो न। अंशों के साथ मैं अवधपुर में प्रगट होउंगा। थोड़ी प्रतीक्षा करो।' सब प्रसन्न हो गए। परमात्मा के प्रागट्य के लिए तीन सूत्रों की फोर्म्यूला है और वो है पहले हम पुरुषार्थ कर लें। हमसे जो ही उपाय करें। पुरुषार्थ की सीमा पूरी हो जाए फिर हम पुकार करें। पुकारने के बाद एक तीसरा प्रदेश होता है जिसको कहते हैं प्रतीक्षा। हम कभी-कभी पुरुषार्थ करते हैं। पुकार भी करते हैं। लेकिन प्रतीक्षा नहीं कर पाते। परमात्मा प्रतीक्षा से मिलता है। शबरी ने कितनी प्रतीक्षा की। अहल्या ने कितनी प्रतीक्षा की। तब जाके हरिदर्शन हुए। पुरुषार्थ, पुकार, प्रतीक्षा तीन जब मिल जाते हैं तब प्राकट्य होता है।

भगवान को आने की बेला है। गोस्वामीजी हमें लिए चलते हैं अपनी मंत्रात्मक पंक्तियों के द्वारा श्रीधाम अयोध्याजी जहां भगवान का प्राकट्य होना है। अयोध्या नगरी है। रघुवंश का शासन है। वर्तमान राजाधिराज सार्वभौम महिपति जिसका नाम वेदविदित दशरथ है। कैसे हैं दशरथ? 'धरम धुरंधर।' मानी कर्मयोगी है। ज्ञानी है मतलब ज्ञानयोग भी है। 'गीता' के तीनों योग। अब भक्ति योग। 'हृदय भगति मति सारंगपानी।' मानों वेदों के तीनों खंड-उपासनाखंड, ज्ञानखंड और कर्मखंड का समन्वित रूप है महाराज दशरथजी। उसका गृहस्थ जीवन कैसा था? 'मानस'कार कहते हैं, 'कौसल्यादि नारी प्रिय।' राजा को रानियां प्रिय है। और रानियां कैसी है? 'सब आचरन पुनीत।' और रानियां ऐसे पवित्र आचरण में रहती है। राजा को बहुत आदर देती है। और राजा और रानी दोनों मिलकर 'हरि पद कमल बिनीत।' हमारे जीवन में राम प्रगटे ऐसी दाम्पत्य की एक छोटी-सी फोर्म्यूला तुलसीदासजी देते हैं। युवान भाई-बहन, तीन वस्तु करें। हमारे जीवन की अयोध्या में आराम प्रगटेगा; विश्राम प्रगटेगा; विराम प्रगटेगा; इस रूप में राम प्रगटेगा। पति पत्नी से प्रेम करे। पहला सूत्र। और स्त्री को चाहिए पुरुष को आदर दे। और फिर दोनों मिल करके परमात्मा की भक्ति करें। उसके घर राम प्रगट होंगे। राम मानी विश्राम, आराम प्रगट होगा। तो महाराज का जीवन ऐसा था। लेकिन दशरथजी के जीवन में एक पीड़ा है-

एक बार भूपित मन माहीं।
भैं गलानि मोरें सुत नाहीं।।

लेकिन स्वयं राजा को आज मुश्किल है तो किस को कहे? आज राजद्वार गुरुद्वार की ओर यात्रा कर रहा है। समस्याओं का समाधान कहीं से भी न प्राप्त हो तब एक ही द्वार खुला होता है और वो है अपने गुरु का द्वार; अपने बुद्धपुरुष का द्वार। वहीं जाना। महाराज दशरथजी वशिष्ठजी के द्वार गए। 'प्रभु, मेरे जीवन में पुत्रसुख नहीं है क्या?' मुस्कुराते हुए वशिष्ठजी ने कहा, 'राजन्, मैं तो कब से उत्सुक रहा कि आपके आंगन में ब्रह्म को बालक बना दूं। लेकिन कभी आप अथातो ब्रह्मजिज्ञासा तो करें। आप आज तक आये ही नहीं! मैं तो प्रतीक्षा मैं ही था। थोड़ा धैर्य करे, आपके घर चार पुत्रों की प्राप्ति होगी। त्रिभुवन में प्रसिद्ध, भक्तों के भय को हरनेवाले चार पुत्रों की प्राप्ति होगी। लेकिन राजन्, एक यज्ञ करवाना होगा। पुत्रकामेष्टि यज्ञ। शृंगी को बुलाओ।' तो कामेष्टि यज्ञ संपन्न हुआ। आहुतियां डाली गई। अग्निदेव स्वयं प्रसाद की खीर लेकर प्रगट हुए हैं। वशिष्ठजी को प्रसाद दिया और कहा, राजा को देना। अपनी रानियों को जथाजोग बांट दे। राजा ने प्रिय रानियों को बुलाई और प्रसाद का वितरण किया। इस प्रसाद को प्राप्त करने से तीनों रानियां सगर्भा स्थिति अनुभव करने लगी। कुछ काल बीता। प्रभु को प्रगट होने का अवसर निकट आया। पूरा पंचांग अनुकूल हुआ। 'जोग लगन ग्रह बार तिथि।' चर-अचर मैं हर्ष छा गया क्योंकि राम जनम सुख की जड़े हैं। अयोध्या में सगुन होने लगे हैं। और मेरे गोस्वामीजी कहते हैं, वो त्रेतायुग, चैत्र मास, संवत्सर का पहला नवरात्र, शुक्लपक्ष, नवमी तिथि, मध्याह्न का समय, अभिजित। मंद सुगंध वायु बह रही है। पर्वतों में मणियों की खदाने निकलने लगी। सरिताओं में अमृत बहने लगा। पूरा अस्तित्व बदल रहा है। पृथ्वी के ब्राह्मण देवता, आकाश के सुर देवता और पाताल के नागदेवता गर्भस्तुति कर रहे हैं। और 'मानस'कार कहते हैं, पूरे जगत में जो निवास करता है अथवा तो इस परमात्मा में पूरा जगत निवासित है ऐसा ब्रह्म माँ कौशल्या के प्रासाद में चतुर्भुज रूप में प्रगट होते हैं। और गोस्वामीजी अपनी लेखनी चलाते हुए गा उठे-

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी।।

प्रभु प्रगट हुए, लेकिन अभी केवल कौशल्या के हितकारी प्रभु प्रगट हुए। प्रभु को तो सबका हितकारी होना है। बिप्र, धेनु, सुर, संत इन चारों का हित करना है। चतुर्भुज रूप में ठाकुर प्रगट हुए हैं। माँ को ज्ञान हुआ। प्रभु ने मुस्कुरा दिया। माँ की गोद के अनुकूल होकर भगवान रोने लगे। और बाल रुदन सुनते ही भ्रम के साथ रानियां दौड़ी। आया ब्रह्म, हुआ सबको भ्रम! दशरथजी को खबर दी गई कि महाराज, आपके घर लाला भयो है। महाराज को ब्रह्मानंद की अनुभूति हुई। और सोचने लगे, जिसका नाम सुनने से शुभ होता है ऐसा ब्रह्म मेरे घर आया है? लेकिन ये ब्रह्म है कि भ्रम उसका निर्णय तो गुरु के बिना कौन कर सकता है? गुरु को बुलाइए। ब्राह्मणों को लेकर गुरु पधारे। गुरु ने निर्णय दे दिया कि नराकार में निराकार है। व्यापक में व्यक्ति है। पुत्र के रूप में जगत का पिता तुम्हारे घर अवतरित हुआ है। निर्गुण सगुण हुआ है। परमानंद में डूबे महाराज कहने लगे कि बाजेंवालों को बुलाओ। बधाईयां करो। पूरी अयोध्या में उत्सव शुरू होता है। आज बिहार की इस व्यासपीठ से आप सभी को रामजन्म की बधाई हो, बधाई हो।

एक अर्थ में कथा उसको कहते हैं जिसमें संत, हनुमंत और भगवंत तीनों की चर्चा हो। क्योंकि तीनों बिहारी हैं। संत विहारी है। साधु निरंतर विचरण करता है। संत का विहार जिद्द से भरा नहीं होता। बहुत प्रेक्टिकल विहार होता है। हम जैसों के पास आकर हमें धन्य करता है। हनुमंत का गगन विहार है। श्री हनुमानजी निरंतर विहार करते हैं। और भगवंत भी विहार करते रहते हैं। भगवान कृष्ण को देखूं तो भी मुझे बिहारी लगते हैं। मेरे ठाकुर राम को देखूं तो भी बिहारी लगते हैं। किसी संत को देखूं तो भी बिहारी लगते हैं। हनुमंत को देखूं तो भी बिहारी लगते हैं। और भगवंत तो बिहारी है ही।

कथा-दर्शन

- रामतत्त्व को अंतरंग रूप से जानने के लिए शिवतत्त्व आवश्यक है।
- शास्त्र आदमी को भय नहीं दिखाता। शास्त्र आदमी को अभय प्रदान करता है।
- समय-समय पर वेद-शास्त्र का भी संशोधन होना चाहिए।
- 'मानस' सेतुबंध का शास्त्र है। ये जोड़ता है, समन्वय करता है।
- 'मानस' पशुता से मानवता अर्जित करने की फार्म्यूला है।
- भगवान में न कोई राग होता है, न कोई द्वेष होता है।
- अवतार साहसी होता है। अवतार की गति अति विचित्र होती है।
- दृष्टि हम सबके पास है, लेकिन दृष्टिकोण नहीं है। सत्संग हमें दृष्टिकोण का दान देता है।
- धर्म रस से भरा होना चाहिए।
- दुनिया कभी संत और साधु से रिक्त नहीं हुई है।
- सिद्ध का कभी पतन भी हो सकता है। शुद्ध का कभी पतन नहीं होता।
- गुरु वो है जो आश्रित को सदा-सर्वदा निजतंत्र रखे, निर्भय रखे।
- किसी गुरु का आश्रय करो तो दृढ़ भरोसा रखो।
- जीवन में किसी को भी बाधक न बने उसी का नाम साधक है।
- साधक का कोई गणवेश नहीं होता।
- प्रसाद बांटा जाता है, बेचा नहीं जाता।
- महान चरित्रों को अग्नि में ही रहना पड़ता है। सूरज को जलना ही पड़ता है।
- हमारी आलोचना द्वेषमूलक हो तो माईंड न करो, संदेशमूलक हो तो कुबूल कर लो।

मानस–बिहारी – ६

भगवान राम अवधविहारी, चित्रकूटविहारी, दंडकवनविहारी और लंकाविहारी हैं

भगवान राम ने अपने जीवन काल में, अवतार काल में चार स्थान में विशेष विहार किया है। वैसे तो पांच है लेकिन मैं दो को साथ में रख दूंगा। एक तो भगवान अवध बिहारी हैं। अयोध्या में आपने विहार किया। अयोध्या अंतर्गत राजाधिराज के आंगन में भी आपने विहार किया। 'द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।' 'पवन तनय संतन हितकारि। हृदय बिराजत अवध बिहारी।' यहां प्रमाण मिलता है कि प्रभु अवध बिहारी है। और आज भी हम अयोध्या के ठाकुर को अवध बिहारी ही कहते हैं। लेकिन भगवान मिथिला बिहारी भी तो हैं। मिथिलावासी संत कहते हैं कि प्रभु ने हमारे यहां विहार किया है नगरविहार, पुष्पवाटिका का विहार। आध्यात्मिकता से भरपूर विवाहमंडप का विहार। इसलिए भगवान मिथिला बिहारी भी है। और मिथिला और अयोध्या को जोड़ दूं क्योंकि राम ने जोड़ा है। कथा में तुलसी ने दोनों को जोड़ा है। 'सरितन्हि जनक बँधाए सेतू।' जब दशरथजी बारात लेकर जाते हैं मिथिला तो जनकराज ने जहां नदियां थी वहां सेतु बना दिया। लोग प्रश्न करते हैं कि इतना शीघ्र सेतु कैसे बना होगा? इसको केवल स्थूल सेतु के रूप में न लें। लेकिन अयोध्या और जनकपुर को एक किया ये सेतु है। विश्वामित्र और वशिष्ठ में सेतु निर्मित हुआ। ये भी सेतु है। सीता-राम जुड़ गए ये भी सेतु है। अथवा तो उस समय में कोई ऐसी व्यवस्था रही होगी कि नदियों पर शीघ्रता से सेतु बनाया जाए। लेकिन यहां सेतु का मतलब है जोड़ना।

तो अयोध्या को संतों ने बुद्धि की नगरी बताया है। जनकपुर तो बुद्धि की नगरी है ही। जिस नगरी के मालिक महाराज विदेहराज समान दुनिया में कौन बुद्धिमान? और अयोध्या भी बुद्धि की नगरी है। स्वयं दशरथजी 'गुननिधि ग्यानी' है। फिर भगवान का दूसरा विहार है चित्रकूट। उसको हम चित्रकूट विहारी कहते हैं। और गोस्वामीजी स्वयं कहते हैं कि चित्रकूट चित्त है। जैसे अयोध्या और मिथिला बुद्धि है। तो चित्रकूट चित्त है। भगवान का तीसरा विहार है दंडकवन में। और दंडकवन को तुलसीदासजी ने मन कहा। तो दंडकवन में ठाकुरजी का विहार मन का विहार है। चित्रकूट का विहार चित्त का विहार है। अयोध्या और मिथिला का विहार बुद्धि का विहार है। और अंततोगत्वा जो मुख्य प्रयोजन था प्रभु का

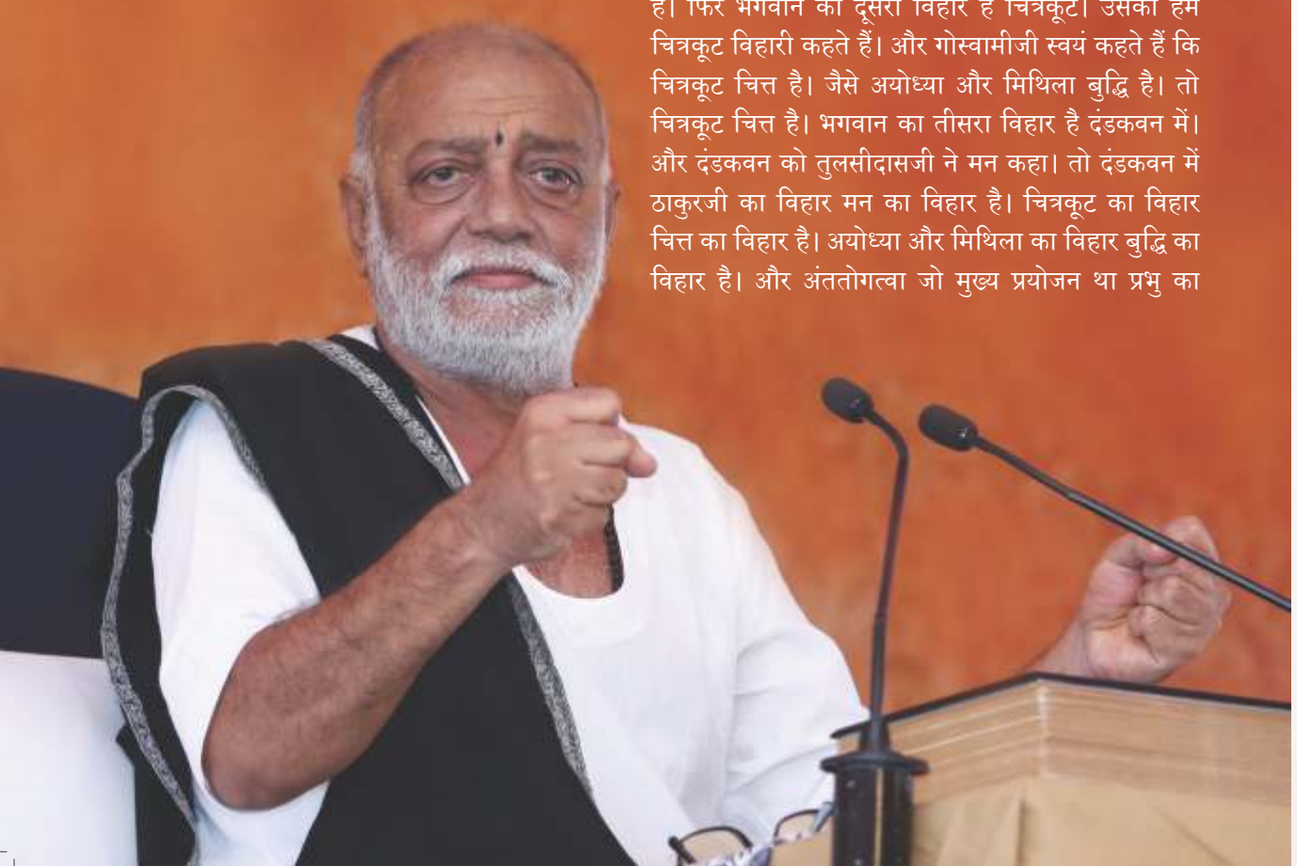

दुरित को नष्ट करना। उसके लिए प्रभु ने लंकाविहार किया। और लंका को संतों ने अहंकार कहा है। तो ये हो गया मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार।

परमात्मा करे, परमात्मा का विहार हमारी बुद्धि में हो। परमात्मा का विहार हमारे मन में हो। परमात्मा का विहार हमारे चित्त में हो। तुलसीदासजी ने लिखा है, 'जीव धर्म अहमिति अधिकाई।' अहंकार उसका स्वभाव है। लेकिन प्रभु करे, परमात्मा का विहार हमारे अहंकार में हो। तो हम धन्य हो सकते हैं। त्रेतायुग में प्रभु ने अयोध्या में विहार किया; अयोध्या विहारी कहलाये। धन्य हो गए तत्कालीन समाज; मैथिल समाज। चित्रकूट में विहार किया। सब लोग धन्य हो गए। दंडकवन में विहार किया। शूर्पणखा धन्य हुई। भले ही दंड़ित की गई लेकिन धन्य हो गई। चौदह साल खर-दूषण जैसे राक्षस धन्य हो गए। मारीच जैसा एक परमप्रेमी धन्य हो गया दंडकवन के विहार से। शबरी धन्य हुई। कबंध धन्य हुआ। जटायु धन्य हुआ। नारद के मन के समाधान के बाद नारद भी तो धन्य हुए। ये था दंडकवन का विहार।

तो मन में प्रभु का विहार हो। और मन एक छोटी-सी गली है। बुद्धि जरा चौड़ी है लेकिन वो भी गली है। मैं कहूं कि हमारे जीवन में चित्त जरा उसका प्रदेश विस्तरित है। लेकिन ये भी एक गली है। अहंकार इससे भी ज्यादा हमारा होता है। लेकिन वो भी सांकरी गली है। और तुलसीदासजी ने 'रामचरित मानस' में लिखा है-

जिन्ह बीथिन्ह बिहरहि सब भाई।
थकित होहिं सब लोग लुगाई।।

'मानस'कार संकेत करते हैं लीला के साथ-साथ तात्त्विक कि जिस गली में राम और भाई विचरण करते थे इस दृश्य को देखकर सब लोग चकित हो जाते थे! अल्लाह करे, परमात्मा करे, हमारे मन की छोटी-सी गली में राघव विहार करे तो हमारे अंदर भी पुरुष और प्रकृतिरूपी नर-नारी हैं वो स्तंभित हो जाए। प्रत्येक व्यक्ति के पास ये नर-नारी हैं। पुरुष और प्रकृति। मुश्किल ये है कि हम एकाग्र नहीं है। हम स्थिर नहीं हो पा रहे। हमारी स्थिरता तभी है जब कि हमारे मन में, हमारी बुद्धि में, हमारे चित्त में, हमारे अहंकार में प्रभु का विहार हो। उसको मारना-तोड़ना नहीं है। मन को मारना नहीं है। चित्त को खतम नहीं करना है। अहंकार से मुक्त हो जाए इसमें भी समय बरबाद नहीं करना है। इनमें हरि विहार करे, आवश्यक है। मन जो चाहे उसमें सहयोग मत करो। मन तो कहेगा कि मैं शराब पीउं। आपका अंदर बैठा पुरुष उसमें सहयोग न करे। आपकी प्रकृतिरूपी नारी उसको बल न दे। इस मन को सहयोग न दो।

एक युवक का प्रश्न, 'भरतजी जब राम को मिलने के लिए चित्रकूट जाते हैं तो शृंगबेरपुर में गुहराज मिलने गये तो भरत के स्वागत के लिए मछली क्यों ले गये?' हां, 'मानस' में उल्लेख है। तुलसी की पंक्ति आप याद करें-

मीन पीन पाठीन पुराने। भरि भरि भार कहारन्ह आने।।

तीन प्रकार की भेंट ले गये गुहराज। एक तो मीन पीन। मीन मानी मछली। पीन मानी पुष्ट, बड़ी मछली। कंदमूल, फल भी ले गये। और पशु-पक्षी भी ले गये। चिडियाघर ले गये। हाथी ले गये। घोडे ले गये। कंदमूल, फल ले गये कि यदि सत्त्व प्रधान हैं तो फल ग्रहण करेंगे। लेकिन मछली क्यों? ये प्यारा प्रश्न है। मछली का अर्थ केवल मछली न किया जाए। मछली का अर्थ तुलसीदासजी ने 'रामचरित मानस' में दिया है। एक अतुलित अतिथि अपने शृंगबेरपुर में आ रहे हैं भरतजी। उसका सन्मान करना है इस आदमी को। इसलिए मछली ले गया। मछली खाने के लिए नहीं। भरत मांसाहारी नहीं है। मछली ले जाने का कारण मछली सगुन है। ये आदमी राम का सखा है, काम का सखा नहीं है। उसने सोचा कि एक संत आ रहा है उसको सगुन कराऊं। इसीलिए वो मछली ले गया, खिलाने के लिए नहीं। मछली हमारे यहां सगुन माना गया है। और मछली को प्रेम का प्रतीक माना है। तो मछली को दिखाना माने अपना प्रेमादर दिखाना था। हमारे यहां एक मत्स्य अवतार भी हुआ है। और मत्स्यावतार जब हुआ पूरी सृष्टि डूब रही थी। मनु का प्रलय होने जा रहा था तब मत्स्यावतार ने मनु और मनु के समूह को सबको बचाया था। विरह के सागर में पूरी अयोध्या डूबी जा रही थी। आप इसको बचाने के निमित्त बने। आप मत्स्यावतार हैं। इसलिए मछली ले गया।

कहीं भी 'रामायण' की आपको समस्या पैदा हो जाए तो दो काम करना। अपने गुरु से पूछना। केवल ग्रंथों से पूछने से काम नहीं चलेगा। अथवा तो शुद्ध और स्थिर बुद्धि हो जाए तो सभी शास्त्र अपनेआप उभरते हैं। ऐसा अनुभव है। दो ही वस्तु, हमारी बुद्धि स्थिर हो और हमारी बुद्धि शुद्ध हो तब कोई शास्त्र आपको पढ़ने की जरूरत नहीं पड़ेगी। सब शास्त्र ऐसे-ऐसे प्रगट हो जायेंगे। स्वामी शरणानंदजी महाराज को किसी ने कहा कि सब कुछ अच्छे ढंग से जानने के लिए कोई पाठशाला बताओ। तो उसने कहा, एकांत ही पाठशाला है। और मौन ही पाठ है।

युवान भाई-बहन, बिना मेहनत से भी कुछ कृपा से प्राप्त करना है तो एकांत में बैठो और मौन का स्वाध्याय करो। गुरुकृपा से अनुभव में यही आता है कि जब आदमी की बुद्धि जितनी मात्रा में शुद्ध होती है, स्थिर होती है, इतनी मात्रा में शास्त्र अपनेआप अंदर से प्रगट होते हैं। तो भरतजी, आपको देखकर मुझे मत्स्यावतार की याद आई इसलिए मैं मछली लेकर आया। और 'मीन पीन पाठीन पुराने।' बड़ी मछली कहां रहती है? ज्यादा जल हो वहां रहती है। बड़ी मछली को जो जीवित रख सकता है उसीका नाम है जल। कौन-सा जल? 'पाठीन पुराने।' मानी जिन्होंने सही अर्थ में पुराणों का पठन किया है उसको पता है वो जल है गंगा। जिसके भूरीशः जल प्रवाह में ये जीवित रहती है। 'भरि भरि भार कहारन्ह आने।' ये तो गंगाजल की कांवड ले ले के आये थे भरत का सन्मान करने के लिए। मछली है ही कहां यहां? तो कई अर्थ हो सकते हैं साहब! तो भरत मांसाहारी नहीं है। मांसाहार करे वो तमोगुणी होता है। पशु-पक्षी के साथ ज्यादा खिलवाड करे मृगया करे वो रजोगुणी माना जाता है। फल-फूल खाए वो सत्त्वगुणी है। तुलसी का शास्त्र अंतिम शास्त्र है; उसको पढ़ो। आज का प्रमाण तो जगत में तुलसी से ही लेना पड़ेगा।

तो मन को सहयोग न करो। मन एक छोटी गली है। प्रभु करे, इसमें राम विहार करे। मन में परमात्मा का प्रवेश हो जाए तो हमारा मन धन्य हो जाएगा। और ये है दंडकवन विहार। हमारी बुद्धि में परमात्मा का प्रवेश हो जाए। भगवान हमारी बुद्धि में विहार करे। तो जो बुद्धि हमें आज-कल बंधन में डाले जा रही है। जो बुद्धि एकदम कुतर्क से भरी हो गयी है; तो ये बुद्धि कुमति से सुमित हो जाएगी। चित्त जो निरंतर विक्षेपग्रस्त रहता है। ऐसे चित्त में चित्रकूट विहारी बनकर प्रभु विहार करे तो हमारा चित्त बहुत निरोध की ओर जाएगा। चित्त की वृत्तियां हमें एक जगह रख लेगी। और अहंकार को भी तोड़ना-मिटाना इसमें समय बरबाद न करे। इसमें हरि का विहार हो जाए। तो परमात्मा मन के विहारी बन जाए; बुद्धि के विहारी बन जाए; चित्त के विहारी बन जाए; अहंकार के विहारी बन जाए तो हमारा फायदा होगा। अंतःकरण चतुष्टय इसके माध्यम से दीक्षित हो जाएगा। तो भगवान इनमें विहार करते हैं। हम कहां विहार करते हैं? अब हमारी ओर दृष्टि करते हैं। हम जीव हैं। हमारा विहार कभी धर्म में होता है। कभी हमारा विहार अर्थ में होता है। कभी हमारा विहार काम में होता है। कभी हमारा विहार मोक्ष में होता है। ये चार पुरुषार्थ का विहार हम सबका चल रहा है। जो साधक है वो धर्म में विहार करता है। जो सिद्ध है वो मोक्ष में विहार करता है। जो विषयी है वो काम में विहार करता है। और जो बिलकुल नितांत स्वार्थी है वो केवल अर्थ में विहार करता है।

तो परमात्मा का विहार तो मंगलमय है। उसकी लीला तो अद्‌भुत है। सवाल हमारे विहार का है। और परमात्मा के विहार को देखते-देखते हम हमारे विहार की दिशा बदलें। धर्म छोड़ना नहीं, उसमें विहार करना है। अर्थ भी छोड़ना नहीं है। जरूरी है अर्थ। काम को मिटाना नहीं है। काम न हो तो जगत नहीं रहेगा। अहंकार हमारा स्वभाव है। तो करें क्या? 'रामचरित मानस' में इन चारों को धन्य करने की एक फोर्म्यूला बतायी है। जनकपुर में एक मंजर है, एक छवि है। भगवान राम-जानकी, लक्ष्मण-ऊर्मिला, भरत-मांडवी, शत्रुघ्न-श्रुतकीर्ति। तुलसी कहते हैं, चारों राजकुमारों को एक मंडप में विराजित देखकर महाराज दशरथजी बहुत प्रसन्न हैं।

मुदित अवधपति सकल सुत बधुन्ह समेत निहारी।
जनु पाए महिपाल मनि क्रियन्ह सहित फल चारि।।

फल; 'जो दायक फल चारि।' धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को

हम फल कहते हैं। लेकिन तुलसीदासजी कहते हैं, एक-एक फल उनकी क्रिया के साथ है। क्रिया के साथ फल को देखकर महाराज मुदित हुए हैं। अब मुझे और आपको ये समझना पड़ेगा रामकथा से ताकि हमारा विहार शुद्ध रहे। राम के साथ उसकी क्रिया सीता है। लक्ष्मण के साथ उसकी क्रिया ऊर्मिला है। भरत के साथ उसकी क्रिया मांडवी है। और शत्रुघ्न महाराज के साथ उसकी क्रिया श्रुतकीर्तिजी है। तुलसी बहुत गहन बातें प्रस्तुत करते हैं।

तो मेरे भाई-बहन, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। अर्थ कहा है शत्रुघ्न को। बहुत बोलना अर्थ नहीं है। मौन अर्थ है। और एक राजकुमार के रूप में शत्रुघ्न की पत्नी श्रुतकीर्ति है। तो अर्थरूपी शत्रुघ्न की क्रिया कौन? तो संतों ने बताया, सेवा। जिसके पास अर्थ हो वो क्रिया के साथ ही अर्थ हो तो धन्य है। क्रियामुक्त अर्थ की कोई कीमत नहीं। अर्थ जिसके पास हो ये सेवा करे। श्रुतिकीर्ति जैसी सेवा कोई नहीं है। मुझे कहने दो, शत्रुघ्न से भी ज्यादा महिमावंत चुप रहकर इस महिला ने प्रसिद्धि से दूर रहकर जो सेवा की है वो अर्थरूपी फल की क्रिया है। फिर धर्म। धर्म है लक्ष्मणजी। जिसका एक ही धर्म है। मैं किसी को नहीं जानता, किसीको नहीं मानता। बस, एक ही धर्म और वो राम की शरणागति, राम की सेवा। और धर्मरूपी लक्ष्मण की जो क्रिया है उसीका नाम है ऊर्मिला। और तात्त्विक रूप में एक अर्थ में धर्म की क्रिया है श्रद्धा। ऊर्मिला जीवंत साक्षात् श्रद्धा का प्रतीक है। यहां पार्वती श्रद्धा का प्रतीक है। दशरथ के पुत्र और पुत्रवधू में लक्ष्मण धर्म है और पुत्रवधू श्रद्धा है।

'काम' शब्द का अर्थ जिस रूप में हम प्रयोग करते हैं इतना ही अर्थ नहीं है। काम का अर्थ है भगवत्‌चरण में निरंतर रहने की लालसा। 'सीताराम चरण रति।' गोपियों के मन में पहले जो भी कुछ हो। लेकिन बहुत रोने के बाद जो गोपियों के मन में है वो क्या है? 'कृष्णदर्शन लालसा।' तो मेरे भाई-बहन, काम यानी परमात्मा प्राप्ति की तीव्र कामना। उसको संतों ने काम कहा है। एक तीव्र आसक्ति। वर्ना भरत को काम कहना मुश्किल हो जाए। संतों ने बिलग-बिलग रूप में दिखाया है भरत का स्वरूप। लेकिन भरत है काम; एक तीव्र प्रेम। अत्यंत प्रेम में भी व्याकुलता होती है। अत्यंत काम में भी व्याकुलता होती है। इसलिए संतों ने कहा है, भरत है काम। उसकी क्रिया का नाम है व्याकुलता। और वो है मांडवी। भरत की व्याकुलता को, भरत की तीव्रता को उसने खंडित नहीं किया। बल्कि मांडवी ने भरत की व्याकुलता को सहयोग दिया कि तुम्हारी जो तीव्र कामना है प्रभु को प्राप्त करने की इसमें मैं आपके साथ हूं। मांडवीजी भरत की विकलता में साथ देती हैं। और आखिरी सूत्र राम है ज्ञान; राम है मोक्ष; परमारथ रूप, जो कहो। मोक्ष है राम और उसकी क्रिया है सीता और भक्ति। मोक्ष की क्रिया भक्ति है। भक्ति के बिना मोक्ष कौन काम का? भक्ति के बिना मोक्ष की कोई महिमा नहीं। भक्तिमार्गी-प्रेममार्गी मोक्ष की कोई महिमा नहीं करते।

तो बाप! हमारा विहार जब अर्थ में हो, तो अर्थ के साथ उसकी क्रिया होगी सेवा की तो हमारा अर्थ विहार सिद्ध हो जाएगा। धर्म के साथ श्रद्धा हो। धर्म में प्रपंच, धर्म में बहिर् दिखावा न हो; श्रद्धा हो। हमारी तकलीफ़ क्या है कि धर्म के साथ हमारा भय है; धर्म के साथ हमारा प्रलोभन है; श्रद्धा नहीं है। प्रलोभन और भय छोड़कर करो। 'मंगल भवन अमंगल हारी।' जपो साहब! सब ग्रह अनुकूल हो जायेंगे। लेकिन भरोसा चाहिए, श्रद्धा चाहिए। हमारा धार्मिक विहार तभी सिद्ध जब हमारी सच्ची श्रद्धा हो।

तीसरा है काम। परमप्रेम के रूप में यहां काम की व्याख्या है। इसलिए वो विकलता, व्याकुलता। आदमी को परमात्मा के लिए एक छटपटाहट हो। परमतत्त्व की याद आये और नैन भर जाए। ये उसकी क्रिया के साथ हो तो हमारा काम विहार भी सफल हो। देखो, भरतजी ने काम को छोड़ा, रति को नहीं छोड़ा। ये बहुत समझना पड़ेगा। तीरथराज प्रयाग में मुझे काम नहीं चाहिए। लेकिन वो ही कहते हैं, 'जनम जनम रति।' रति तो मुझे जनम-जनम चाहिए। रति है प्रभु के विरह की व्याकुलता। एक प्रकार की व्याकुलता। क्रिया के साथ हो तो कामविहार सफल। और मोक्षविहार भक्ति के साथ हो तो मुक्ति का विहार भी सफल। तो इसी अर्थ में प्रभु का विहार तो मंगलमय है ही। हमारा जो अमंगल विहार है वो भी सार्थक हो जाएगा। इसीलिए इस प्रसंग को उठाया है-

मंगल भवन अमंगल हारी।
द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।
रूप रासि नृप अजिर बिहारी।
नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी।।

एक ओर 'विहार' शब्द को उठाकर जो पार्वती के संदर्भ में तुलसी ने पंक्ति लिखी। जानकीजी ने पार्वती की स्तुति की तब कहा कि हे भवानी, आप जगत को प्रगट करती हैं, पालन करती हैं, विलय करती हैं। विश्वविमोहिनी हैं आप। लेकिन 'स्ववस विहारिणी।' आप स्ववश विहार करती है। विलास कायम परवश होता है। जिस अर्थ में यहां विहार है वो कायम स्वतंत्र होता है। स्वतंत्र हो उसको ही विहार कहना। परतंत्र हो उसको विलास कहना। क्योंकि विलास हमें दूसरों पर आधारित रखता है। कृष्ण विलासी नहीं है, कृष्ण विहारी है। राम विलासी नहीं है, राम विहारी है। भगवान शिव विलासी नहीं है। यद्यपि दिखता है, 'करहिं बिबिध बिधि भोग बिलासा।' लेकिन तत्त्वत: ये विहारी है। जो हमारे आधीन हो वो ही विहार। जो दूसरे के हाथ में हो वो सब विलास।

तो पार्वती एक ऐसी शक्ति है जो स्ववश विहारिणी है। किसी पर आधारित नहीं है। तो वहां भी 'विहार' शब्द आया है। परमात्मा के लिए 'विहार' शब्द का प्रयोग करते हुए गोस्वामीजी 'अयोध्याकांड' में एक बहुत बड़ी समस्यापूर्ण विहार की चर्चा कर देते हैं-

सुन सुरेस रघुनाथ सुभाऊ।
निज अपराध रिसाहिं न काऊ।।
जो अपराधु भगत कर करई।
राम रोष पावक सो जरई।।
जद्यपि सम नहिं राग न रोषू।
गहहिं न पाप पूनु गुन दोषू।।
तदपि करहिं सम विषम विहारा।
भगत अभगत हृदय अनुसारा।।

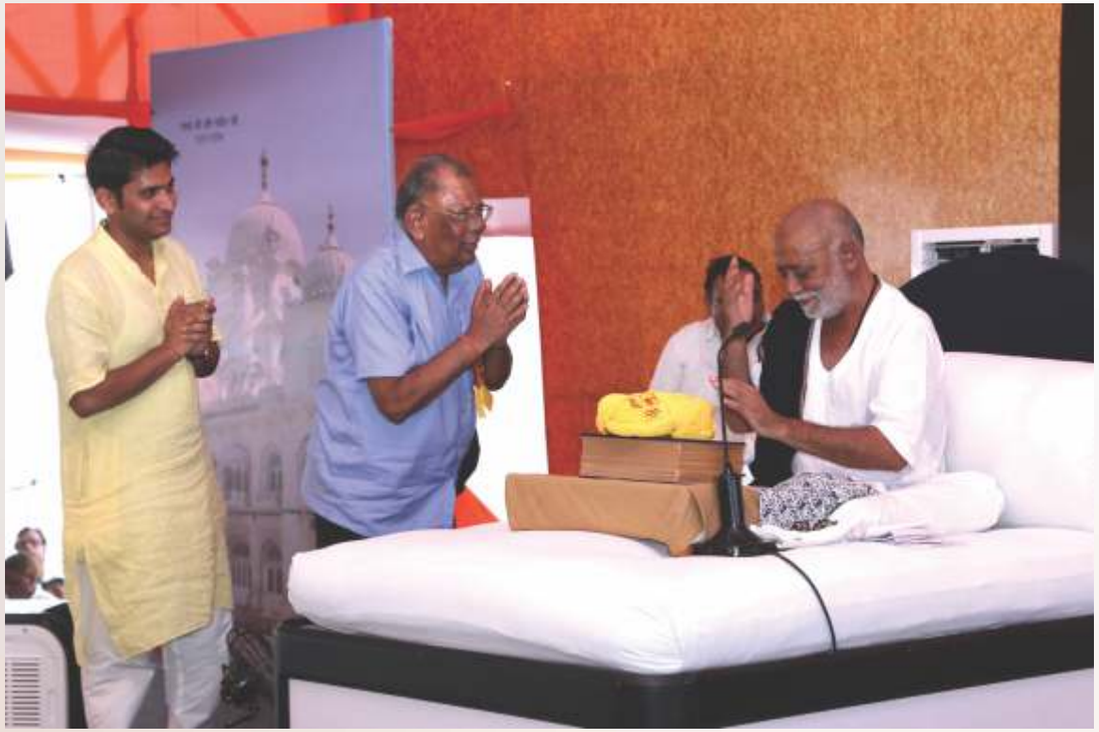

जब भरतजी चित्रकूट भगवान राम को मनाने अथवा मिलने जा रहे हैं तो देवराज इन्द्र घबरा गया। उसको लगा, ये प्रेमप्रवाह चित्रकूट पहुंचेगा तो नि:शंक राम को लौटाएगा। और भगवान राम अयोध्या वापस लौट गए तो हमारी पूरी योजना विफल हो जाएगी। रावणादि का नाश नहीं होगा। इसीलिए वो सोचता है कि भरत और राम की भेंट ही न हो। और बृहस्पति के पास गुरु के पास जाकर कहता है कि कैसा भी हो, आप कुछ करें भगवन् कि राम और भरत का मिलन न हो। तब बृहस्पति के शब्द आये कि हे देवराज इंद्र, मेरा उपदेश सुन। राम को अपने सेवक बहुत प्रिय है। और उसके सेवक का जो कोई अपराध करे तो राम के रोषाग्नि में वो जलकर भस्म हो जाता है। भगवान में न कोई राग होता है, न कोई द्वेष होता है। फिर भी परमात्मा का विहार समझ में न आये ऐसा कभी सम, कभी विषम है। क्योंकि ईश्वर परम विचित्र तत्त्व है। पता नहीं चलता। हम इतने दिनों से कह रहे हैं, 'नाचहि निज प्रतिबिंब निहारी।' और मैं कल कह रहा था कि प्रतिबिंब देखकर के डरते हैं! तो बिलकुल विचित्र वर्तन है ठाकुरजी का। एक जगह नाचते हैं, एक जगह प्रतिबिंब से डरते हैं! 'सम विषम विहारा।' अक्ल में नहीं आता! भगवान कृष्ण एक ओर प्रतिज्ञा करते हैं, एक ओर प्रतिज्ञा तोड़ते हैं। सम-विषम विहार है। पता नहीं। ये जो करे सो ठीक है ऐसा समझकर श्रद्धासे आगे बढ़ना चाहिए। बाकी इसमें हम निर्णय नहीं कर पाते। भक्त और अभक्त के हृदय की भावना के अनुसार सम-विषम विहार परमात्मा का होता है।

तो मेरे ठाकुर है अयोध्या विहारी, चित्रकूट विहारी, दंडकवन विहारी और लंका विहारी। उसकी कुछ चर्चा आपके सामने रखी। आईए, कथा का क्रम।

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार।।

ब्राह्मण के लिए भगवान का अवतार हुआ। ब्राह्मण मानी धर्म। गायों के लिए परमात्मा का अवतार हुआ। गाय मानी अर्थ। देवताओं के लिए परमात्मा अवतार हुआ। देव मानी काम। सुर-संतों के लिए प्रभु का प्रागट्य हुआ। संत मानी मोक्ष। चतुर् पुरुषार्थों के लिए मानो परमात्मा प्रगट हुए हों। ऐसी भी एक व्याख्या संतों से सुनी। मन को विशुद्ध करने के लिए परमात्मा का अवतार हुआ। बुद्धि को व्यभिचारिणी न रहे इसीलिए परमात्मा का अवतार हुआ। चित्त विक्षेपमुक्त रहे इसलिए परमात्मा का अवतार हुआ। और अहंकार संयमित हो जाए इसलिए अथवा तो अहंकार का निर्वाण हो जाए इसलिए परमात्मा का अवतार हुआ। कोई भी अर्थ ले सकते हैं। चारों चार आश्रमों के लिए परमात्मा का अवतार हुआ। ब्रह्मचारियों के लिए परमात्मा का अवतार हुआ। गृहस्थों के लिए परमात्मा का अवतार हुआ। वानप्रस्थियों के लिए भगवान का अवतार हुआ। संन्यासियों के लिए भगवान का अवतार हुआ। कई अर्थों में हम उसको देख सकते हैं।

पूरी अयोध्या में आनंद छाया हुआ है। रामजन्म की बधाईयां गाई जा रही हैं। एक महिने तक अयोध्या में दिन ही रहा। मानो रात हुई ही नहीं। मानो एक ऐसी ब्रह्मानंद अथवा तो परमानंद की अवस्था में समय बीता कि लोगों को काल का भान नहीं रहा। समय बीतने लगा। चारों भाईयों के नामकरण की बेला आई। राजा ने ज्ञानी गुरुदेव विप्र वृंद के साथ बुलाये। चारों राजकुमारों का नामकरण हो रहा है। हे राजन्, वशिष्ठजी बोले, जो बालक आनंद का सिंधु है; सुख की राशि है; जिसका नाम लेने से जगत को आराम-विराम का अनुभव होगा। इसलिए कौशल्यानंदन का नाम मैं राम रखता हूं। राम के समान वर्ण, स्वभाव, शक्लोसूरत ऐसा जो कैकेई का पुत्र है उसका नामकरण करते हुए वशिष्ठजी बोले, ये बालक का नाम लेने से विश्व का भरणपोषण होगा। इसलिए मैं इस बालक का नाम भरत रखता हूं। जिसका सुमिरन करने से शत्रुबुद्धि का नाश होगा। शत्रु नहीं, शत्रुता मिट जाएगी। दुश्मन नहीं, दुश्मनी मिट जाएगी, वैर समाप्त हो जाएगा इसलिए इस बालक का नाम मैं शत्रुघ्न रखता हूं। जो समस्त लच्छन के धाम है, राम के प्रिय है और जगत का आधार है। वशिष्ठजी ने इस बालक का नाम लक्ष्मण रखा। आराम दे वो राम। हम सबको प्रेम और त्याग से भर दे वो भरत। हमारे मन में से द्वेष और दुश्मनी निकाल दे वो शत्रुघ्न। और राम की प्रियता और जो समस्त लक्षण के धाम हैं उसका नाम लक्ष्मण रखा।

मेरी व्यासपीठ कायम इसकी चर्चा करती रही। गुरुकृपा से मुझे ऐसा लग रहा इसलिए बोलता हूं कि ये चारों भाईयों का जो नामकरण किया उसमें राममंत्र किस तरह अपनाना चाहिए उसकी कुछ विधा बताई गई है। रामनाम जपनेवालों को चाहिए कि किसी का शोषण न करें, सबका पोषण करें। रामनाम तभी सार्थक है जब रामनाम जपनेवाला किसी के प्रति दुश्मनी न रखे, वैर न रखे, शत्रुता न रखे। और रामनाम जपनेवालों का कर्तव्य है, जहां-जहां शुभ प्रवृत्ति हो, शुभ वार्ता होती हो वहां से अच्छे-अच्छे लक्षण हम ग्रहण करें। और हमारी क्षमता के अनुसार हम दूसरों के उपयोग में आयें। तो रामनाम जपनेवाले के ये तीन लक्षण होने चाहिए।

एक के बाद एक लीलाएं होती जा रही थी। कुमार अवस्था में आये तो माता-पिता ने यज्ञोपवित संस्कार करवाया। गुरु के द्वार पर गुरुकुल में विद्याप्राप्ति के लिए चारों राजकुमारों को भेजे हैं। 'मानस'कार लिखते हैं, भगवान राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न अल्पकाल में सब विद्या प्राप्त कर गए। इस शिक्षणपद्धति की पुनर्विचारणा होनी चाहिए। और ये शिक्षण पद्धति उस समय सफल रही। अल्पकाल में सब काम हो जाता था। और छात्र 'विद्या विनय निपुन गुनसीला।' बन जाता था। और जिस परमात्मा के श्वास में चारों वेद हो उसको क्या पढ़ना? लेकिन जगत को दिखाया कि पढ़ना चाहिए। चारों भाई विद्या संपन्न हो कर लौटे। जो पढ़े वो जीवन में चरितार्थ करते हैं।

अब गोस्वामीजी प्रसंग बदलते हुए लिखते हैं कि राम का ये चरित्र तो मैंने गा कर सुनाया। अब अगली कथा सुनिए। सिद्धाश्रम के बक्सर में महाराज विश्वामित्रजी अनुष्ठान करते रहते हैं। उसके यज्ञ में मारीच और सुबाहु नामक असुर बाधा डालते थे। विश्वामित्रजी मनोरथ करते-करते अयोध्या आते हैं। राजा ने निज आसन दिया। स्वागत किया। भोजन करवाया। विश्वामित्रजी से दशरथजी प्रार्थना करते हैं, आपका आगमन किस कारण हुआ है आप बताइये। और विश्वामित्र महाराज अपनी बात पेश करते हैं, मुझे असुर सता रहे हैं। राजन्, मैं आपसे याचना करने आया हूं। अनुज के साथ रघुनाथ मुझे दे दो। मेरे देश का ऋषि विश्वमंगल के लिए कोई सम्राट के पास याचना कर सकता है। लेकिन याचना संपत्ति की नहीं करता, संतति की करता है। राजा ने कई प्रस्ताव रख दिए विश्वामित्रजी के सामने कि दो अक्षरवाला राम मुझसे मांगो इससे मेरे पास जितनी-जितनी दो अक्षरवाली वस्तु है वो सब आपको दे दूं, लेकिन राम न दूं। वशिष्ठजी ने कहा, राजन्, राम को सौंप दो। आपका कर्तव्य है। कब तक उसको अपने आंगन का विहारी बनाए रखोगे? विश्वमंगल के लिए उनका विचरण, उनकी यात्रा आवश्यक है। जब गुरुदेव ने कह दिया फिर दशरथजी कुछ बोल नहीं पाए। सौंप दिए दोनों पुत्र।

दोनों भाई विश्वामित्र के संग एक बहुत बड़ी यात्रा पर निकले। प्रभु का ये बहुत बड़ा विहार यहां से आरंभ होता है। एक अर्थ में कहूं तो अवतारकार्य का श्रीगणेश हो रहा है। अखिल विश्व का कार्य करने के लिए प्रभु का ये विहार का आरंभ हुआ। पदयात्रा आगे बढ़ रही थी और ऐसे जा ही रहे थे कि इतने में ताड़का निकली। ताड़का को देखकर परमात्मा ने एक ही बाण से ताड़का का प्राण हर लिया मानी मृत्यु नहीं, मुक्ति प्रदान कर दी। और विश्वामित्रजी दोनों भाईयों को अपने आश्रम में ले आये। यज्ञ की शरूआत हुई। राम-लक्ष्मण यज्ञ की रक्षा के लिए सावधान हैं। प्रभु सुबाहु को अग्नि के बाण से जलाकर निर्वाण देते हैं। मारीच को बिना फने के बाण से दूर गिरा देते हैं। असुरों को मारकर भगवान ने मुनियों को निर्भय किया। कुछ दिन बीते। विश्वामित्रजी ने कहा कि महाराज, आप यज्ञ के लिए ही निकले हैं तो अभी कुछ यज्ञ बाकी हैं वो भी पूरा कर दो। रास्ते में एक यज्ञ बाकी है अहल्या का। उसके बाद धनुषयज्ञ की बात है। और जैसे धनुषयज्ञ की बात सुनी ही और प्रभु हर्षित हो गए। बाबा बोले-

धनुषजग्य सुनि रघुकुल नाथा।
हरषि चले मुनिबर के साथा।।
आश्रम एक दीख मग माहीं।
खग मृग जीव जंतु तहँ नाहीं।।

एक आश्रम आया जहां पशु-पक्षी कुछ नहीं। एक सन्नाटा! और मानो कोई जड़ बनकर पड़ा है, अपनी चेतना गंवा चुका है। ऐसे कोई तत्त्व को देखकर भगवान ने विश्वामित्र से जिज्ञासा की कि प्रभु, ये किसका आश्रम है? ये पत्थरदेह कौन पड़ा है यहां? विश्वामित्र महाराज राम की जिज्ञासा पर कथा सुनाते हैं, ये गौतम नारी शाप के आधीन होकर पत्थरदेह बनकर पड़ी है। आपसे ओर कोई मांग नहीं है। वो आपके चरणकमल नहीं चाहती, चरणकमल की एक रजमात्र चाहती है। आप कृपा कर दीजिए। कृपा करके इसका उद्धार करिए। ये धन्य हो जाएगी। समाज में पुनः स्थापित हो जाएगी। एक पतित के पक्ष में भारत का ऋषि खड़ा है। साधु क्रांतिकारी होता है।

मेरा राम विचारक भी है। मेरा राम उद्धारक भी है। और मेरा राम स्वीकारक भी है। यही काम कृष्ण ने भी किया। अवतार साहसी होता है। अवतार की गति अति विचित्र होती है। और विश्वामित्र की आज्ञा हुई ही और एक क्षण का भी विलंब किये बिना तुलसी भी अहल्या के पक्ष में खड़ा है। उसको जल्दी है कि जल्दी चरण छुआ दिया जाए। देर न की जाए। तुलसी भी इसी पक्ष में है। मोरारिबापू भी इसी पक्ष में है। मेरे भाई-बहन, आखिरी व्यक्ति के पक्ष में खड़ा रहना चाहिए। गौतम नारी को इन्द्र में काम देखा तो आंखें बंद हो गई थी। आज एक संत की कृपा से आंख जब खुली तो 'देखत रघुनायक' राम के दर्शन होने लगे। संत क्या करते हैं? नेत्र खोल देते हैं। जगत का पूरा दर्शन बदल गया। सन्मुख होकर हाथ जोड़कर खड़ी हो गई। और प्रेम अधीर होकर परमात्मा की स्तुति करती है। कृतकृत्य हुई है। अहल्या का प्रकरण 'मानस' का स्वतंत्र प्रकरण है। बहुत महत्त्व का प्रकरण है। दीक्षित दनकौरी की ओसमान मीर की गाई गज़ल है-

या तो कुबूल कर मेरी कमज़ोरियों के साथ।
या छोड़ दे मुझे मेरी तन्हाइयों के साथ।
लाज़िम नहीं कि हर कोई हो कामयाब ही,
जीना भी सीख लीजिए नाकामियों के साथ।

अहल्या का उद्धार हुआ। भगवान राम-लखन विश्वामित्र के संग गंगा के तट पर पहुंचे। प्रभु ने गंगा स्नान किया। और फिर वहीं से प्रभु जनकपुर पहुंचे। एक बगिया में अमराई में निवास किया। जनकजी अपने समाज के साथ विश्वामित्रजी का स्वागत करने के लिए आते हैं। इतने में राम-लक्ष्मण बाग देखने गए थे वो आ गए। प्रणाम किया। राम को देखकर जनकराज स्तंभित हो गए कि ये है कौन! मेरा मन सहज विरागी आज ये दो राजकुमारों में क्यों लुब्ध होता जा रहा है? विश्वामित्रजी से पूछने लगे कि हे भगवन्, बताइये, ये सुन्दर बालक कौन हैं? मेरे मन में ये अनुराग क्यों? मेरा मन जो ब्रह्मसुख में लीन रहता है, इस बालकों में क्यों जा रहा है? विश्वामित्रजी मन में बहुत प्रसन्न हुए कि जनकराज, ये पूरी दुनिया को प्रिय तत्त्व लगता है। ऐसा ही ये परमतत्त्व है। परिचय दिया। मेरे कहने पर धनुषयज्ञ देखने आये हैं। जनकराज बहुत प्रसन्न हुए। सबको लेकर जनक 'सुन्दर सदन' में मिथिला में विश्वामित्र आदि मुनिगण और राम-लक्ष्मण को निवास कराते हैं। महात्माओं के संग भगवान ने भोजन किया। कुछ समय जनकपुर में विश्राम किया।

भगवान राम ने अपने जीवन काल में, अवतार काल में चार स्थान में विशेष विहार किया है। एक तो भगवान अवध बिहारी हैं। अयोध्या अंतर्गत राजाधिराज के आंगन में भी आपने विहार किया। लेकिन भगवान मिथिला बिहारी भी तो हैं। मिथिलावासी संत कहते हैं कि प्रभु ने हमारे यहां विहार किया है नगरविहार, पुष्पवाटिका का विहार। आध्यात्मिकता से भरपूर विवाहमंडप का विहार। इसलिए भगवान मिथिला बिहारी भी है। फिर भगवान का दूसरा विहार है चित्रकूट। उसको हम चित्रकूट विहारी कहते हैं। भगवान का तीसरा विहार है दंडकवन में। और अंततोगत्वा जो मुख्य प्रयोजन था प्रभु का दुरित को नष्ट करना। उसके लिए प्रभु ने लंकाविहार किया।

मानस–बिहारी – ७

कलियुग में भगवान राम 'मानस-बिहारी' है

बाप! कुछ जिज्ञासाएं, 'बापू, आपने कल कहा कि चंचलता को स्थिर किया जाये। ये कैसे किया जाये?' बहुत सरल उपाय है। हरिनाम। परमात्मा का नाम। और परमात्मा के नाम से समय लगेगा। जो युगों-युगों से जनम-जनम से हमारे मन की चंचलता हमारे साथ चल रही है उसको स्थिर करने में थोड़ा समय तो लगेगा।

लंबी दूरी तय करने में वक्त तो लगता है।
नए परिंदों को उड़ने में वक्त तो लगता है।

समय तो लगेगा लेकिन मेरे अनुभव में निरंतर परमात्मा के नाम का भजन करने से धीरे-धीरे-धीरे आदमी को अन्य उपकरणों के बिना अंदर से सुख मिलता है। और फिर तुलसी का सूत्र आ जाता है-

निज सुख बिनु मन होइ कि थीरा।
परस कि होइ बिहीन समीरा।।

वैज्ञानिक सूत्र साथ-साथ चलाते हुए गोस्वामीजी कहते हैं कि हवा न हो तो कोई किसी का स्पर्श नहीं कर सकता। स्पेश में आदमी तैरता रहता है। वैसे अंदर का सुख न मिलने पर मन स्थिर नहीं हो पाता। मन की स्थिरता जब व्यक्ति को अंदर से सुख प्राप्त होने लगे। और अंदर का सुख कई प्रकार से मिलता है जरूर। मैं कोई रास्ते बंद नहीं करना चाहूंगा। लेकिन एक बहुत सरल उपाय है हरिनाम। प्रभु का नाम। लेकिन गोस्वामीजी तो कहते हैं कि मेरे गुरु ने तो मुझे राजमार्ग दिखा दिया।

बिस्वास एक राम-नामको।
मानत नहिं परतीति अनत ऐसोइ सुभाव मन बामको।।

मेरा इतना ही कहना कि भैया, मेरा अनुभव तो ये है भगवन् नाम-स्मरण। परमात्मा का गीत गाओ-

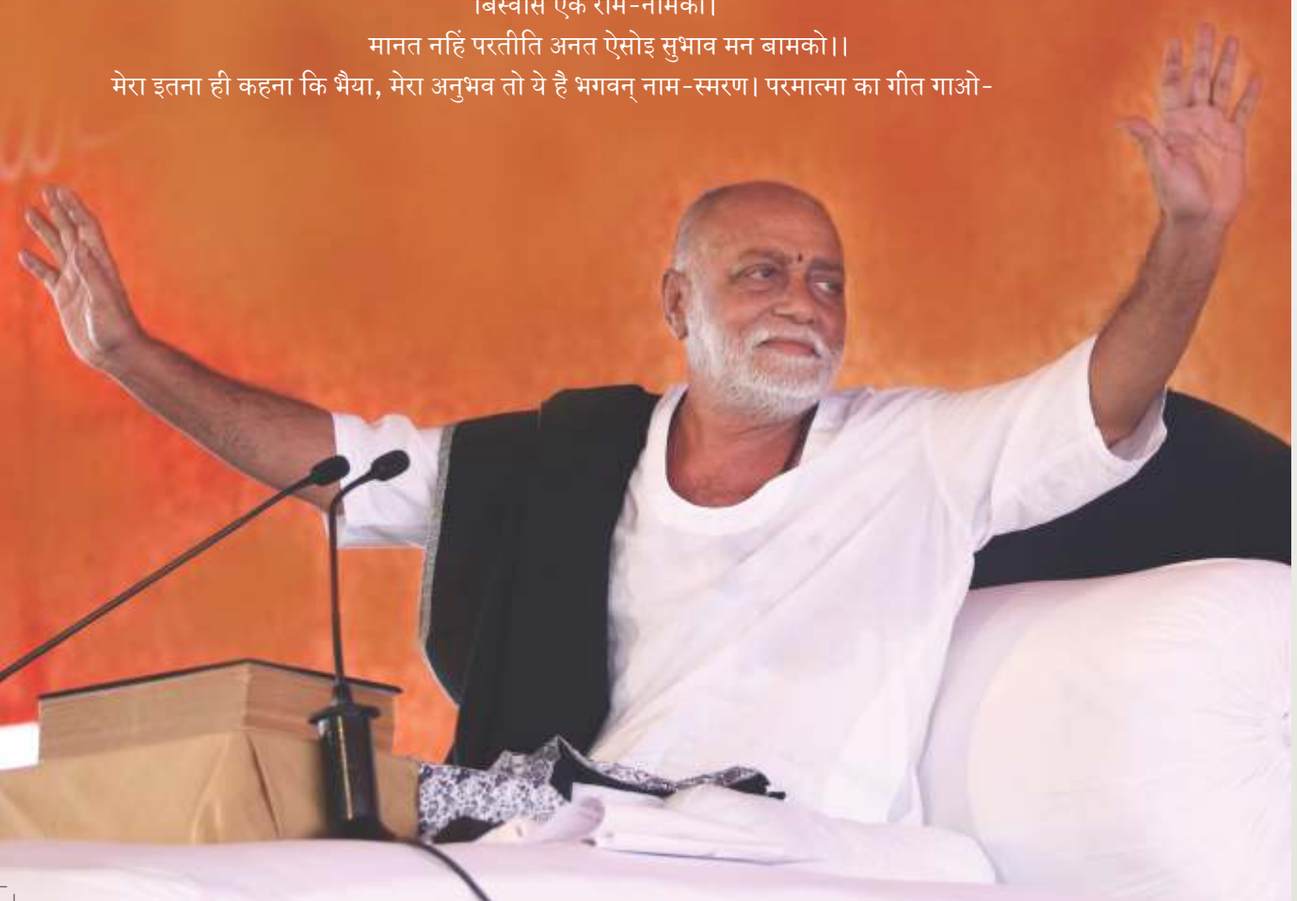

रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि।
संतत सुनिअ रामगुन ग्रामहि।।
एहिं कलिकाल न साधन दूजा।
जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा।।

और

जासु पतित पावन बड़ बाना।

जिसका नाम पतितपावन है। तुलसी भी अपने मन को वही सीख देते हैं कि-

पाई न केहिं गति पतित पावन राम भजि सुनु सठ मना।

हे सठ मन, तू राम भज। सुख मिलेगा। सुख मिलते ही तेरा चांचल्य मिटेगा। सीधा-सादा जवाब ये है। एक और बात, रामकथा जगानेवाली वस्तु है मानी होश में ला देती है। केवल स्थूल रूप में जागने की बात नहीं है। जागने की व्याख्या ओलरेडी 'मानस' ने दी है-

जानिअ तबहिं जीव जग जागा।
जब सब बिषय बिलास बिरागा।।

आध्यात्मिक दृष्टि से जीव तभी जाग गया माना जाता है कि जब विषयों के विलास से धीरे-धीरे वैराग आने लगे। विषय के विलास से विराग आने लगे तब जीव जागा।

एक श्रोता की ओर बात, 'मैं अभाव से उतना नहीं जितना स्वभाव से दुःखी हूं। मैं थक गया हूं। बापू, क्या करूं? प्लीज़ कुछ कहें।' यार! स्वभाव से जो दुःखी है उसको तो सुखी करना जरा मुश्किल है। क्योंकि 'मानस' का सूत्र है। हर जगह 'मानस' मिलेगा आपको। कोई ऐसा आपका प्रश्न नहीं होगा जिसके जवाब में 'रामचरित मानस' उत्तर लेकर खड़ा न हो। केवल हमारी आंखें खुलनी चाहिए।

खलउ करहिं भल पाइ सुसंगू।
मिटई न मलिन सुभाउ अभंगू।।

स्वभाव की मुश्किल है। स्वभाव का एक मात्र उपाय है, जीव सत्संग में जाए। धीरे-धीरे 'सठ सुधरहिं सत संगति पाई।' यद्यपि बहुत कठिन है। खल को कुछ समय के लिए सत्संग सुधार देता है। लेकिन उसका स्वभाव मूल में मिटाना मुश्किल है। लेकिन फिर भी भगवान कृष्ण ने कालिय नाग को काबू में लेकर फिर उसको जहां भेज दिया। ये पूरी भागवती कथा का अर्थ है तेरे स्वभाव को मैं भी नहीं बदल पाऊंगा। जब भी बदल पायेंगे तो संत ही बदल पायेंगे। इसलिए तू सत्संग में जा। एक मात्र उपाय है सत्संग।

चार प्रकार के दुःख है-काल, कर्म, गुण और सुभाव। कई लोग काल से दुःखी है। कई लोग गुण के कारण। गुण मानी बंधन। यहां गुण मानी रस्सी। रजोगुण, तमोगुण ये सब बंधन है। इससे दुःखी है। कोई आदमी कर्म से दुःखी है। और ज्यादा से ज्यादा हम दुःखी अपने स्वभाव से होते हैं। साधना का नियम ऐसा है कि जिसका बहुत अनुसंधान किया जाए उसका स्वभाव हमारे में धीरे-धीरे आने लगता है। ये साधना का नियम है। ठाकुर रामकृष्ण परमहंस हनुमानजी की साधना में इतने डूबे तो उनके शरीर में परिवर्तन होने लगा। और कहते हैं, उनकी कमर में पीछे थोड़ा-सा पूंछ का आकार बनने लगा था! दो अनुभव ठाकुर रामकृष्ण परमहंस के वो जब सखी भाव में डूब गए। तो इस साधनापद्धति में वो इतने इन्वोल्व हो गए कि कहते हैं कि ठाकुर रामकृष्णदेव को नारी के कुछ विशेष धर्म जो होते हैं वो लागू होने लगे। राम की निरंतर जो उपासना करता है उसमें राम के लक्षण आने लगते हैं। राम का सुभाव आने लगता है। तो जिसका अनुसंधान हम बहुत करते हैं तो धीरे-धीरे वो हमारे में ऊतरता है। तो सत्संग से फायदा होता है। तुलसीदासजी 'विनयपत्रिका' में एक पद लिखते हैं। भगवान की कृपा हो तो संत का संग मिले। संत का संग मिले तो धीरे-धीरे स्वभाव सुधरे अथवा तो ऐसे स्वभाव की प्यास जगे।

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।
श्री रघुवीर-कृपालु-कृपातें संत-सुभाव गहौंगो।।

मेरी इस करीब छप्पन साल की रामकथा की यात्रा में मैं देख पाया हूं कि रामकथा के सत्संग में आनेवाले बड़े-बड़े आक्रमक लोग के स्वभाव में भी परिवर्तन आया है। मुझे लगता है ये गोस्वामीजी का मिशन सफल हो रहा है। तो स्वभाव में मेरी समझ में सत्संग से धीरे-धीरे फ़र्क होता है। इसीलिए तुलसी 'विनय' में कहते हैं कि आपकी कृपा से प्रभु, मुझे कोई संत मिल जाए और संत के पास बैठकर मैं देखूं और उनका स्वभाव धीरे-धीरे मेरे में ग्रहण करूं। संत का स्वभाव क्या होता है?

परिहरि देह-जनित चिंता, दु:ख-सुख समबुद्धि सहौंगो।।
संत के स्वभाव के तो कितने-कितने लक्षण होते हैं!

एक ओर श्रोता का प्रश्न, 'पंचतत्त्व की तरह ही क्या प्रेम भी कोई तत्त्व है?' प्रेम तो बच्चे, परमतत्त्व है। बहुत बड़ा तत्त्व है प्रेम। पंचतत्त्व तो स्थूल है, ध्यान देना। और विज्ञान की परिभाषा में और शास्त्र की परिभाषा में दोनों में पांचों तत्त्व जड़ हैं। ये पानी भले प्रवाहित होता है लेकिन मूलत: जड़ है। अग्नि जड़ है। पृथ्वी जड़ है। आकाश जड़ है। वायु जड़ है। जड़ उसको कहते हैं जिसमें विवेक की कमी है। 'गगन समीर अनल जल धरनी।' समुद्र ने भगवान से कहा, प्रभु, हमारा कर्तव्य जड़ है। प्रेम जड़ नहीं है। प्रेम में थोड़ी जड़ता जरूर आती है। लेकिन प्रेम जड़ नहीं है। प्रेम तत्त्व ही नहीं बच्चे, प्रेम परमतत्त्व है। 'मानस'-

तत्व प्रेम कर सम अरु तोरा।
जानत प्रिया एकु मनु मोरा।।

'रामचरित मानस' में ग्यारह बार 'प्रिया' शब्द आया है। एक बार 'मानस-प्रिया' कथा करनी है। प्रिया मानी प्रभु की प्रिया, भक्ति। प्रभु की ऊर्जा; प्रभु की शक्ति, प्रभु की क्षमा। परमात्मा का आह्लादित जो स्वरूप है। और जानकी भगवान की प्रिया और राधा कृष्ण की प्रिया। लेकिन दोनों में जमीन आसमां का अंतर है। राधाजी जिस प्रकार से परमात्मा से प्रणय करती है वो अनुकरणीय नहीं है और आदर्श भी नहीं बन सकता। लेकिन मेरी माँ जानकी जिस तरह प्रणय करती है वो अनुकरण करने योग्य है। और प्रत्येक नारी का आदर्श भी बन सकता है। क्यों कृष्णप्रेमी संतों ने कहा कि कुंज गलिन में मैं गया भगवान को खोजते-खोजते तो मैंने देखा, 'देख्यो पलोटत राधिका पायन।' राधिकाजी आराम से सोई हैं और कृष्ण उसका पैर दबाता है। ये आदर्श नहीं बन सकता ये दृश्य। लेकिन जानकी 'पांव पलोटहिं सब निसि दासी।' ठाकुर के पास में पैर नहीं दबवाऊंगी। मैं उनका पैर दबाऊं। ये आदर्श है। राधा राधा है। वो प्रेम की बिलग दुनिया है साहब, जहां गोविंद उसके पैर दबाये। लेकिन 'मानस' अपनी अदा से काम करता है। पृथ्वी पर तरु और घास की पथारी करके ये तुम्हारी दासी आपका पैर दबाएगी, राघव।

तो मेरे भाई-बहन, प्रेम एक ऐसा परमतत्त्व है। उसमें थोड़ी जड़ता जरूर हो जाती है। शिकायतें करना, गिला करना, रुठना। ये सब बिलग-बिलग भाव का दर्शन शास्त्रकारों ने दिए हैं। 'श्रीमद् भागवतजी' लो; आप 'रास पंचाध्यायी' लो साहब! परमप्रेम तत्त्व क्या है उसका पता लगेगा। हमारे नरसिंह मेहता ने गाया-

प्रेमरस पाने तुं मोरना पिच्छघर,
तत्त्वनुं टूंपणुं तुच्छ लागे।

हे कृष्ण, मुझे प्रेमरस पिला। तत्त्व का ये टुपना बिलकुल तुच्छ लगता है। परमतत्त्व है प्रेम। पंचम पुरुषार्थ है प्रेम। इसलिए मैं रामकथा को प्रेमयज्ञ कहता हूं। एक दूसरे को प्यार करो साहब! कटु सत्य उसको कहते हैं कि इर्ष्या से निंदा से और द्वेष से बोला गया सत्य कटु माना जाता है। तो इन्कार न करो, उदासीन हो जाओ। क्योंकि मेरे गोस्वामीजी ने मना कर दिया-

सुरसरि जल कृत बारुनि जाना।

गंगाजल से शराब बनी हो तो भी पीने की मना है। वैसे कोई सत्य ईर्ष्या से आ जाये, उदासीन हो जाओ। निंदा से कोई सत्य आ जाये, वहां उदास हो जाओ। तुम्हारी और हमारी आलोचना द्वेषमूलक हो तो माईंड न करो, संदेशमूलक हो तो कुबूल कर लो।

कुछ तो लोग कहेंगे लोगों का काम है कहना।
छोड़ो बेकार की बातों को कहीं बीत न जाए रैना।।

मेरे भाई-बहन, प्रेम है परमतत्त्व। तो काम, क्रोध, लोभ ये तो जीवन में न हो तो तो बहुत अच्छी बात है। लेकिन जरूरत भी है हम जैसों के जीवन में। लेकिन मेरे श्रोता कम से कम इतना करें किसी की ईर्ष्या न करे। मेरी दक्षिणा मात्र इतनी है। हम क्यों एक-दूसरों की इर्ष्या करें? हम क्यों द्वेष करें? हम और आप क्यों निंदा करें? और प्रेम आ जाता है, भक्ति आ जाती है, गुरुकृपा आ जाती है तो ऐसा स्वभाव धीरे-धीरे मिटने लगता है।

'बापू, आप हंमेशा कहते हैं कि हनुमानजी शुद्ध भी है और सिद्ध भी है। शुद्ध और सिद्ध में क्या अंतर है? बापू, कुछ कहें।' सिद्ध और शुद्ध दोनों अच्छी बात हैं। वो सिद्ध तो ऐसे हैं कि 'जो यह पढ़ै हनुमान चालीसा। होय सिद्धि साखी गौरीसा।।' ऐसे सिद्ध हैं। जो स्वयं सिद्ध है,

दूसरों को सिद्ध कर सकता है। मेरी रुचि जरूर इतनी कि सिद्धि से भी शुद्धि ज्यादा अच्छी वस्तु है। हम शुद्ध रहे। क्योंकि हमारा मूल रूप निर्मल है। 'चेतन अमल सहज सुख रासी।' हमारा शुद्ध स्वरूप वो आवरण में आ गया। सिद्ध का कभी पतन भी हो सकता है। शुद्ध का कभी पतन नहीं होता। आप कहेंगे कि हनुमानजी सिद्ध है तो उसका पतन हुआ? हां, बिना फने का बाण भरत ने मारा। और संजीवनी लेकर आ रहे थे हनुमानजी। गिरा दिया गए नंदिग्राम में। यद्यपि हनुमानजी को कुछ नहीं होता। लेकिन कई सिद्ध गिर सकते हैं। शुद्ध को कुछ मुश्किल नहीं होती।

मेरे एक श्रोता में मुझे आज लिखा है, 'बापू, भगवान श्री राम के चारों विहार में कोई न कोई निमित्त बना है।' उसने प्रमाण देकर लिखा है। मैं बहुत खुश हूं। अयोध्या विहार में गुरु वशिष्ठ का प्रसाद निमित्त बना।

धरहु धीर होइहहिं सुत चारी।
त्रिभुवन बिदित भगत भयहारी।।

भगवान वशिष्ठ की कृपा अवधविहारी राघव के लिए कारण बनी। ये बड़ी प्यारी चीज़ मेरे श्रोता ने एड की है। लेकिन मेरे इस श्रोता को मैं ये भी कहना चाहूं कि इनमें तीन निमित्त बने हैं। ये भी मत भूलिए। दो और है। राम को अवधबिहारी बनाने में एक कारण है दशरथ की जिज्ञासा। 'अथातो ब्रह्म जिज्ञासा।' यदि वो जिज्ञासा नहीं करता तो भी बात रुक जाती। और 'रामचरित मानस' में अवतार के जो कुछ कारण बताये हैं इनमें से सबसे बड़ा निमित्त है अवधबिहारी बनाने में राम को नारद प्रकरण। 'नारद बचन सत्य सब करिहहूं।' नारद ने जो-जो शाप में कहा वो मेरे ठाकुर ने पकड़-पकड़कर के उसको सिद्ध किया। नारद बहुत प्यारे हैं। इसीलिए तो नारदवाला अवतार का कारण अवधविहारी का एक निमित्त है। दूसरा-

एक बार भूपति मन माहीं।
भै गलानि मोरें सुत नाहीं।।
गुर गृह गयउ तुरत महिपाला।

और फिर गुरु प्रसाद। यज्ञ विधा के द्वारा गुरु का प्रसाद अवधबिहारी बनाने के लिए निमित्त बन गया। बड़ी प्यारी बात है। दूसरा भगवान का मिथिलाविहार उसमें निमित्त बने महामुनि विश्वामित्र।

धनुषजग्य सुनि रघुकुल नाथा।
हरषि चले मुनिबर के साथा।।

धनुषयज्ञ की बात विश्वामित्र ने कही और प्रभु का मिथिला की ओर प्रस्थान हो गया। बिलकुल सही है। करीब-करीब सब महात्मा निमित्त बने हैं प्रभु को विहारी बनाने में। और फिर चित्रकूट विहार के लिए वाल्मीकि-

चित्रकूट गिरि करहू निवासा।

वहां वाल्मीकिजी निमित्त बने हैं कि राघव, आप चित्रकूट में जाइए और गिरिवर को गौरव प्रदान कीजिए। कामदगिरि को बहुत प्रतिष्ठा दीजिए। आप चित्रकूट निवास करो। वहां

वाल्मीकि निमित्त बने चित्रकूट विहारी के लिए। पंचवटी विहार के लिए मुनि अगस्त्यजी निमित्त बन गये-

दंडक बन पुनीत प्रभु करहू।
उग्र साप मुनिबर कर हरहू।।

और लंकाविहार में श्री हनुमानजी की सूचना निमित्त बन गई।

रिपुहि जीति आनिबी जानकी।

महाराज, हम जाएं। रिपु को जीत लें और जानकी को लौटा लायें। तो परमात्मा के इन विहार के लिए ये निमित्त बने हैं। ये बात मुझे अच्छी लगी इसलिए मैं इस पर गया। मेरे तुलसी श्रोता को प्रथम स्थान देते हैं। 'श्रोता बकता ग्याननिधि कथा राम कै गूढ़।'

आईये, थोड़ा ओर दर्शन करें 'मानस-बिहारी' का। हमारी कालगणना, हमारा युगबोध जो है, युगों की हमारी जो समझ है अथवा तो ये काल के सब परिमाण है ये सब परमात्मा के छोटे-बड़े बाण हैं ऐसा गोस्वामीजी का मानना है। तो हमारी गणना के मुताबिक चार युग हैं। सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और जिस युग में हम जी रहे हैं, कलियुग। परमात्मा चारों युग में बिहारी बने हैं। सतजुग में भगवान 'बैकुंठ मंदिर बिहारी' तुलसी कहते हैं। मैं आपको बुला दूं तुलसी का ये पद-

दनुजसूदन दयासिंधु, दंभापहन दहन दुर्दोष, दर्पापहर्त्ता।
दुष्टतादमन, दमभवन, दुखौघहर दुर्ग दुर्वासना नाश कर्त्ता।
वरद, वनदाभ, वागीश, विश्वातमा,
विरज, वैकुंठ-मंदिर-विहारी।
व्यापक व्योम, वंदारु, वामन, विभो,
ब्रह्मविद, ब्रह्म, चिंतापहारी।

सतजुग में प्रभु ने वैकुंठ विहार किया है। तीन लोगों के साथ में प्रभु का वैकुंठ विहार है। विलास कहीं नहीं है। एक विहार है निरंतर लक्ष्मी के साथ। परमात्मा लक्ष्मी विहारी है। दूसरा विहार है भगवान का वैकुंठ में गरुड विहारी है। यद्यपि वो गरुड को लेकर के वो धरती पर भी आते हैं। तो वैकुंठ में तो निरंतर शाश्वत विहार है 'लक्ष्मीकान्तं' के रूप में। गरुड विहार; लक्ष्मी विहार। और सनतकुमार रोज आया जाया करते थे। इवन नारदजी का भी आना-जाना वैकुंठ में बना रहता था। और संतों के साथ परमात्मा का बैठना-उठना; मर्त्यलोक की माहिती प्राप्त करना; मर्त्यलोक की समस्याओं का जवाब देकर के सृष्टि के कल्याण के लिए फिर संतों को भेजना। ये एक संतों के साथ का विहार भी वैकुंठ में रहता है। तो तुलसी ने जब वैकुंठ मंदिर विहारी कहा तो सतजुग में प्रभु वैकुंठ विहारी है।

त्रेतायुग में परमात्मा अवधविहारी है। 'द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।' जिसकी कथा हम गा रहे हैं। द्वापरयुग में भगवान विहारी है 'वृंदावन बिहारी।' ये भी बार-बार संदर्भ में हम बोले। लेकिन कलियुग में भगवान किसके विहारी हैं? कलियुग में परमात्मा 'मानस-बिहारी' है। इसलिए मैंने 'मानस-बिहारी' प्रसंग उठाया। क्योंकि हम सब कलियुग में हैं। कलियुग में कथा चल रही है। और सब्जेक्ट है 'मानस-बिहारी।' और उसके ओर संदर्भ भी हैं।

'मानस' में परमात्मा की चार वस्तु का वर्णन है- नाम, रूप, लीला और धाम। त्रेतायुग में वाल्मीकिजी ने शतकोटि रामायण की रचना की। ये इतिहास प्रसिद्ध घटना है। उसका आलेखन विश्वामित्रजी ने किया। 'चरितं रघुनाथस्य शतकोटि प्रविस्तरम्।' 'रामरक्षा स्तोत्र' में विश्वामित्रजी का ये वक्तव्य है कि वाल्मीकि ने त्रेतायुग में शतकोटि रामायण की रचना की। तुलसी ने जो संपादन किया 'रामचरित मानस' का उसमें शतकोटि रामायणों का सार है। गुरुकृपा से जितना खोजा जाए। एक जिंदगी कम है। मैं बहुत जिम्मेवारी के साथ कहना चाहूंगा कि केवल 'रामचरित मानस' गुरुकृपा से जो प्राप्त करता है उसको फिर इधर-उधर बहुत घूमने की जरूरत नहीं पड़ेगी। और कलियुग में मेरा राघव 'मानस-विहारी' है। आज राम अयोध्या में नहीं रहते, 'मानस' में विहार करते हैं। आज के काल में जो प्रवाह चल रहा है विश्व में उसमें ठाकुर 'मानस-विहारी' है। और तुलसी की मानसी कथा 'मानस-विहारी' की जो कथा हम लेकर बैठे हैं उसमें चार वस्तु होती हैं-नाम, रूप, लीला और धाम।

तो 'मानस-विहारी' में भगवान नामविहारी हैं। भगवान रूपविहारी हैं। भगवान लीलाविहारी हैं। और भगवान धामविहारी है। चारों में परमात्मा विहार करते हैं।

हम और आप जब राम नाम लेते हैं तब केवल रामनाम नहीं लेते हैं। नाम के साथ नामी भी विहार करता है। और उसीका पूरा संचार हमारी बोडी में होता है। क्योंकि ये नामविहारी है। हम रामनाम लेते हैं तो जैसी जिसकी साधना, धीरे-धीरे रूप भी प्रगट होने लगता है। क्योंकि प्रभु रूप विहारी है। और हम कलियुग में जब उसकी लीला का गायन करें या तो श्रवण करें तो हमें भी कभी न कभी बिजली कौंध जाती होगी। हम सबको लगे कि नहीं, हमारे सामने लीला घटित हो रही है। हमारे सामने मानो लीला विहार चल रहा है। प्रसंग प्रत्यक्ष बनने लगता है। और भगवान की कथा में धाम विहारी भी बन जाते हैं। हमारे लिए 'रामायण' ही नाम है। हमारे लिए 'मानस' ही रूप है। हमारे लिए 'मानस' ही लीला है। और हमारे लिए 'मानस' ही धाम है। और कोई वस्तु की जरूरत नहीं। तो कलियुग में भगवान राम 'मानस-विहारी' है। ऐसे चारों युगों में परमात्मा का विहार। हम कलियुग में कथा कह रहे हैं इसीलिए 'मानस-बिहारी।'

मंगल भवन अमंगल हारी।
द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।
जन मन मंजु कंज मधुकर से।
जीह जसोमति हरि हलधर से।।

जब हम और आप राम का नाम ले तब समझना, प्रभु हमारी जीभ पर विहार कर रहे हैं। जीभ है जशोदा। और यशोदा के अंक में जैसे बलराम और कृष्ण खेलते रहते हैं। वैसे जब प्रभु का नाम लें तब हमारी जीभ के विहारी बनते हैं। भगवान की लीला सुने तो भगवान हमारे कान के द्वारा लीला कान में विहार कर के हृदय में प्रवेश करते हैं। वहां कान से उसकी लीला शुरू होती है। भगवान राम का हम दर्शन करें, रूप की झांकी करें, कोई चित्रजी, कोई मूर्ति अथवा तो 'मानस' में अंकित रूप की हम झांकी करें तो भगवान हमारे नेत्र विहारी बन जाते हैं। नेत्रों के थ्रू हमारे हृदय में प्रवेश करते हैं। और धामविहारी। जब हम एक जगह बैठकर 'मानस' का पारायण करें गाकर संगीत के साथ या तो गुनगुनाते, उसी समय भगवान उसी जगह पर विहार करते हैं। उसको कहते हैं धामविहारी। ये इतनी जगह एक धाम बन जाता है।

कल प्रभु राम ने अनुज लक्ष्मण संग बाबा विश्वामित्र की छाया में मुनिगणों के संग जनकपुर में 'सुंदरसदन' में विश्राम किया। दोपहर का भोजन किया। और सायंकाल हुआ तब मिथिला में बात तो फैल गई थी कि बाबा कौशिक के संग दो राजकुमार आये हैं। बहुत सुन्दर हैं। तो 'सुंदरसदन' के फाटक पर, दरवाजे पर राम की उम्र के लड़कों की भीड़ लगी। वो अंदर जाना चाहते हैं राम को मिलने के लिए लेकिन वहां कौन जाने दे? रक्षक लोग मना करते हैं। लक्ष्मणजी ने जान लिया क्योंकि लक्ष्मणजी जीवाचार्य हैं, जीव के आचार्य है। जीव की दिल की पीड़ा वो समझते हैं कि ये लड़के प्रभु का दर्शन चाहते हैं। कोई उपाय करूं वो तो अंदर नहीं आ सकेंगे। लेकिन भगवान को कैसे भी मैं बाहर ले जाऊं। ताकि ये लोग परमात्मा को पा सकें। आचार्य का यही कर्तव्य होता है। किसी धर्म मर्यादा के कारण कुछ लोग अंदर न आ सकते हो तो आचार्य का कर्तव्य है, मंदिर में रहे ठाकुर को बाहर ले जाए। हमारे यहां मूर्तियों में दो हैं। एक स्थिर मूर्ति होती है और एक विहार मूर्ति होती है कि प्रसंगों में उत्सव मूर्तियां होती हैं। उसको बाहर लेकर के हम उसको घुमाते हैं।

सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और जिस युग में हम जी रहे हैं, कलियुग। परमात्मा चारों युग में बिहारी बने हैं। सतजुग में भगवान 'बैकुंठ मंदिर बिहारी' हैं। सतजुग में प्रभु ने वैकुंठ विहार किया है। त्रेतायुग में परमात्मा अवधविहारी है। 'द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।' द्वापरयुग में भगवान विहारी है, 'वृंदावन बिहारी।' लेकिन कलियुग में भगवान किसके विहारी हैं? कलियुग में परमात्मा 'मानस-बिहारी' है। कलियुग में मेरा राघव 'मानस-विहारी' है। आज राम अयोध्या में नहीं रहते, 'मानस' में विहार करते हैं। आज के काल में जो प्रवाह चल रहा है विश्व में उसमें ठाकुर 'मानस-विहारी' है।

लक्ष्मणजी के मन में ये विचार आया कि कोई ऐसी घटना घटे कि मैं प्रभु को बाहर ले चलूं ताकि ये लोग भगवान का दर्शन कर सके। और लक्ष्मण के मन की गति भगवान राम जान गए। और रामजी ने विश्वामित्रजी से प्रस्ताव किया कि हे भगवन्, लक्ष्मण नगर देखना चाहते हैं। आप आज्ञा करें तो मैं जाऊं और लक्ष्मण को नगर दिखा लाऊं। बाबा ने आज्ञा दे दी। जनकपुर के युवक लोग भगवान को घेर लेते हैं और भगवान को जनकपुरी दिखाने लगते हैं। प्रभु जा रहे हैं। पूरी नगरी घर से बाहर आ गई है। सब प्रभु को देखने में डूब चुके हैं।

मैंने सुना कि तीन प्रकार के दर्शक मिथिला में रामदर्शन कर रहे हैं। एक तो बड़े बुज़ुर्ग जो राजमार्ग है उसके किनारे पर खड़े-खड़े राम को देख रहे हैं। कुछ बोलते नहीं है। बस देखते हैं। सोचते रहते हैं। मिथिला के जो बालक हैं वो भगवान के साथ-साथ भगवान का हाथ पकड़े, भगवान को दिशा निर्देश करे। सब दिखाते हैं। और तीसरी श्रेणी थी जनकपुरी की महिलाओं की मैथिलि महिलाओं की जो अपने झरोखों से राजकुमारों का दर्शन कर रही थी। संतों से मैंने सुना कि परमात्मा के दर्शन करनेवाले तीन प्रकार के। बड़े बुज़ुर्ग वो ज्ञानी लोग थे। विचारक लोग थे। प्रबुद्ध लोग थे जो राम को देखते हैं, कुछ बोलते नहीं हैं न मुस्कुराते हैं। आकर्षित जरूर होते हैं लेकिन चेहरे पर कोई प्रतिभाव नहीं आने देते। क्योंकि बौद्धिक घमंड परेशान कर रहा! तो ज्ञान देख लेता है परमात्मा को दूर से। राम की उम्र के बालक जो आरपार हैं। निखालस हैं। निर्दंभ जिसका चित्त है। ऐसे बालक भगवान के हाथ पकड़ करके प्रभु के श्रीअंग का स्पर्श करके प्रभु का सामीप्य सान्निध्य महसूस कर रहे हैं। रही महिलाएं जो झरोखे से रास्ते पर चल रहे राम का दर्शन करने आई हैं। संतों से सुना, ये है भक्ति। भक्ति ऊंची होती है। ज्ञानी लोग है बड़े-बड़े पर भक्ति है ऊंचाई पर। झरोखे से झांकती है। भक्ति परमात्मा का बहुत परिचय प्राप्त कर लेती है। केवल विचारक लोग चिंतन करते रहते हैं, परिचय नहीं प्राप्त कर सकते। और आरपार जो लोग हैं, निर्दंभ निखालस है वो भगवान का सामीप्य और सांनिध्य प्राप्त कर लेते हैं। संग-संग चलनेवाले बालक अपनी रुचि के अनुसार भगवान को अपने-अपने घर में भी लिए चलते हैं। कभी-कभी बालक ज्ञानियों को हरिदर्शन करा देते हैं। कभी-कभी बालक की निर्दोषता परमात्मा को अपने घर तक ले आती है। ऐसा संभव है। परमात्मा ने मिथिला को डुबो दिया प्यार में, रूप में। इधर संध्या होने को है। भगवान ने सोचा, देर हो गई; शायद गुरु नाराज़ होंगे। इसलिए सबको प्रसन्न करके भगवान लौट रहे हैं। तुलसी कहे कि जिसके भय से भय भी भयभीत होता है ऐसा प्रभु गुरु से डरे ये जरा आश्चर्य है। 'मानस' का एक सूत्र है, 'भय बिनु होहि न प्रीति।' बहुत आलोचना होती है इस वाक्य की! ये क्या सूत्र है? इसका अर्थ है, भय के कारण किसी से प्रीत न करो। प्रलोभन के कारण किसी से प्रीत न करो। लेकिन एक बार प्रेम हो जाए तो थोड़ा भय रखना ये प्रेम का शिखर है। एक गुरु की शरण में भय से मत जाओ। लेकिन पहुंचने के बाद भय रहना चाहिए कि कोई मर्यादा न टूट जाये। कहीं साधना खंडित न हो जाए। इसलिए भगवान भी ये दिखा रहे हैं।

प्रभु लौटते हैं। विश्वामित्र महाराजजी ने संध्यावंदन किया। उसके बाद भगवान राम-लक्ष्मण गुरु के संग भोजन करते हैं। शयन का समय हुआ। विश्वामित्रजी शयन करते हैं तब राम और लक्ष्मण दोनों विश्वामित्र के चरण की सेवा करते हैं। जिनके चरण की रज पाने के लिए बड़े-बड़े योगी लोग कितनी-कितनी साधना करते हैं, वो परमात्मा गुरु के चरण की सेवा कर रहे हैं। पहले गुरु सोये। फिर राघवेन्द्र, फिर लखनजी। और जागने का क्रम बिलकुल ऊल्टा। 'उठे लखन' पहले लखन। लक्ष्मणजी सोये नहीं थे, केवल लेटे थे इसलिए उठ गए। उसका जागृति का व्रत है। ये कोई वन में ही जागे ऐसी बात नहीं। बचपन से ही जागृत पुरुष है ये। लक्ष्मणजी उठे। और फिर 'गुरु ते पहिलेहिं जगपतति जागे राम सुजान।' विवेकी राम गुरु से पहले जागे। फिर गुरु जागे। अपना-अपना नित्य कर्म शुरू हुआ। भगवान राम ने गुरु सन आज्ञा मांगी कि भगवन्, आप आज्ञा करे तो मैं और लखन पुष्पवाटिका से पूजा के लिए पुष्प चुन ले आयें। और गुरु ने आज्ञा दी और दोनों भाई प्रसून लेने के लिए, फूल लेने के लिए जनक के बाग में इस वाटिका में जाते हैं।

मानस–बिहारी – ८

व्यापक कभी विहारी नहीं बन सकता, व्यक्ति ही विहारी बन सकता है

बाप! यहां सब लोग व्यास का जुठा बोलते हैं। जो भी बोला जाता है, पूर्वोक्त है। कभी न कभी कोई बोल चुका है। इस सत्य का स्वीकार करना चाहिए। कोई बात किसी से मौलिक निकल जाए तो उसको भी ये नहीं समझना चाहिए कि ये मेरी मौलिक है। कहीं अस्तित्व में दबी हुई थी। तेरे पर गुरु की कृपा कि तू खोलने में निमित्त बन गया। राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष है 'मानस' की दृष्टि में।

जनु पाए महिपाल मनी क्रियन्ह सहित फलु चारि।

ऐसा गोस्वामीजी का वक्तव्य है। गुरुकृपा से मैं कुछ कहूं, जो आपने पूछा है। बिलकुल मेरी जिम्मेवारी रहेगी। बुद्ध ने कहा, मैं जो कहूं, मेरी बात को आपकी आत्मा कुबूल करे तो ही स्वीकार करना। मैं बुद्ध परंपरा का आश्रय लेकर विहार की भूमि पर विहार में बोल रहा हूं। मैं भी यही कहूं बाप! यहां से जो कहा जाए वो मोरारिबापू ने कह दिया इसीलिए 'इति सिद्धं' नहीं होता। व्यासपीठ यदि कुछ गलत निवेदन कर दे तो पूरे समाज में एक गलत अर्थ फैल सकता है। इसलिए आप अपनी बुद्धि से स्वीकार करना। वर्ना सुनो वो भी बहुत है। बाप! मैं इतना ही कहूं कि राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न क्या है? राम है पालक। प्रमाण-

श्रुति सेतु पालक राम तुम्ह जगदीस माया जानकी।
जो सृजित जगु पालित हरति रुख पाई कृपानिधान की।।
जो सहससीसु अहीसु महिधरु लखनु सचराचर धनी।
सुर काज धरि नरराज तनु चले दलन खल निसचर अनी।।

तुलसीजी ने कहा कि रामजी, आप पालक हो। इन तुलसी मंत्रों का आश्रय लेकर मैं कह रहा हूं कि राम है पालक। 'श्रुति सेतु पालक राम।'

तासु भजनु कीजिअ तहँ भर्ता।

मंदोदरी ने कहा रावण को कि उसके साथ वैर न करो। बोले, किसके साथ?

जो कर्ता पालक संहर्ता।

जो जगत का कर्ता है, जो पालक है और संहर्ता है। तो बाप! राम है पालक। और पालक की क्रिया क्या है? राम की छाया जानकी है। लक्ष्मण की छाया ऊर्मिला है। भरत की छाया मांडवीजी है। शत्रुघ्न की श्रुतकीर्ति है। और तुलसी इनको दूसरे अर्थ में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष कहते हैं। आज एक तीसरे अर्थ में उसकी चर्चा हो रही है।

तो राम जब पालक है तो पालक की क्रिया क्या होनी चाहिए? मैं कुछ पालक गिनाऊं आपको। एक तो परिवार का पालक। एक अपने गांव का छोटा-सा पालक अथवा मुखिया सरपंच प्रमुख। गांव के छोटे-छोटे कसबे का पालक। एक जनपद का पालक। अथवा तो एक राज्य का पालक। अथवा राष्ट्र का पालक। और आखिर में पृथ्वी पालक। उसकी क्रिया क्या होनी चाहिए? मेरी व्यासपीठ की समझ में ये आ रहा है कि पालक की क्रिया है समता। तो पालक है उसमें समानता होनी चाहिए। जो असमानता रखे वो पालक नहीं है। यदि हम पालक है। कोई धर्म का पालक, धर्माचार्य। उसका कर्तव्य है। इसीलिए 'भगवद्गीता' कायम सम की बात करती है। उपनिषद सच की बात करते हैं। और 'रामचरित मानस' सबकी बात करता है।

सब नर करहिं परस्पर प्रीति।

सब, सब, सब। आप एक फेक्ट्री के मालिक है। कई वर्कर्स आपके नीचे काम कर रहे हैं। आप उसके पालक-पोषक है तो आपका कर्तव्य है, आपकी क्रिया समता से भरी होनी चाहिए। राज्य का पालक समता संयुक्त हो। राष्ट्र के पालक में समता होनी चाहिए। ये उनकी क्रिया है। तो राम है पालक। पालक की क्रिया है समता। भरत है बालक।

मैं सिसु सेवक जदपि भामा।

भरत बालक है। भरत पालक नहीं है। और हम जानते हैं कि जो बालक होता है वो पालक नहीं होता। और जो पालक होता है वो कभी बालक नहीं होता। ये नियम है। 'रामचरित मानस' के मिथिला के प्रसंग की ओर मैं आपको लिए चलूं। जब राम-लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ जनकजी की अमराई में ठहरे हैं। जनकजी को समाचार मिला और वो दौड़ते हैं सचिवों, विद्वत्गण को लेकर कि महर्षि कौशिक पधारे। कौशिक मुनि, मुनिगण का स्वागत किया। राम-लक्ष्मण अमराई में घूमने गए थे। वो आये। और राम को देखकर महाराज मिथिलेश स्तंभित हो जाते हैं। और तब एक प्रश्न पूछते हैं-

कहहु नाथ सुन्दर दोउ बालक।
मुनिकुल तिलक कि नृपकुल पालक।।

विश्वामित्र से पूछते हैं जनकजी कि ये सुन्दर दोनों बालक है कौन? ये मुनियों के कुल का तिलक है कि किसी राजकुटुंब का पालक है? एक विद्वान, एक ब्रह्मज्ञानी का प्रश्न सुनकर महर्षि विश्वामित्रजी थोड़े मुस्कुराए। जनकजी ने पूछा, बाबा, मैंने कुछ गलत पूछा क्या? बोले, नहीं, नहीं। आप सोचो, बालक कभी पालक नहीं हो सकता। पालक कभी बालक नहीं हो सकता। तो बालक न पालक होता है, न पालक बालक होता है। राम है पालक। और पालक की क्रिया है समता। भरतजी है बालक। बालक की क्रिया है रोना। हमारे यहां बालक का बल ही रुदन माना गया है। यद्यपि भरतजी ने राम पर दबाव डालने की कोई क्रिया नहीं की। अंततोगत्वा वो इतना ही कहते हैं, 'जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई।' तो मेरी दृष्टि में भरत बालक है। बालक की क्रिया है बिलकुल अनन्यभाव।

सीताजी को सगर्भा स्थिति में वनगमन की जो बात आयी तब मूलत: जानकी ने कोई शिकायत नहीं की। उसको पता है, बड़े घर में जन्म ले तो जिम्मेवारियां बहुत होती हैं। और बड़े घर में जाएं तो बहुत दायित्व का निर्वाह करना पड़ता है। ये किशोरीजी ने प्रतिपादित कर दिया। हां, हमको पीड़ा जरूर होती है। हां, मिथिला के प्रदेश को, बिहार की भूमि को ठेस जरूर लगती है कि राम जैसे पुरुष को हमारी बेटी ब्याही और फिर राम ने उसका त्याग कर दिया! जिस जानकी को भगवान कहे, तुम अग्नि में समा जाओ। तो चूं चां नहीं की। क्योंकि आदत थी अग्नि में रहने की। महान चरित्रों को अग्नि में ही रहना पड़ता है। और पृथ्वी के गर्भ में आग ही तो है। और जो ज्वाला में से बाहर

निकली है उसको अग्नि में जाने में क्या देर लगती है? मेरे भाई-बहन, अद्भुत कुर्बानी है। सूरज को जलना ही पड़ता है। तो सीता एक शब्द नहीं बोलती है। क्योंकि ये पूर्णत: शरणागत का चरित्र है। जैसे भरत, 'जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई।' तो बालक की क्रिया है अनन्यता। केवल तू, केवल तू, केवल तू।

राम है पालक, उसकी क्रिया है समता। भरत है बालक, इसकी क्रिया है अपनी क्षमता तक कुछ कहे, रोए। लेकिन क्षमता पूरी हो जाए तो फिर 'राजी हैं हम उसीमें जिसमें तेरी रज़ा है।' मेरी व्यासपीठ की दृष्टि से लक्ष्मण है गोलक। लक्ष्मण बालक नहीं है। 'पलक बिलोचन गोलक जैसे।' सीता और राम चित्रकूट में लक्ष्मण का कैसे ध्यान रखते है कि जैसे दो पलकें अन्दर के गोलक की रक्षा करे। मेरा लखन है गोलक। साहब! नींद आती है न तो पलकें बंद होती हैं, गोलक बंद नहीं होता। इसीलिए लखन चौदह साल जागता है। मेरी 'रामायण' का गोलक मेरा लक्ष्मण है। गोलक की क्रिया है जागृति; निरंतर सावधानी।

आखिर सूत्र, शत्रुघ्न है चालक। चालक मानी ड्राईवर। रामकथा का कोई ड्राईवर है तो मेरा शत्रुघ्न है। चालक; उसके कारण रामकथा चल रही है। चालक कभी कुछ देखता नहीं। क्योंकि उसको पता है कि मुझे ये नज़ारे देखने नहीं है। मैं देखने जाऊं तो अकस्मात! मेरे शत्रुघ्न ने कुछ देखा ही नहीं। मैं आपको बहुत जिम्मेवारी के साथ कहूं। उसने राम का चेहरा भी पूरा कभी नहीं देखा कि मैं चेहरा देखने जाऊं और कहीं चालकपना मेरा वो हो जाये। और रघुकुल की 'प्रान जाहुँ बरु बचन न जाई।' इस रीत से ये गाडी कहीं दूसरे मार्ग पर फट न जाए। ये चालक है। कितनी बार आपको शत्रुघ्न 'रामायण' में मिलेगा? शत्रुघ्न चाहते हैं कि मेरा वर्णन 'रामायण' में न हो। मैं गुप्त रहूं। मैं चुप रहूं। क्योंकि ये चालक है। पहली बार तो शत्रुघ्न का स्मरण वहीं आया-

रिपुसूदन पद कमल नमामी।
सूर सुसील भरत अनुगामी।।

वंदना प्रकरण में। तीन शब्द-सूर, सुसील, भरत अनुगामी। भरत के अनुगमन में उसने और दृष्टि कहीं न की। क्योंकि उसको खबर है कि भरत राम का अनुगमन कर रहे हैं। और मुझे उसका अनुगमन करना है। मैं इधर-उधर कहीं न देखूं। बस, मैं इस धारा को चलाते रहूं। दूसरी बार नामकरण संस्कार चारों भाईयों का हुआ तब शत्रुघ्न महाराज का स्मरण तुलसी ने किया। तीसरी बार स्मरण होता है, राम-लक्ष्मण विश्वामित्र के संग जनकपुर गए। भरत शत्रुघ्न अयोध्या में हैं। और पत्र लेकर जनकपुर के दूत अयोध्या आये। तो दोनों भाई खेल रहे थे कहीं। भरत-शत्रुघ्न अयोध्या में विहर रहे थे। वहां खबर मिली की जनकपुर से कोई पाती आयी है। तो दौड़ते महाराज के पास आये। शत्रुघ्न नहीं दिखता। दोनों भाई जरूर दिखते हैं। लेकिन महत्त्व के काम में शत्रुघ्न आगे आते ही नहीं। भरतजी ने ही कहा कि 'तात कहां तें पाती आई।' और पत्र भरत ने हृदय लगा लिया। और कहते हैं, उसी समय दोनों भाई पुलकित हो गए। पुलकित दोनों हुए लेकिन लोगों को केवल भरत की ही प्रीत दिखी, शत्रुघ्न की न दिखी। ऐसे जो परदे के पीछे रहता है आदमी। वैसे जो चालक होता है वो ऐसे ही होते हैं जो गुमनाम रहते हैं, जो गुप्त रहते हैं, जो छिपे रहते हैं। श्रुतकीर्ति के साथ ब्याह की बात आई तब फिर दर्शन हो गए। वहां शत्रुघ्न महाराज का स्मरण है।

रामवनवास हुआ। भरतजी ननिहाल से आये तो शत्रुघ्न जरा मंथरा को पिटाई करते हैं। वहां फिर शत्रुघ्न दिखते हैं। उसके बाद जब चित्रकूट की यात्रा भरत की निकली। शत्रुघ्न संग है। चित्रकूट जाते हैं। चित्रकूट पहुंचे और जब गुहराज ने भगवान राम को कह दिया कि गुरुजी पधारे हैं। सब आये हैं। और सबको जाना है। गुरु का दर्शन सबकी इच्छा है। लेकिन जानकी को अकेली रखकर जाना ठीक नहीं। क्योंकि राक्षस लोग घूमते रहते हैं। इसीलिए कौन रहे सीता के पास? प्रभु ने सामने देखा शत्रुघ्न। 'हां, प्रभु, मैं यहां रह जाऊंगा।' और भगवान को खबर है कि जानकी की सही सुरक्षा शत्रुघ्न ही कर सकता है। भविष्य में जानकी की सुरक्षा लक्ष्मण भी नहीं कर पायेगा, शत्रुघ्न ही करेगा। लक्ष्मणजी तो थे। लेकिन जब जानकी ने कुछ वाक्य कहे तो वो भी निकल गए और जानकी का अपहरण हुआ। कहीं आगे नहीं आता ये आदमी। ये चालक है, जो रामकथा की यात्रा को आगे बढ़ाता है। और चालक की

क्रिया है अपने भाव को, अपने प्रेम को, अपने समर्पण को जितना हो सके गोपनीय रखना। कभी-कभी तो शत्रुघ्न मुझे गोपी लगती है। क्योंकि गोपन करे उसको गोपी कहते हैं। तो चालक गोपनीय रहता है एक अर्थ में। तो आपने पूछा, व्यासपीठ का मत क्या है? तो राम है पालक। भरत है बालक। लक्ष्मण है नेत्र, गोलक। और शत्रुघ्न है चालक। जो बिलकुल संचालित करता है। कोई भी चलानेवाला गुप्त ही होता है। पता नहीं चलता साहब! उसको प्रसिद्धि की जरूरत ही नहीं रहती। तो कलियुग में राघव 'मानस-बिहारी' है।

मंगल भवन अमंगल हारी।
द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।
रूप रासि नृप अजिर बिहारी।
नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी।।

सूत्र के रूप में एक बात। जरा प्रसन्नता से आप उस पर चिंतन करियेगा प्लीज़। जो निराकार होता है उसमें कभी विहार नहीं होता। साकार में ही विहार होता है। व्यापक कभी विहारी नहीं बन सकता; व्यक्ति ही विहारी बन सकता है। निर्गुण कभी विहारी नहीं बन सकता। सगुण ही विहारी बन सकता है। व्यापक ब्रह्म विहारी नहीं हो सकता। तुलसी का सूत्र है। 'हरि ब्यापक सर्बत्र समाना।' ईश्वर सब जगह समान रूप में व्यापक है। कोई खाली जगह ही नहीं बचती। व्यापक में विहार की संभावना ही नहीं होती। इसलिए मेरे देश ने परमात्मा को व्यक्ति बना दिया। निर्गुण को सगुण बना दिया। क्योंकि ये विहरे, ये विहार करे। तो व्यापक ब्रह्म कहां हमारी समस्याओं का उकेल दे पाया? वो तो बैठा है कूटस्थ, तटस्थ। सबके हृदय में बैठा लेकिन हम जुआ खेलें, शराब पीए, चोरी करें, किसी को रोकता नहीं। बच्चा, जो करना कर। मैं साक्षी हूं। चाहिए कोई रोकनेवाला। और रोके कानून से नहीं। प्रेम विहार करके रोके। मुस्कुराते हुए रोके। नृत्य करता हुआ रोके। ऐसे रोके। ऐसा ब्रह्म चाहिए। तो एक बात यदि आपके दिल तक पहुंचे तो, व्यापक कभी विहारी नहीं होता। निर्गुण में विहार की संभावना ही नहीं। वो ही तत्त्व है। जब सगुण होता है तो वो कभी दसरथ विहारी, आंगन विहारी ऐसे सात विहार करते हैं ठाकुरजी।

राघव है सात वस्तु के विहारी। अनंत विहार है मेरे ठाकुर का। लेकिन संक्षेप में सात बिंदुओं को मैं छूना चाहता हूं। पहले तो राम है रामविहारी। जवाब नरसिंह मेहता देता है-

ब्रह्म लटकां करे ब्रह्म पासे.
जागीने जोउं तो जगत दिसे नहीं.
ऊंघमां अटपटा भोग भासे.

जैसे 'नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी।' जैसे बच्चा अपने प्रतिबिंब को देखकर नाचता है ऐसे परमात्मा नाचते हैं। ब्रह्म ब्रह्म के साथ नृत्य कर रहा है। एक तो राम का राम में विहार। तो एक विहार का नाम है, राम राम में विहार करता है। ब्रह्म ब्रह्म के साथ विहार करता है। एक से विहार नहीं हो सकता। विहार के लिए कोई दूसरा अपेक्षित है। इसीलिए 'एकोऽहम् बहुस्याम्।' एक बहुत में परिवर्तित हो जाता है और वो विहार करता है। तो पहला सूत्र है राम का राम में बिहार।

दूसरा 'मानस' के आधार पर, राम का काम में विहार। काम के साथ विहार। मैं फिर मिथिला के उस विवाह मंडप में लिए चलूं। जहां मणि खम्भ हैं विवाह मंडप के। और राम और जानकी जब भांवरी लेते हैं, मंगल फेरे। गोस्वामीजी लिखते हैं, मणि खम्भन में सुंदर रचना जनकजी के कारीगरों ने की है। और इस मणि खम्भन में सीताराम की प्रतिबिंब, जो परछाईयां घूमती हैं। यहां सीताराम घूमते हैं। तब तुलसी कहते हैं, मानो कामदेव और रति अनेकों रूप लेकर के खम्भों में रामविवाह का दर्शन कर रहे हैं। पुष्पवाटिका में काम विहार। ये भोगवादी काम की बात नहीं है। चरणवादी काम की बात है। लक्ष्मी तो भगवान की छाती पर रहने की अधिकारिणी है। चरणों में तो गोपियां होती हैं। प्रभु के चरण में भक्त होते हैं। सेवक होते हैं। तो वहां रास जमता हैं। तो भगवान पुष्पवाटिका में काम की चर्चा करते हैं। शृंगार की चर्चा करते हैं। एक-दो पंक्तियों स्मरण में ले लें।

तात जनकतनया यह सोई।
धनुषजग्य जेहि कारन होई।।
जासु बिलोकि अलौकिक सोभा।
सहज पुनीत मोर मनु छोभा।।

'लक्ष्मण, जिसका अलौकिक सौन्दर्य देखकर मेरा पवित्र मन क्षुभित होता जा रहा है।' राम का विशुद्ध काम विहार। धर्म से विरुद्ध मैं न हो ऐसे काम का विहार। चित्रकूट में भगवान का विहार आया तब तुलसी लिखते हैं कि 'बलकल बसन जटिल तनु स्यामा।' भगवान ने वल्कल धारण किये हैं। जटिल है। जटा बांधी है। श्याम वर्ण है। सीतारामजी बैठे हैं तो तुलसी कहते हैं, 'जनु मुनिबेष कीन्ह रति कामा।' कामदेव और रति वल्कल पहनकर मानो बैठे हों। ये तुलसी का कामविहार है। इस रूप में कामविहार है। तीसरा विहार बामविहार। बाम मानी वाम भाग।

नीलाम्बुजश्यामलकोमलाङ्गं सीतासमारोपितवामभागम्।
पाणौ महासायकचारुचापं नमामि रामं रघुवंशनाथम्।।

'सीतासमारोपितवामभागम्।' ये वामविहार है प्रभु का। और प्रभु का धामविहार।। कहीं भी आप 'रामचरित मानस' लेकर पाठ करो तो ये जगह धाम बन जाती है। और यकीन करिएगा इतने समय तक वहां राम विहार करता है। ये है धामविहार प्रभु का। 'मानस' के 'अयोध्याकांड' का दर्शन करता हूं तो राम का गामविहार दिखता है।

सीता लखन सहित रघुराई।
गांव निकट जब निकसहिं जाई।

ये गामविहार है राम का। गांव-गांव राम गए। गांव के बाहर से निकलते हैं। ये प्रभु का विचरण।

गांव गांव अस होइ अनंदू।
देखि भानुकुल कैरव चंदू।।

गांव-गांव आनंद। जहां-जहां रामजी जा रहे हैं वहां प्रभु का गाम विहार है। कृष्णचरित्र में जाऊं तो भगवान का एक दामविहार है। जिसको भागवतकार दामोदरलीला कहते हैं। प्रभु का दामविहार। रज्जु बंधन। कृष्ण को बांधा गया। ये दामविहार है। प्रभु का एक बहुत करुण विहार है। आदमी को नीचो दे ऐसा विहार है उसको कहते हैं, शामविहार। शाम के दो अर्थ। कृष्णविहार और दूसरा सायंकाल का विहार। सायंकाल में भोग नहीं होता। संध्या का समय। उसमें प्रेमियों को बड़ी तकलीफ़ होती है। तो परमात्मा जब चित्रकूट में सायंकाल को बैठते हैं और उसका विहार चलता है अयोध्या की स्मृति में।

जब जब राम अवध सुधि करहिं।

यहां सूरज डूब जाता है। प्रभु को पता है कि अयोध्या का सूरज भी डूब चुका है। क्योंकि रघुकुल का सूरज अवधेश चले गए हैं। और भरत भी पादुका लेकर चले गए हैं। और संध्या के समय ऋषिमुनि अपनी साधना में चले जाते हैं। पक्षी अपने घोंसले में चले जाते हैं। कोल-किरात जहां-जहां अपने नेसडे होंगे, कुबे होंगे वहीं चले जाते हैं। और चित्रकूट में ये तीन अकेले रह जाते हैं। और भगवान राम की दृष्टि अयोध्या की ओर लग जाती है। और तुलसी चौपाई लिखते हैं-

अब जब राम अवध सुधि करहीं।
तब तब बारि बिलोचन भरहीं।।

क्योंकि संध्या के समय, शाम के समय भगवत् प्रेमियों को अथवा तो भक्त के विरह में भगवान को जो वियोग विचरण शुरू होता है। क्यों? क्योंकि शाम एक ऐसी है जिसमें दिन और रात का मिलन होता है। इस क्षण को, इस लम्हे को संध्या कहते हैं। और भक्त को होता है कि कभी मिलने नहीं वाले ऐसे दिन और रात भी आज मिले हैं। इसीलिए प्रभु को ये शाम याद आती है अवध की। और भगवान का ये शाम विहरण कैसा है? परमात्मा की याद करने की सहज प्रक्रिया क्या है? पहले तो पूरी अयोध्या को याद करते हैं। यहां फिर पालक की समता प्रक्रिया दिखेगी आपको। राम है पालक। तो जिसकी याद उसको बहुत दु:खी करती है उसको आखिर में याद करते हैं। पहले सबको याद करते हैं। पालक हो उसको पहले पूरे राष्ट्र का विचार होना चाहिए। केवल अपना परिवार का नहीं। अपने निजी व्यक्ति का नहीं। एक छोटा-सा गांव हो न उसका मुखिया हो न उसको पहले ये देखना चाहिए कि मेरे गांव में कोई भूखा तो नहीं है न। यदि कोई भूखा नहीं फिर उसको रोटी खाने का अधिकार है। गांव में पांच भूखे हो और वो रोटी खाए तो वो पालक नहीं है।

पूरे समाज को याद किया राघव ने। पूरी अवध को याद करके भगवान की आंख में पानी भर आते थे। फिर क्रम देखिये। 'सुमिरि मातु पितु परिजन भाई।' पहले माँ याद आती है। और तुलसी ने माँ ही लिखा है इसलिए

निर्णय करना मुश्किल कि पहले कौशल्या की याद आई कि कैकेई याद आई कि सुमित्रा की याद आई। 'रामचरित मानस' में ऐसे फिर गुरुकृपा से खोजना पड़ता है अथवा तो गुरु बताये कि माँ याद आई तो पहली कौन माँ? जन्मदात्री कौशल्या को याद करे तो राम ने समता गंवा दी। तो ये आक्षेप राम पर लग जाएगा। मुझे लगता है सबसे पहले उसने कैकेई को याद किया था। क्योंकि कौशल्या के आंसू तो समझ में भी आयेंगे। कैकेई के आंसू की तो आलोचना भी होगी कि अब रोने बैठी है। तो मेरी व्यक्तिगत धारणा में पहले कैकेई को याद किया। क्योंकि राम ने हर जगह कैकेई को पहले स्थान दिया है। 'प्रथम राम भेंटी कैकेई।' चित्रकूट में राम सबसे पहले कैकेई को मिले। तो मुझे लगता है पहले कैकेई को याद किया। दूसरे नंबर पर माँ को याद किया तो सुमित्रा को याद किया। और तीसरे नंबर पर कौशल्या को याद किया।

पिता को याद किया। पिता में दो को याद किया। एक तो महाराज दशरथ को और दूसरे सुमंत को। सुमंत को राम पिता कहते थे, 'तात धरम मतु तुम्ह सबु सोधा।।' धर्म के अन्वेषक जितने हैं दुनिया में महाराज, इनमें आपका एक नाम है। भगवान राम किन-किन को पिता कहते थे? एक तो सूर्य को कहते थे क्योंकि सूर्यवंशी है। एक दशरथ को पिता कहते थे। एक सुमंत को पिता कहते थे। और एक गीधराज जटायु को पिता कहते थे। 'सीता हरन तात जनि कहहु पिता सन जाइ।' वहां 'तात' शब्द कहते हैं। तो यहां पिता को याद किया इनमें कई आ सकते हैं। फिर सब परिजनों को याद किया। पूरी अयोध्या में पुरजन सब, परिजन सब आ गए। उसके बाद भाईयों को याद करने लगे। लक्ष्मण तो साथ में है। सबसे पहले प्रभु ने याद किया तो शत्रुघ्न को याद किया। ये सब निज अभिप्राय है। उसके बाद तुरंत लक्ष्मण की याद आई। लक्ष्मण तो संग में है फिर भी लक्ष्मण के त्याग और जागृति की याद आई कि मैं तो अभी फलाहार कर लूंगा। और समान भूमि पर तरु, पत्र, पल्लव, घास डालकरके मैं और जानकी सो जायेंगे। लेकिन ये जागता रहेगा। उसकी याद आई। उनके समर्पण और जागरण की याद आई। और आखिर में जिसके प्रति बहुत निजता है उसी व्यक्ति को आखिर में याद किया। ये है पालक की समता। आखिर में 'भरत सनेह सीलु सेवकाई।' भरत का स्नेह, भरत का शील और भरत की सेवा। ये तीनों को याद करते हुए कृपासिंधु भगवान की आंखें भर आती हैं। इस प्रसंग को मेरी व्यासपीठ शामविहार कहती है।

गुरु की आज्ञा प्राप्त कर गुरुपूजा के लिए जनक की पुष्पवाटिका में भगवान राम और लखन पुष्प चुनने के लिए जाते हैं। बाग के मध्य भाग में एक सरोवर है। संत के हृदय जैसा निर्मल पानी भरा है। और सरोवर के तट पर माँ पार्वती का मंदिर है। राम-लक्ष्मण पुष्प लेने के लिए गए। उसी समय माँ सुनयना की आज्ञा लेकर जानकीजी अपनी सखियों को लेकर बाग में आई है। कारण है गिरिजा पूजन। बाग के प्रवेश का हेतु कितना सुन्दर! राम गए बाग में तो गुरु पूजा हेतु। किशोरीजी गई तो गौरीपूजा हेतु। देश की युवतियों को, बहन-बेटियों को गौरीपूजा करनी चाहिए। और देश के युवकों को गुरुपूजा करनी चाहिए। ये हमारे देश की परंपरा है। तो जानकीजी आई। सरोवर में सखियों के संग स्नान किया। गौरीपूजा के लिए मंदिर में गई। तुलसीजी कहते हैं, माताजी की पूजा की और 'निज अनुरूप सुभग बर भागा।' आश्रित को दुनिया में किसी से भी कुछ मांगने की मना है। मांगना है तो एक ही जगह की छूट है। आपकी श्रद्धा जिसमें हो उसके पास ही आप मांग सकते हैं। और मांगना भी निज अनुरूप। अपनी औकात के अनुसार मांगना। जानकी तो परम्बा है लेकिन अपने अनुकूल वरदान मांगा। माँ की पूजा की। वरदान मांगा। इतने में एक सखी जो सीता से बिलग होकर फुलवारी देखने गई थी वो राम को देख लेती है। और राम और लक्ष्मण को देखते ही भावविभोर हुई ये सखी एकदम मंदिर में आई और जानकीजी को कहा कि भवानी की पूजा बाद में भी होगी। राजकुमारों को देख लें। सयानी सखी आगे चली। सीताजी के पग के नूपुर, कटि भाग की करधनी और हाथ के कंगन इसकी आवाज़ आ रही है जब सियाजू राम के दर्शन के लिए जा रही हैं। और ये तीन प्रकार के आभूषणों की आवाज़ सुनकर भगवान राम का चित्त आकर्षित हुआ कि ये कौन आ रहा है?

भगवान राम लक्ष्मणजी को कहने लगे, लखन, ये देख 'तात जनकतनया यह सोई।' ये सीता है। क्या मतलब? परमात्मा को अपनी ओर आकृष्ट करना बच्चों का

खेल नहीं है। लेकिन परमात्मा आकृष्ट हुए। तीन कारण। पैर के नूपुर, हाथ के कंगन, कटि भाग की करधनी। पैर के नूपुर को मेरी व्यासपीठ कहती है सदाचरण, पवित्र आचरण। हाथ के कंगन, उसको मेरी व्यासपीठ कहती है समर्पण, दान। और कटि भाग की करधनी वो संयम। संयम, सदाचरण और समर्पण ये मानवी के ऐसे भूषण हैं, अलंकार हैं कि ये तीन की आवाज़ आते ही ईश्वर उनके सामने देखने के लिए बेताब हो जाता है। यही गहने हैं जो प्रभु को बाध्य करता है अपनी ओर देखने को। लखन, ये जानकी है जिसके लिए धनुषजग्य हो रहा है। जिसकी अलौकिक शोभा को देखकर मेरा पवित्र मन खिंचा जा रहा है। और अलौकिक शोभा हो और मन पवित्र हो तो आकर्षण स्वाभाविक है। मेरा मन भी पवित्र और ये रूप जानकी का अलौकिक है। हम रघुबंशी हैं। हमारा स्वाभाविक स्वभाव है कि हमारा मन कभी कुपंथ पर नहीं जाता। जिन्होंने सपने में भी पर नारी नहीं दीठी। आज वो राम कहते हैं, मेरा मन क्षुभित हुआ है। मानो कामदेव मानसिक जगत को जाने विजय करने के लिए निकला हो। ऐसा प्रभु का यहां थोड़ा काम विहार बताया है। गोस्वामीजी कहते हैं, चकित चित्त से जानकीजी रामदर्शन के लिए एकदम जल्दी में हैं। यहां प्रभु इतने भाव में हैं। क्या मर्यादा का वर्णन तुलसी कर रहे हैं! नेत्र के मार्ग से राम के रूप को हृदय में बिठाकर सयानी जानकी ने अपने पलकों के कंवाड बंद कर दिए कि अंदर जो अतिथि आया वो कहीं चल न दे। इसी रूप में दोनों ध्यानस्थ हो गए।

सीतारामजी का ये प्रथम मिलन है मर्यादा सभर। सखी के कहने पर जानकीजी लौटती है। लेकिन मृग, वृक्ष, कोई फूल इसके बहाने वो मुड़मुड़ करके राम का दर्शन करती है। ईश्वर का दर्शन मंदिर में तो है ही। लेकिन ईश्वर का दर्शन पौधे में भी है। झरनों में भी है। पक्षियों की आवाज़ में भी है। कितना सार्वभौम कर रहे हैं! इस बहाने राम को देख रही हैं। और माँ पार्वती के मंदिर में आकर जानकीजी स्तुति कर रही हैं। क्या दृश्य होगा! जगदंबा भवानी और यहां आह्लादिनी शक्ति जानकीजी सखियों के संग उसकी स्तुति कर रही हैं। मैं मेरे देश की बहन-बेटियों को कहूं। दबाव नहीं, बिनती करता हूं कि हो सके तो जानकी ने जो पार्वती स्तुति की, वो कंठस्थ करके जीवन में गाते रहना। आगे का जीवन बहुत मंगलमय होगा। आगे के जीवन में मनवांछित फल प्राप्त हो जाएगा। और जानकीजी माँ दुर्गा की स्तुति करती है। विनय प्रेम के आधीन हुई जानकी गौरी की स्तुति कर रही थी तब गोस्वामीजी लिखते हैं, भवानी के कंठ में रही माला गिरी। जानकी ने हाथों से उठा ली। मूर्ति मुस्कुराई। और तुलसी कहते हैं, मूर्ति बोली। जानकी स्तुति करे और भवानी बोले तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। ये विनय और प्रेम है तो हो सकता है, संभव है। स्फुरण होता है। यहां तो मूर्ति मुस्कुराई, जगदंबा मुस्कुराई और बोली कि हे जानकी, नारद के वचन पवित्र हैं, सत्य हैं तुझे वो वर मिलेगा जो तू चाहती है। गौरी ने आशीर्वाद दिया। जगदंबा भवानी ने कहा, जानकी, तुम्हारे मन में जो सांवरा बस गया वो तुम्हें मिलेगा। गौरी अनुकूल है वो जानकर जानकी बहुत प्रसन्न हुई। सखियों के संग जानकी भवन लौटी। यहां राम-लक्ष्मण गुरु के पास पुष्पों से पूजा करके वरदान प्राप्त करते हैं। दूसरे दिन धनुषभंग का प्रसंग।

जो निराकार होता है उसमें कभी विहार नहीं होता। साकार में ही विहार होता है। व्यापक कभी विहारी नहीं बन सकता; व्यक्ति ही विहारी बन सकता है। निर्गुण कभी विहारी नहीं बन सकता। सगुण ही विहारी बन सकता है। व्यापक ब्रह्म विहारी नहीं हो सकता। तुलसी का सूत्र है। 'हरि व्यापक सर्बत्र समाना।' ईश्वर सब जगह समान रूप में व्यापक है। कोई खाली जगह ही नहीं बचती। व्यापक में विहार की संभावना ही नहीं होती। इसलिए मेरे देश ने परमात्मा को व्यक्ति बना दिया। निर्गुण को सगुण बना दिया। क्योंकि ये विहरे, ये विहार करे।

मानस–बिहारी – ९

कृपा बहिर् नहीं होती, अदृश्य होती है

बाप! परमात्मा अनंतविहारी है। उसको कैसे हम पूरा कह पाये? समझ की भी अपनी मर्यादा होती है। आज के उपसंहारक सूत्र। कल भगवान का पुष्पवाटिका का विहार, प्रणय विहार जिसको कहते हैं, इसकी संक्षिप्त चर्चा की। उसके बाद भगवान राम जनक के बुलावे पर धनुषयज्ञ में आते हैं। और जहां इस धनुष को कोई नहीं तोड़ पाया वहां गज पंकज नाल की तरह भगवान राम ने धनुषभंग किया। जानकीजी ने जयमाला पहनाई। परशुरामजी आये। भगवान का प्रभाव समझने के बाद वो तपस्या के लिए चले गए। जनकपुर से दूत अवध गए। अवध से बारात लेकर दशरथ महाराज मिथिला आये। और मागशर शुक्ल पंचमी के दिन, गोरज बेला जनकपुर में चारों भाईयों का मिथिला की चार कन्याओं के साथ, जनक की कन्याओं के साथ लोकविधि और वेदविधि से ब्याह संपन्न होता है। फिर सबकी बिदाई हुई। सब अवध आये। जबसे जानकी अयोध्या आई तबसे अयोध्या की समृद्धि ओर बढ़ गई। कुछ दिन के बाद विश्वामित्र की बिदाई हुई। और वहां 'बालकांड' का समापन कर दिया गया।

धनुषभंग और रामविवाह और प्रभु लौटे उसका आध्यात्मिक अर्थ इतना ही है मेरे भाई-बहन कि सीता की प्राप्ति हो, कैसे भी। सीता यानी भक्ति। सीता यानी शांति। सीता यानी शक्ति। और मुल्क को, राष्ट्र को, राज्य को, पूरी सृष्टि को ये तीन की बहुत जरूरत है शक्ति की, शांति की और भक्ति की। ये तीनों सीता है। इसको पाने की विधा धनुषयज्ञ है। तो बाप! पहली एक छोटी-सी फोर्म्यूला कि राम-लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ उसको गुरु मानकरके, उसकी आज्ञा मानकरके जनकपुर आये। पहला सूत्र है भक्ति प्राप्त करने का, शांति प्राप्त करने का, शक्ति प्राप्त करने का वो है गुरुआज्ञा का सादर पालन करना। हर्षित होकर पालन करना। 'मानस' में क्या शब्द है?

धनुष जग्य सुनि रघुकुल नाथा।
हरषि चले मुनिबर के साथा।।

गुरु मानी जो निरंतर हमारे कल्याण में लगा है। आश्रित सो जाये, गुरु जागता है। आश्रित साधना छोड़ भी दे। गुरु को कोई साधन की जरूरत नहीं, फिर भी आश्रित के लिए साधन

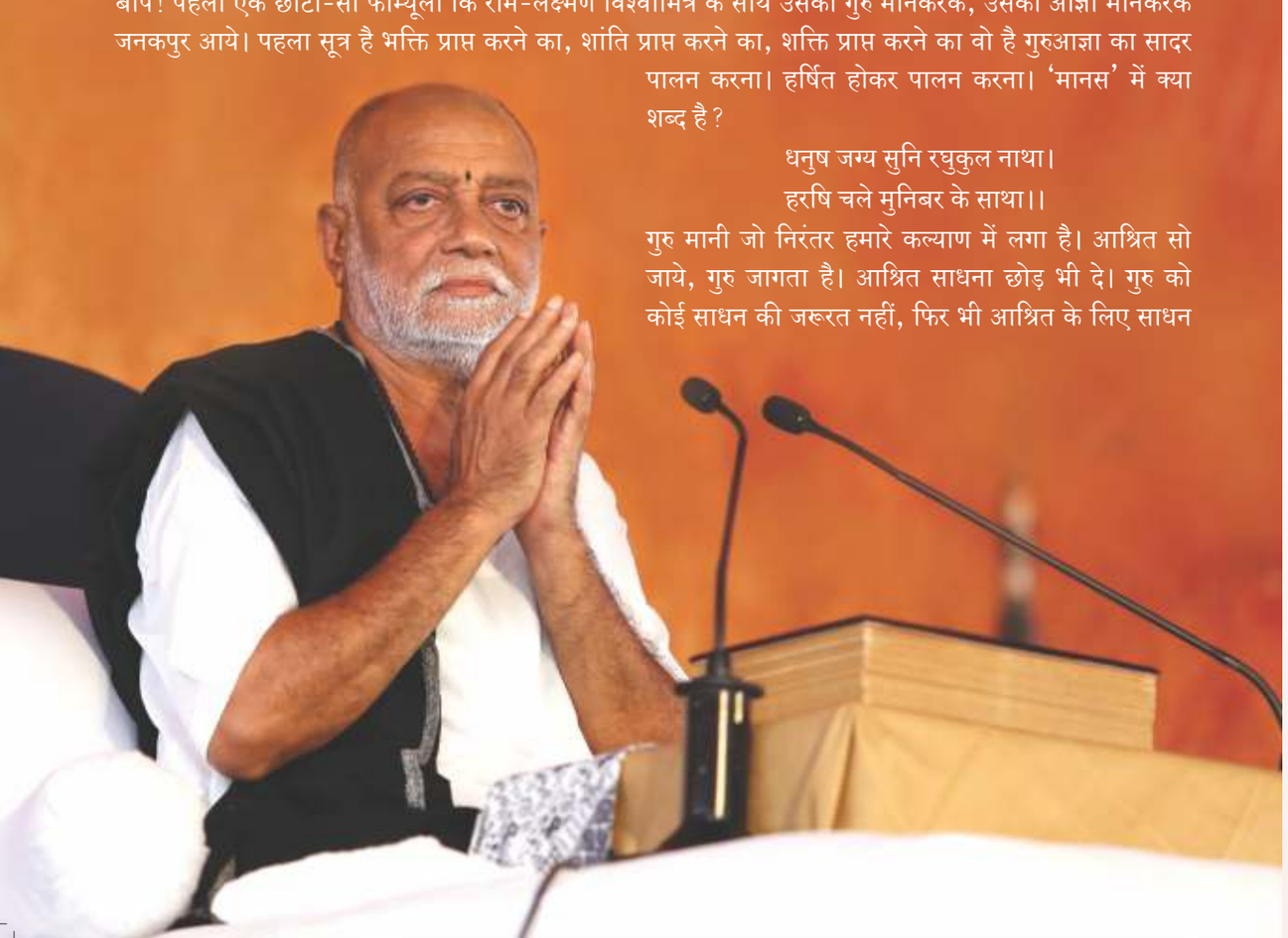

किये जाता है। जो हमारे लिए जिए ऐसा कोई बुद्धपुरुष, उसकी आज्ञा को हर्षित होकर कुबूल करना ये भक्ति, शक्ति और शांति पाने का पहला कदम है। उसके बाद अहल्या के आश्रम में प्रभु आये, गौतम के आश्रम में। और राम की चरणरज से अहल्या का उद्धार हुआ। ये दूसरा कदम है भक्ति प्राप्त करने का। अहल्या मानी हम जीव है। 'रामचरित मानस' में लिखा है कि जीव को कभी अखंड ज्ञान नहीं रहता। स्खलन हो ही जाता है। जो जीव को अखंड ज्ञान रहे तो ईश्वर और जीव में कोई भेद ही नहीं रह सकता।

जो सबके रह ग्यान एक रस।
तो ईस्वर जीवही भेद कहहु कस।

अहल्या ऋषिपत्नी है। ब्रह्मा का एक बहुत बड़ा सृजन है अहल्या। लेकिन थोड़ा कदम चुक गई और जड़ हो गई शाप के कारण। बाप! गुरु की आज्ञा सहर्ष कुबूल करने के बाद कोई ऐसी चरणरज हमें मार्ग में मिले जिससे हमारी जड़मति, हमारी जड़ता, हमारी बुद्धि के पत्थरपने में चैतन्य प्रगटे। बुद्धि सचेत हो जाए, बुद्धि सुमति हो जाए। और तीसरा धनुषभंग। धनुष है अहंकार का प्रतीक। हमारा अहंकार टूट जाए, तत्क्षण जानकी जयमाला पहनाती है। ये सीधी-सी बात। रामकथा के प्रसंग का सार, एक अर्क। हम और आप हमारे कल्याण में लगा हुआ कोई बुद्धपुरुष उसकी आज्ञा को सहर्ष कुबूल करें। हम किसी परम की चरणरज से हमारी जड़मति को सुमति बनाये। और हम हमें इतना बड़ा गुरु मिल गया, हमारी बुद्धि सुमति हो गई इसका अहंकार भी न पालें। और इसका अहंकार भी हम तोड़ डाले तो शक्ति, भक्ति और शांति हमें जयमाला पहनाने के लिए तैयार। तो इस प्रसंग का तात्त्विक अर्थ इतना।

'अयोध्याकांड' में बहुत सुख का वर्णन है। लेकिन अतिशय सुख अतिशय दुःख का कारण बना। राम वनवास हुआ। और चौदह साल का भगवान का वनवास। भगवान चित्रकूट विहारी बने। राम के विरह में दशरथजी का प्राणत्याग। ननिहाल से भरत का लौटना। और पूरी अयोध्या को लेकर चित्रकूट जाकर भगवान राम की शरण में अश्रुपात करके, प्रभु का निर्णय कुबूल करके, कृपा से पादुका प्राप्त करके भरतजी लौटते हैं। और पादुका सिंहासन पर विराजित करके, पादुका का आदेश ले-ले करके राज्य का संचालन करते हैं। तपस्वी जीवन जीते हैं। बाप! 'अयोध्याकांड' का केन्द्रीय विचार है प्रेम।

'अरण्यकांड' में भगवान राम चित्रकूट से यात्रा आगे करते हैं। घूमते-घूमते प्रभु पंचवटी में आते हैं। पंचवटी में लक्ष्मणजी को पांच प्रश्नों के उत्तर देते हैं। फिर शूर्पणखा आती है। लक्ष्मणजी को भगवान राम ने आध्यात्मिक उपदेश नहीं दिया तब कोई शूर्पणखा नहीं आई। इसका मतलब ये है कि जीव जितना-जितना ऊंचाई पकड़ता है, कोई न कोई विरोधीतत्त्व विक्षेप करने आ जाता है। आपमें यदि प्रेम है, आपमें सच्चाई है, आपमें करुणा है, ये सब जानते हुए भी आपके सामने बाधाएं आये तो समझना कि मेरी ऊंचाई बढ़ रही है इसीलिए ये शूर्पणखारूपी बाधाएं आ रही है। और बाधाएं हंमेशा खूबसुरत बन कर ही आती है। लक्ष्मण ने राम के कहने पर उसको दंड़ित किया। शूर्पणखा लंका गई। रावण को उकसाती है। यहां खर-दूषण को उकसाया। परमात्मा ने खर-दूषण को निर्वाण प्रदान किया। और भगवान फिर ललित लीला का निर्णय करते हैं। जानकीजी को अग्नि में समाविष्ट कर देते हैं। माया सीता को रखते हैं। और यहां रावण योजना बनाकर मारीच को लेकर आता है। जहां कोई सत्य तत्त्व है इसके इर्द-गिर्द में सोने के हिरन कूदते ही रहते हैं। क्योंकि ये सत्य, सत्त्वता है इसलिए अगल-बगल में प्रलोभन आयेगा। स्वर्ण मृग की कथा आई।

भगवान को लीला आगे बढ़ानी थी। परमप्रेमी मारीच को परमपद दिया। सीता का अपहरण हुआ। जानकीजी अशोकवाटिका में बंदी बनाई गई। जानकी की खोज करते हुए ललित नरलीला करते हुए प्रभु रोते हुए वनविहार करते हैं। और फिर भगवान इसी यात्रा में आगे बढ़ते हैं। जटायु मिलते हैं जिन्होंने शहीदी ली। उसके बाद भगवान शबरी के पास पहुंचते हैं। उसके बाद 'अरण्यकांड' के अंत में नारद का मिलन है। उसके बाद 'किष्किन्धा' में हनुमानजी का मिलन। उसके बाद सुग्रीव का मिलन। ये पांच मिलन बड़ा महत्त्व का है। हमारे धर्म में आचार्यों ने अर्थपंचक दिया है। इतना संकेत सुन लो। अर्थपंचक है।

स्वस्वरूप ये पहला अर्थपंचक है। अपने का स्वरूप। दूसरा है परस्वरूप। तीसरा है स्वस्वरूप का उपाय; उसको पाने का उपाय। चौथा है उसका फल। और पांचवां है उसकी बाधाएं कौन-कौन है? भगवान और जटायु का मिलन ये स्वस्वरूप अर्थपंचक की साधना है। भगवान और शबरी का मिलन ये परस्वरूप साधना का अर्थपंचक है। भगवान और नारद का मिलन ये स्वस्वरूप के उपाय की साधना का अर्थपंचक है। और हनुमानजी का मिलन ये स्वस्वरूप के फल की साधना है। और आखिर में सुग्रीव का मिलन आनेवाली बाधाओं से मुक्ति कैसे मिले उसका है। लेकिन ये बड़ा आध्यात्मिक प्रसंग है।

यहां शबरी के आश्रम में प्रभु आये। नौ प्रकार की भक्ति। मातृभाव देख करके शबरी के फल खाए। भगवान पंपा सरोवर गए। नारदजी मिले। आदमी की इच्छा पूरी न हो तो ये आदमी को बहुत खटकता रहता है। नारदजी को 'बालकांड' में शादी नहीं होने दी न भगवान ने। इसीलिए वो अभी गया नहीं मन से। इसीलिए 'अरण्यकांड' में मिले तो कहा, महाराज, उस समय मेरे ब्याह में आपने रुकावट क्यों डाली? मैंने आपका क्या बिगाड़ा था? तब प्रभु ने कहा, 'प्रमदा सब दु:ख खानि।' प्रमदा मानी प्रमादी नारी, आलसी स्त्री वो परिवार के लिए दु:खदायी है। प्रभु ने नारद को बोध दिया। रामनाम की महिमा कही। संत के गुणों का वर्णन किया। और नारदजी बिदा हुए।

'अरण्यकांड' के बाद तीस दोहे हैं, 'किष्किन्धाकांड' की बड़ी महिमा है। ये बिलकुल मध्यकांड। 'किष्किन्धाकांड' में हनुमानजी और रामजी का मिलन है। राम और सुग्रीव की दोस्ती होती है। उसके बाद वालि को निर्वाण मिलता है। अंगद को युवराज पद दिया। सुग्रीव को राजा घोषित किया। भगवान चातुर्मास के लिए प्रवर्षण पर निवास कर रहे हैं। चातुर्मास पूरे हुए। सुग्रीव को

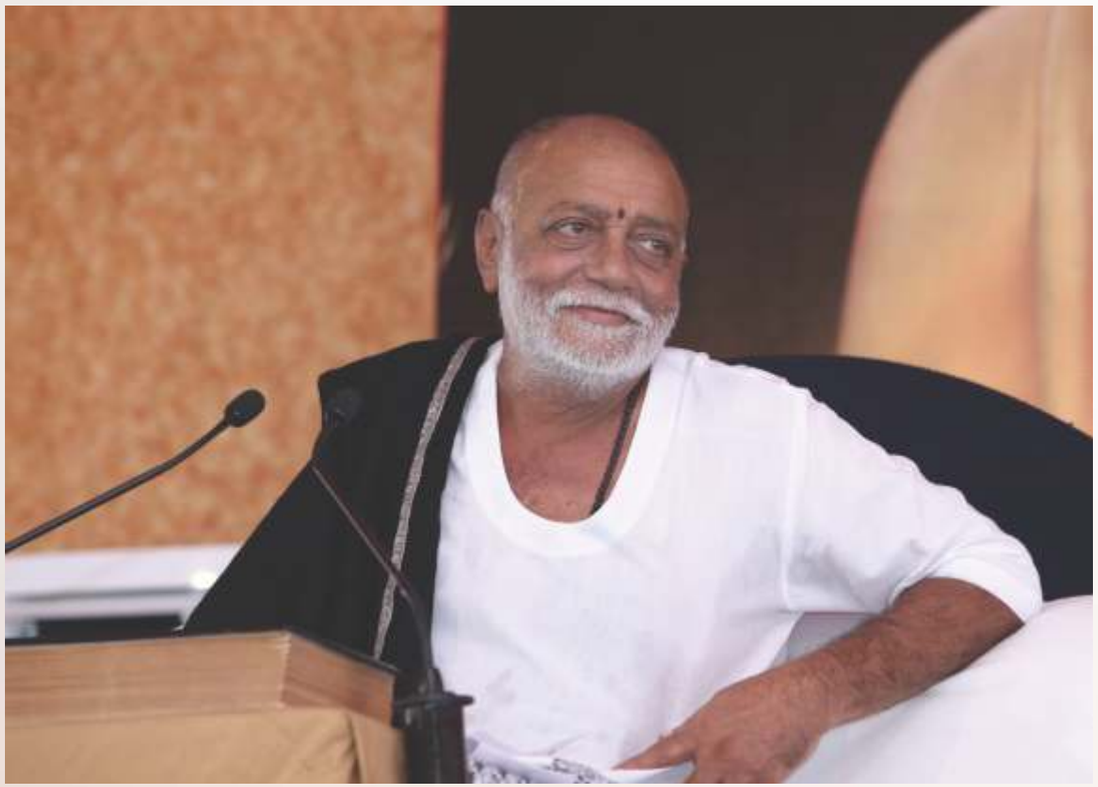

भोग मिल गया तो प्रभु को भूल गया। भगवान ने लक्ष्मण को कहा कि सुग्रीव को थोड़ा भय दिखाकर के शरण ले आओ। सुग्रीव सावधान होता है। भगवान की शरण में आता है। और फिर जानकी की खोज का अभियान चलता है। सभी दिशाओं में बंदर-भालूओं को भेज दिए सीता की खोज के लिए। और अंगद को टुकड़ी का नायक-नेता बनाकरके, जामवंत को सलाहकार बनाकरके और जिसमें नल-नील भी है, हनुमानजी भी है ऐसी एक महत्त्व की टुकड़ी को दक्षिण दिशा में सीता की शोध के लिए भेजने का निर्णय हुआ। सब परमात्मा को प्रणाम करते हुए दक्षिण की ओर यात्रा में निकलने की तैयारी। सबसे अंत में हनुमानजी ने प्रणाम किया।

युवान भाई-बहन, मैं खास कहना चाहूंगा कि हनुमानजी के जीवन को समझें आप। सेवक तो लक्ष्मण भी है और सेवक भरत भी है अपनी-अपनी जगह पर। एक साधु की कूटस्थ-तटस्थ दृष्टि से कहना चाहूं तो हनुमानजी जैसी सेवा नहीं हो सकती। भरतजी भगवान के पास रहकर प्रभु के सामने भी नहीं देख सकते इतना संकोची स्वभाव है। निकट रहकर वो सेवा नहीं कर सकते। भरतजी दूर रहकर सेवा करते हैं। और लक्ष्मण ऐसे हैं कि निकट रहे बिना सेवा नहीं कर सकते। दूर रहना मना। राम कहे तो भी नहीं। मैं माता-पिता किसीको जानता ही नहीं। मेरे तो आप ही सबकुछ है। मेरा हनुमान एक मात्र है कि उसको दूर रखो तो भी सेवा करे। निकट रखो तो भी सेवा करे। जिसको सेवा ही करनी है उसको दूर-नैकट्य का तफ़ावत नहीं देखना चाहिए। श्री हनुमानजी को प्रभु निकट रखे तो भी सेवा करे। और हनुमानजी को भगवान कहे कि तू सीता की खोज लेने के लिए चला जा। तुझे यहां रहने की जरूरत नहीं। तू जा। तो दूर भी चला जाये। सबको भगवान ने पुष्पक विमान में बिठाए। सबको निकट बिठाए और हनुमानजी को कहा कि तू अयोध्या चला जा भरत को खबर देने के लिए। इसी प्रसन्नता से हनुमानजी अयोध्या चले जाते हैं।

ये आदमी गज़ब है! छलांग लगाये तो आसमान को छू लेता है। 'बाल समय रवि भक्ष लियो।' और वही हनुमान जरूरत पड़ी सेवा की तो 'मसक समान रूप कपि धरि।' मच्छर बन जाता है। सेवा ही करनी है तो बड़ा-छोटा उसके कोई भेद होने नहीं चाहिए। वो ही हनुमान मौन लेता है तो बिलकुल चुप। बोलता ही नहीं। जामवंत को कहना पड़ा, 'का चुप साधि रहेहु बलवाना।' और गर्जना करे तो 'सिंहनाद करि बारहिं बारा।' गर्जना करे तो आसमां तोड़ दे! कभी परमात्मा के चरण की सेवा मिले तो 'बड़भागी अंगद हनुमाना।' चरण की सेवा करे। लेकिन एक मंज़र मैं आपके सामने रखना चाहूं। रामराज्य के बाद अयोध्या की अमराई में भगवान राम, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न सब गए हैं। उसी समय भरत ने अपना वस्त्र बिछाया। भगवान उस पर थोड़े लेटे। चरणसेवा करने की थी लेकिन हनुमानजी का हलन-चलन न देखा। भरत ने तो अपनी सेवा कर ली। प्रभु ने अपना सिर भरत को आधार बनाकर रख लिया। हनुमानजी थोड़े हिले नहीं। तो लक्ष्मण और शत्रुघ्न दोनों ने चरण की सेवा शुरू कर दी। हनुमानजी ने कहा कि कोई बात नहीं। उस समय हनुमानजी ने पंखा लेकर मरुत वहन करने की सेवा ले ली। हमारी क्या है? 'हमें यही सेवा मिलनी चाहिए। चरणसेवा तो हमारा अधिकार है!' एकमात्र हनुमान है ऐसा कि जिसका कोई चुनाव नहीं। ये बड़ा भी बने, छोटा भी बने। हनुमानजी कहीं घेरे में नहीं आते। हनुमानजी ग्रुप से बाहर हैं। हनुमानजी महाराज का व्यक्तित्व हमें बहुत बोध दे सकता है। वो हनुमानजी सबसे आखिर में प्रणाम करे। सेवा करे उसको आखिरी पंक्ति में रहना कि आगे रहना वो जिद्द नहीं होनी चाहिए। हनुमान आखिर में थे इसलिए उसको सबकुछ मिला। और वो मुद्रिका प्रभु ने उसको दे दी।

तो श्री हनुमानजी ने रामनाम की मुद्रिका अपने मुंह में रखी और ये यात्रा चलती है। बीच में अन्वेषण चला। स्वयंप्रभा मिली आदि-आदि। यही हनुमानजी जो पीछे है वो सब बंदरों को तृषा लगी तब आगे आये। सब घबरा गए कि पानी बिना मर रहे हैं! अब क्या करे? अंगद भी घबरा गया। तो एक पर्वत की गुफ़ा में पक्षी उड़ रहे थे उसको देखकर हनुमानजी ने कहा, मुझे लगता है, वहां पानी होना चाहिए क्योंकि पक्षी उड़ रहे हैं। हम उस गुफा में जाएं।

अंगद ने कहा, नहीं, अभी तक मैं आगेवान था लेकिन अब मैं आगे नहीं रहूंगा। हनुमान, आप आगे आओ। जब खतरा था तब हनुमानजी आगे आ गए। जब पूरी सलामती थी तब पीछे रहे। हनुमानजी आगे हो गए। इसका अर्थ इतना ही समझो कि हमको बहिर् दिखता है। लेकिन कृपा बहिर् नहीं होती, अदृश्य होती है। किसी की कृपा दिखती नहीं। हनुमानजी को विश्वास है। विश्वास के रूप में इसलिए कहा कि मैं आगे चलता हूं। चलो, कृपा तक ले जाऊं। गुफ़ा में गए। स्वयंप्रभा मिली। समुद्र के तट पर आये। सम्पाति मिला। और फिर हनुमानजी महाराज जानकी की खोज के लिए 'सुन्दरकांड' में छलांग भरते हैं। और 'सुन्दरकांड' का आरंभ होता है-

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।
प्रबिसि नगर कीजे सब काजा।
हृदय राखि कोसलपुर राजा।।

श्री हनुमानजी छलांग लगाते हैं विघ्नों को पार करते-करते राम नाम के प्रताप से। मुख में रामनाम है इसलिए विघ्न यात्रा को रोक नहीं पाए। हनुमानजी लंका में प्रवेश करते हैं। पूरी लंका में घूमे। विभीषण का भवन देखा। सोचने लगे कि लंका तो राक्षसों की नगरी। यहां सज्जन कैसा? तुलसी का एक सूत्र है कि ब्रह्मा की सृष्टि गुण और अवगुण से मिश्रित है। दृष्टि हो तो लंका में भी विभीषण मिल जाता है। और अयोध्या तो समझदारों की नगरी लेकिन वहां भी मंथरा मिल सकती है। परमात्मा का सृजन गुण-अवगुण मिश्रित है, मात्राभेदे। हनुमानजी और विभीषण की भेंट होती है। विभीषण जानकी के पास पहुंचने की युक्ति बताता है। हनुमानजी माँ के पास पहुंचते हैं। बीच में रावण आता है। जानकी को प्रलोभन देता है। सीताजी अपने सामने जो घास था उसमें से एक तिनका लेकर के रावण को मानो बता रही है कि आप कितना भी प्रलोभन मुझे बताये लेकिन तुम्हारी समृद्धि मेरे पास ये तिनके के बराबर है। इसकी कोई कीमत नहीं है। मुझे पता है, लंकेश की बात यदि मैं न मानूं तो मृत्यु हो सकती है। लेकिन राम वियोग में मुझे मेरा प्राण तिनके बराबर भी प्रिय नहीं है। मुझे कुछ नहीं चाहिए। अथवा तो बेटी पर बहुत कष्ट होता है न तब उसको माँ याद आती है। और माँ चुप हो, कुछ न बोले तो फिर दूसरा याद आता है कि मेरा भाई मुझे मदद करे। पृथ्वी माता है। तिनका ये पृथ्वी का पुत्र है। जानकी पृथ्वी की पुत्री है इसलिए बहन-भाई हो गए। आज भाई को हाथ छुआ करके कहती है कि भाई, आज मेरे पर नौबत आई है। तू मुझे बचाना; तु मुझे मदद करना। इसलिए 'तृन धरि ओट कहति बैदेही।' वैराग्यवान को समस्त सिद्धियों को तृण की तरह त्यागना होता है। तृण समान तमाम सिद्धियों को छोड़ देने की बात। जानकी का वैराग्य भी यहां दर्शित होता है। रावण हारकर चला गया।

यहां जानकी अग्नि मांग रही है। पांच व्यक्तियों से अग्नि मांगा तब त्रिजटा कहती है, यहां रात को अग्नि नहीं मिलेगी। ढ़ाढ़स देकर त्रिजटा गई। सीताजी बहुत दु:खी। उसी समय सोच करके हनुमानजी ने मुद्रिका डाली। जानकी ने मुद्रिका ले ली। पहचानी। और उसके बाद हनुमान और जानकी का, माँ और बेटे का मिलन हुआ। जानकीजी ने आशीर्वाद दिया। उसके बाद हनुमानजी को भूख लगी। जानकीजी ने कहा कि बेटा, ये तो अशोकवाटिका है। रघुवीर के चरणों को हृदय में धारण करके मधुर-मधुर फल खाना। और मधुर फल क्या है? रामनाम। परमात्मा का नाम लेकरके हनुमानजी ने फल खाए। तरु तोड़े। राक्षस से संघर्ष हुआ। अक्षयकुमार आया। अक्षय को मार दिया। उसके बाद इंद्रजित आया और हनुमान को बांधकर ले गया। हनुमानजी रावण की सभा में जाकर खड़े हैं। फिर हनुमान और रावण का संवाद है। हनुमानजी को मृत्युदंड की बात हुई। विभीषण ने कहा कि नीति मना करती है। दूत को मृत्युदंड न दिया जाए; ओर दंड दिया जाए। और फिर मंत्रीमंडल इकठ्ठा हुआ। निर्णय लिया कि बंदर को पूंछ पर ममता होती है। इसकी पूंछ जला दी जाये। हनुमानजी मुस्कुराने लगे कि मुझे लगता है, आपको सरस्वती मदद कर रही है! मेरी प्रतिष्ठा मुझको अच्छी नहीं लगती। प्रतिष्ठा को मैंने पीछे कर दिया है। हनुमान ने पूंछ के रूप में प्रतिष्ठा को पीछे रखी है। फिर भी जीव के नाते प्रतिष्ठा मुझे डोला न दे। इसलिए ये प्रतिष्ठा जल जाये तो बेहतर है। जला दो। मूढ़-

असुरों घर-घर से घी-तेल लाये, कपड़े लाये। हनुमानजी की पूंछ को लपेटा और फिर अग्नि लगा दिया। उसके बाद पूरी लंका ऊलट-पुलट जलाई।

मेरा अर्थ तो इतना ही है कि भक्ति का जो दर्शन करता है उसको समाज जलाने की कोशिश करता है। उसकी प्रतिष्ठा गिराने की कोशिश करता है। लेकिन भक्ति का सही दर्शन किया होगा और भक्ति के सही आशीर्वाद प्राप्त किए होंगे तो जलानेवाले जल जायेंगे। जिसको जलाना है वो अक्षुण्ण रहेगा। हनुमानजी हमको बहुत बड़ा बल दे सकते हैं। भरोसे को दृढ कर सकते हैं। तो बाप! प्रतिष्ठा बिगाड़नेवाले लोग आयेंगे। हनन करनेवाले लोग आयेंगे। हनुमानजी समुद्र में पूंछ बुझाते हैं। स्नान किया समुद्र में। लघुरूप धारण किया। माँ जानकी के सामने जाकर वो खड़े रहे। अब माँ से कहते हैं, माँ, मुझे राम के लिए कुछ संदेश और निशानी दे। और माँ ने चूडामणि दिया। और संदेश भी दिया। श्री हनुमानजी महाराज माँ को ढ़ाढ़स देकर लौटते हैं। और यहां बंदर भालू जो समंदर के तट पर थे वो जयजयकार करने लगे। सुग्रीव के पास गए। हनुमानजी की कथा सुनाई गई। राम के पास आये। जामवंत ने हनुमंत चरित्र का गायन किया। प्रभु और हनुमानजी भेंटे। परमात्मा की पूरी सेना समंदर के तट पर आई। यहां विभीषण रावण से अपमानित होकर राम की शरण में आया। भगवान ने मित्रों की सलाह ली कि समंदर है, कैसे पार करे? और उसी समय तीन दिन अनशन और अनुष्ठान करने को प्रभु को कहा। तीन दिन में समुद्र ने कोई जवाब नहीं दिया। भगवान ने कहा, 'लछिमन बान सरासन आनू।' मैं अग्नि के बाण से समुद्र को जला डालूं। तब समुद्र ब्राह्मण के रूप में प्रभु की शरण आता है। भगवान से कहता है कि महाराज, आपकी सेना में नल-नील है। सेतु बनायें। सेतुबंध का विचार प्रभु का स्वभाव है।

'लंकाकांड' के आरंभ में सेतुबंध हुआ। उत्तम धरणी देखकर भगवान को हुआ कि मैं यहां शिव की स्थापना करूं। ऋषि-मुनियों को बुलाये गए। और वेदमंत्रों के साथ भगवान शिव की स्थापना हुई। शिवलिंग का स्थापन हुआ। भगवान रामेश्वर का जयघोष हुआ। राम ने शिव की स्थापना की। शिव और राम का ऐक्य बताया कि कोई भेद नहीं है। पूरी सेना समंदर पार करती है। सुमेर पर्वत पर परमात्मा ने डेरा डाला। लंका में त्रिकूट हैं, तीन शिखर हैं। चित्रकूट में केवल एक ही कूट है। यहां लंका में तीन हैं। और तीन पर बिलग-बिलग व्यवस्था है। एक कूट पर तो लंका है। दो कूट खाली है। और एक कूट पर रावण का अखाडा है, जहां वो मनोरंजन प्राप्त करने के लिए जाता है। दशानन महाराज पधारे हैं, सुनते ही स्वर्ग से अप्सराएं आई। गन्धर्व आये। किन्नर आये। साज-बाज सब सध गए और रावण के मनोरंजन के लिए जो महफ़िल! काल माथे पर हैं और फिर भी आदमी महफिल में बैठा है! निर्भीकता तो कोई रावण से सीखे। भगवान लेटे हुए देख रहे हैं। और फिर भगवान एक बाण से रावण का रसभंग कर देते हैं।

प्रेममार्ग की समाधि को महारस कहते हैं। रावण इस महारस में है। यहां समाधि का संकेत। इस महारस में यदि डूब गया तो उसका निर्वाण नहीं होगा। इसलिए उसको कैसे भी बाहर निकालना। इसलिए 'कीन्ह महारस भंग।' तुलसी कहते हैं, उसके महारस में विक्षेप कर दिया। छत्र मुकुटादि टूटे तो भी कोई चिंता नहीं। सेवकों ने सबसे कहा कि आपके सिर से मुकुट गिर गए। बोले, शूरवीरों के सिर गिर जाएं तो भी कोई चिंता नहीं, मुकुट कौन है? मुकुट गिरे तो भी कोई चिंता नहीं। और लंका के युद्ध में मस्तक गिरे, काटे गए, कोई चिंता नहीं। मंदोदरी ने समझाया। हंसता रहा आदमी। दूसरे दिन राजदूत के रूप में अंगद को भेजा गया। बहुत चर्चाएं हुई। युद्ध अनिवार्य हुआ। रावण को इकत्तीस बाण से वीरगति प्राप्त हुई। 'राम' कहकर पडकार करता हुआ गिरा। रावण का तेज राम के चेहरे में प्रवेश कर गया। मंदोदरी ने प्रभु की स्तुति की। शोक व्यक्त हुआ। रावण की क्रिया हुई। और विभीषण को राज तिलक।

एक वस्तु याद रखना मेरे भाई-बहन, कृपा में विवेक नहीं होता। सेवा में विवेक जरूरी है। किसी पर दया करने में विवेक। बाकी कृपा में विवेक नहीं। कृपा किसी को देखती नहीं कि पात्र है कि कुपात्र है। कृपा विवेकशून्य होती है। भला-बुरा नहीं सोच सकती। कृपा की ये महिमा

है। और राम क्या है? 'कृपा बारिधर राम खरारी।' औरों का उद्धार किया। स्वयं रावण की मुक्ति के प्रभु कारण बने। जानकीजी को खबर दी। जानकीजी अग्नि में समाई हुई थी। अग्नि से बाहर आई। जानकी और राम मित्रों के साथ पुष्पक विमान में आरूढ होते हैं। पुष्पक में सबको साथ लिए। हनुमानजी को अयोध्या भेज दिए। समरांगण का रामजी दर्शन करा रहे। जानकी को कर्तृत्व का लोप करते हुए राम ने सब बताया। उसके बाद सेतुबंध का दर्शन करवाया। रामेश्वर का दर्शन किया। कुंभज आदि महात्माओं के वहां गए और वहीं से प्रभु का विमान शृंगबेरपुर ऊतरा। गुह और ये निषाद, ये वंचित, ये उपेक्षित लोग आखिरी लोग समाज के चौदह साल प्रतीक्षा में थे कि राघव के पास हमने कहा था, लौटते समय जो दोगे सो लेंगे। लेने की कोई इच्छा नहीं थी, लेकिन दर्शन चाहिए था। परमात्मा सबकी खबर अंतर पूछते हैं। लोग पांच साल में भूल जाते हैं! चौदह साल के बाद मेरे ठाकुर ने याद किया। केवट कहां है? और ये गरीब अपने बीबी-बच्चों के साथ दौड़ा। भगवान ने कहा कि आपकी उतराई देने के लिए आया हूं। क्या दूं? ठाकुर, हम गरीब जरूर हैं, लेकिन उदार भी हैं। ये तो बहाना था कि पुनः आपके दर्शन हो। प्रभु, यदि आप उतराई देना चाहते ही है तो हमने नौका में बिठाया था, आप हमें विमान में बिठाकर अवध लिए चलें। और प्रभु ने निषाद को अपने विमान में साथ में लिया। गोस्वामीजी वहां 'लंकाकांड' पूरा कर देते हैं।

'उत्तरकांड' के आरंभ में करुणरस प्रधानता लिए खड़ा है। एक दिन बाकी है अवधि में। डूबते को जैसे जहाज मिले वैसे हनुमानजी आ गए। हनुमानजी ने खबर दी, सकुशल राघव पधार रहे हैं। पूरी अयोध्या में बात फैल गई। हनुमानजी गए। प्रभु को खबर दी कि विलंब न करें महाराज। सरजू के तट पर प्रभु का विमान ऊतरा। पूरी प्रजा दौड़ी। भगवान विमान से बाहर आये। तुलसी का मिशन देखिये, जितने भालू-बंदर भगवान के साथ थे वो विमान से ऊतरे तो 'धरे मनोहर मनुज सरीरा।' सब मनुष्य का शरीर धारण करके ऊतरे। इसका मतलब ये है कि 'मानस' पशुता से मानवता अर्जित करने की फार्म्यूला है। यद्यपि देवताओं ने जानबुझकर पशुता कुबूल की थी। सब मानव बनकर प्रकटे। गुरुदेव वशिष्ठ को देखते ही राम अपने शस्त्रों को छोड़कर शास्त्रवेत्ता के चरण पकड़ लेते हैं। मुनियों को प्रणाम किया। भरत और राम मिले तब तो पता ही नहीं रहा कि वनवास किसका था? सब भाव में डूबे हैं। सबकी योग्यता के अनुसार परमात्मा ने सबको साक्षात्कार दिया। अवध धन्य बनी। गृह जाने के लिए परमात्मा अवध में प्रवेश करते हैं और सबसे पहले प्रभु कैकेई के भवन गए। माँ के संकोच और लज्जा दूर किया कि माँ, जरा भी मन में ग्लानि मत रखना। तूने मुझे वन नहीं भेजा होता तो आज मैं ये राम नहीं होता। अपने घर प्रभु आये। सुमित्रा को मिले। माँ कौशल्या को मिले। जानकी को सासुओं ने स्नान करवाया। रामजी ने अपने भाईयों को स्नान करवाया। अपनी जटा खुद खोली। चौदह साल बाद वो राज्य का पोशाक धारण किया गया।

भगवान वशिष्ठजी ने दिव्य सिंहासन मांगा। और भगवान सत्ता के पास नहीं गए। सत्ता सत्य के पास आई। भगवान राम को वशिष्ठजी ने कहा, राघव, आप गादी पर विराजित होइए। और विश्व को रामराज्य देते हुए भगवान वशिष्ठ ने राम के भाल में तिलक किया-

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

त्रिभुवन में जयजयकार हुआ। माताओं ने आरती ऊतारी। चार वेद बंदीजन के रूप में आकर प्रभु की स्तुति करके ब्रह्मभवन गए। बाद धूर्जटि महादेव शंकर स्वयं अपने मूल रूप में कैलास से सीधे राज दरबार में आये और परमात्मा की स्तुति की। भक्ति का और सत्संग का वरदान मांगकर भगवान शंकर कैलास गए। मित्रों को प्रभु ने निवास दिया। छः महिने बीत गए। हनुमानजी के सिवा सबको बिदा दी। सुन्दर रामराज्य का वर्णन। समय मर्यादा पूरी हुई। राम की ललित नरलीला। जानकी ने दो पुत्रों को जन्म दिया। लव-कुश का नाम देकर रघुवंश के वारिस की बात करके रामकथा वहां विराम कर दी गई। उसके बाद बाबा भुशुंडिजी का जीवनदर्शन है। गरुड ने आखिर में सात प्रश्न पूछे और बाबा भुशुंडि ने सात प्रश्नों के उत्तर दिए। और उसके बाद कागभुशुंडि ने गरुड के पास रामकथा को

विराम दे दिया। भगवान महादेव पार्वती से कहते हैं, देवी, अब कुछ सुनना है? बोले, महाराज, मैं कृतकृत्य हो गई। फिर भी तृप्ति नहीं हुई। शिव ने कथा को विराम दिया। याज्ञवल्क्यजी ने दिया कि नहीं खबर नहीं। और आखिर में तुलसी समग्र रामकथा का सार देते हुए-

रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि।
संतत सुनिअ रामगुन ग्रामहि।।

इस कलिकाल में ओर कोई साधन हम जैसों के लिए नहीं है। केवल हरिनाम है। तुलसी कहते हैं, नाम के प्रताप से मेरे जैसा अति मतिमंद आज परम विश्राम को प्राप्त करता हूं।

तो बाप! चारों आचार्यों ने रामकथा को विराम दे दिया। आज इन चारों परम आचार्यों की आशीर्वादक छाया में बैठकर बिहार की चेतनामयी भूमि और उसके पाटनगर पटना के ऐतिहासिक गांधी मैदान में फिर एक बार इतने सालों के बाद रामकथा गाने का अवसर मिला। मेरी व्यासपीठ भी नौ दिवसीय कथा को विराम देने की ओर है तब और तो क्या कहूं? आपने नौ दिन बहुत आदर और श्रद्धा से सुना है। जो बातें गुरुकृपा से, ग्रंथदर्शन से, संतों की कृपा से, किसी से बातचीत से, साहित्य से और कुछ गुरुकृपा की अनुभूति से जो पाया था वो प्रसाद की तरह बांटा गया। खास कर आप युवान भाई-बहनों, 'मानस' की इस नौ दिवसीय रामकथा 'मानस-बिहारी' से आपको आपके जीवन के लिए कोई महत्त्व की बात यदि लगी हो तो उसको पकड़े रहियो। जीवन के किसी मोड़ पर विश्वास रखोगे तो ये बात काम आयेगी। मैं कभी-कभी कहता रहता हूं, आज नौवें दिन मैं ये रामकथा की जो पोथी है उसको बंद कर रहा हूं। आप जीवन की पोथी को खोलियेगा और इससे प्रेरणा मिलेगी। पूरे आयोजन से मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। आध्यात्मिक सत्संग समिति ने, इस कथा के निमित्तमात्र यजमान परिवार खेतानबाबू और उसका परिवार और आप सब जो-जो इसमें जुड़े हैं। सब जुड़े हैं। आप सबके इस प्रेमयज्ञ को सफल करने के लिए वित्तजा, तनुजा अथवा मानसी सेवा जो आपने लगाई इससे मेरी व्यासपीठ प्रसन्नता व्यक्त करती है। आशीर्वाद तो हम क्या दे लेकिन हनुमानजी के चरणों में प्रार्थना जरूर करूं कि आप खुश रहे, खुश रहे, खुश रहे।

तो मैं मेरी पुनः बार-बार प्रसन्नता करता हूं। पूरे बिहार ने व्यासपीठ को इतना आदर दिया है। ये आप बिहारियों की महिमा है। क्योंकि मैंने कथा ही तो 'मानस-बिहारी' रखा। आखिर में हम सब दो का विहार करें। एक, किसी बुद्धपुरुष का आश्रय विहार करें। और दूसरा कृष्णप्रेम में अपने अश्रु में विहार करें। आश्रय और अश्रु। इस कलियुग में हम जैसों को तारने के लिए इससे ज्यादा कोई सरल उपाय मैं नहीं समझता हूं कि हमारी आंखें कृष्णप्रेम में भीगी रहे और हमें हमारे बुद्धपुरुष, हमारे सद्गुरु की स्मृति कभी विस्मृत न हो। और आखिर में श्री हनुमानजी को विदा दूं इससे पूर्व ये नौ दिवसीय रामकथा हम किसको अर्पण करे? तो इसको मैं किसी को नहीं लेकिन 'मानस-बिहारी' जो शीर्षक रखा था; नौ दिवसीय कथा का पूरा फल मैं बिहार के बिहारी भाई-बहनों को अर्पण कर रहा हूं। आपको ये समर्पित है रामकथा। परमात्मा आपको प्रसन्न रखे। परमात्मा आपको संपन्न रखे। परमात्मा आपको किसी सत्य-प्रेम-करुणा के प्रति प्रपन्न भी रखे।

श्री हनुमानजी ने रामनाम की मुद्रिका अपने मुंह में रखी और ये यात्रा चलती है। यही हनुमानजी जो पीछे है वो सब बंदरों को तृषा लगी तब आगे आये। एक पर्वत की गुफा में पक्षी उड़ रहे थे उसको देखकर हनुमानजी ने कहा, मुझे लगता है, वहां पानी होना चाहिए क्योंकि पक्षी उड़ रहे हैं। हम उस गुफा में जाएं। अंगद ने कहा, नहीं, अभी तक मैं आगेवान था लेकिन अब मैं आगे नहीं रहूंगा। हनुमान, आप आगे आओ। जब खतरा था तब हनुमानजी आगे आ गए। जब पूरी सलामती थी तब पीछे रहे। इसका अर्थ इतना ही समझो कि हमको बहिर् दिखता है। लेकिन कृपा बहिर् नहीं होती, अदृश्य होती है।

मानस-मुशायरा

फ़ैसला एक लम्हें में तय हो जाता।
दिल मिला लेते अगर हाथ मिलानेवाले।

– बशीर बद्र

काफ़ी नहीं फ़कीरी में दुनिया को छोड़ना।
कुछ आपका मिजाज़ भी रुहानी होना चाहिए।

– राजेश रेड्डी

उलझनों में खुद उलझकर रह गए वो बदनसीब।
जो तेरी उलझी हुई जुल्फों को सुलझाने गए।।

– शमीम जयपुरी

या तो कुबूल कर मेरी कमज़ोरियों के साथ।
या छोड़ दे मुझे मेरी तन्हाइयों के साथ।
लाज़िम नहीं कि हर कोई हो कामयाब ही,
जीना भी सीख लीजिए नाकामियों के साथ।

– दीक्षित दनकौरी

अमीरे शहर कहता है कि ज़माना मुझसे चलता है।
पर उसकी बात पर खुलकर फ़कीरे दश्त हंसता है।
अजब काजल मेरी आंखों में उसने ये लगा डाला।
कोई चेहरा हो कैसा भी मुझे सुन्दर ही दिखता है।

– राज कौशिक

कवचिदन्यतोऽपि

मेरे लिए गंगाजल और ज़मज़म में भेद नहीं है

फिफाद दरगाह पर आयोजित समूह-शादी के अवसर पर मोरारिबापू का प्रेरक उद्‌बोधन

आज फिफाद गांव में एक पवित्र दरगाह की दुआ की छाया में पवित्र उर्स के समय मुस्लिम समाज के सत्तावन दंपती शादी के बंधन में जुड़ रहे हैं। ऐसे मंगल प्रसंग पर मंच पर उपस्थित अपने सबके परम आदरणीय सरलमूर्ति दादाबापू को मेरा बहुत-बहुत सलाम। आपकी सादगी को सलाम, आपकी सहजता को सलाम। मैं नमन करता हूं। मंच पर विराजित सभी आदरणीय मौलाना, इस कार्यक्रम की कमिटी के सभी सदस्य, इसमें योगदान देनेवाले सभी दातागण, सत्तावन दुल्हा-दुल्हन, उसके परिवारजन और अन्य सभी को भी मैं बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूं कि आपने इतना मंगल प्रसंग यहां आयोजित किया। फिफाद से गुजरना तो कई बार हुआ। पहले भी इसके इतिहास के बारे में कुछ जानता था। लेकिन पहली बार ये मंज़र जो देख रहा हूं ये बड़ा देवताई लगता है, नूरानी लगता है। शादी तो रजोगुणी होती है। भौतिक बात है। प्रसंग तो भौतिक है, रजोगुणी है। संसार में प्रवेश है लेकिन माहौल जो आपने बनाया है ये दरगाह की दुआ के कारण और दादाबापू जैसे फ़कीरों की दुआओं के कारण ये जो माहौल और मंज़र पैदा हुआ है, ये मुझे एक साधु के नाते बड़ा नूरानी नजर आ रहा है। और ऐसा ही कार्यक्रम चला हमारे देश में, हमारे गांवों में, जहां-जहां हम सब विध-विध धर्मवाले एक होकर निवास करते हैं, ऐसा ही चला तो इस देश का और विश्व का बहुत उज्ज्वल भविष्य है, नि:शंक।

मैं कभी-कभी चार पंक्तियां कहता रहता हूं। अब ये ऐतिहासिक घटना है कि नहीं, अल्लाह जाने लेकिन मैं कहता रहता हूं जो एक फ़कीर से सुना था कि गालिबसाहब को मित्रों ने इकठ्ठे होकर आग्रह किया कि आप हजयात्रा कर आओ। तो गालिब ने कहा कि मैं हजयात्रा कैसे करने

जाऊं? उसमें कैसे नियम हैं? कैसी पाबंदियां है? कितनी-कितनी शर्त? वो सब पूरा करना पड़ता है। मैं अकिंचन गरीब फ़कीर कैसे हजयात्रा को जाऊं? लेकिन मित्रों ने कहा कि सब रस्में हम निभा लेंगे। आप जाओ। हम सब व्यवस्था जुटा देंगे। गालिब को तैयार किया हजयात्रा के लिए। मिर्ज़ा गालिब जाने के लिए तैयार हुए। सब विदा दे रहे थे। तब गालिब की आंख में प्रेम के आंसू थे और अपने स्नेहियों को वो कहने लगे चार पंक्ति, वो मैं आपको सुनाना चाहता हूं। गालिब ने कहा था कि-

मोहब्बत में दिल आज घबरा रहा है।

आप लोगों ने इतनी इज्ज़त दी, इतनी मोहब्बत दी, आप मेरे से पाकयात्रा करवाने के लिए इतने उत्सुक हैं और भेज रहे हैं। आपकी दुआ, मोहब्बत से मेरा दिल घबरा रहा है।

मोहब्बत में दिल आज घबरा रहा है।

तसव्वुर हकीकत हुआ जा रहा है।

मेरा एक सपना था कि कभी मैं भी हजयात्रा को जाऊं। लेकिन आज सपना सच हो गया!

मोहब्बत में दिल आज घबरा रहा है।

तसव्वुर हकीकत हुआ जा रहा है।

यूं तो यहां से है कोसों मदीना।

मदीना यहां से नज़र आ रहा है।

तो मुझे लगता है कि मेरे देश में, मेरे गांव में, मेरे गुजरात में, मेरी पृथ्वी पर, ऐसा माहौल एकता का बना रहेगा तो मुझे मदीना यहां से नज़र आ रहा है। मोरारिबापू को भी मदीना यहां से नज़र आ रहा है। ये एक अच्छा मंज़र है साहब! ये अच्छा नूरानी मंज़र है। मैं तो इस सत्तावन नवदंपतियों को प्रार्थना करूंगा कि इतनी नूरानी छाया में आप लग्नग्रंथि से जुड़े हुए हैं। इस दरगाह की इज्ज़त रखना। यहां जो बुज़ुर्ग लोग बैठे हैं उसकी दुआ को कामयाब होने देना। क्योंकि शादी हो जाये ये तो बहुत सरल है, लेकिन उसके बाद जो झंझटें खड़ी होती है! चाहे कोई भी कौम हो, कोई भी हो, इसको निभाना बड़ा मुश्किल होता है। जैसे दादाबापू ने कहा कि एक-दूसरे एक-दूसरे को प्यार दें, एक-दूसरे एक-दूसरे को इज्ज़त दें तो कभी तकलीफ़ होनेवाली नहीं। ये जो बना रहे और ये आपकी जिम्मेवारी है कि ये आप बनाये रखेंगे ताकि दरगाह की शान बहुत आशीर्वाद प्रदान करेगी आपको।

हम क्या करते हैं कि हमारे जीवन में धर्म के नाम पर हल्ला बहुत है। शादी तो शांति से हो जाएगी लेकिन शादी के बाद परिवार में हल्ला न हो, अल्लाह करे और हमारे मजबूरसाहब थे वो अकसर कहा करते हैं कि जहां बहुत हल्ला होता है वहां अल्लाह नहीं होता। और जहां अल्लाह होता है वहां कभी हल्ला नहीं होता। जहां अल्लाहताला है, परवरदिगार है, जहां खुदा की बंदगी है, जहां मोहब्बत है, जहां करुणा है, जहां सत्य है, वहां कभी हल्ला-गुल्ला होता ही नहीं। अभी-अभी दादाबापू ने ठीक कहा, कुछ कन्ट्रीज़ का नाम लेकर उसने ऊंगली निर्देश किया कि ये देश देखो, ये देश देखो, एक ही जाति के लोग हैं फिर भी काटे जा रहे हैं, मारे जा रहे हैं, उड़ाए जा रहे हैं! क्या-क्या नहीं हो रहा है आतंक! इसके बदले भारत में कितने वर्ण, कितनी जाति, कितने मज़हब, फिर भी इस दिव्य माहौल को हम बनाये रखने में सक्षम है।

गांधीजी काबूल गए थे, महात्मा गांधीजी। मोहब्बत क्या काम करती है यारों? सत्य क्या काम करता है? और इन्सान की करुणा क्या काम करती है? उसकी जीवंत मिसाल है। गांधीबापू काबूल गए। बादशाह खान सरहद के गांधी आपको ले गए थे और एक बहुत बड़े सभागृह में केवल हमारी मुस्लिम माताएं, बहन-बेटियां, उसीकी सभा थी। दो ही पुरुष थे सभा के मंच पर। सरहद के गांधी और महात्मा गांधी। और स्वाभाविक इस्लाम धर्म की नियामावली के मुताबिक, उसकी रीत-रस्म के मुताबिक सभी बहन-बेटियां आई थी गांधी को सुनने के लिए। लेकिन अपनी मर्यादा में, पर्दानशीं थी, पर्दा लिए हुए सब बैठी थी। बादशाह खान ने सम्बोधन किया। गांधीजी का परिचय दिया और गांधी का ऐसा परिचय दिया इन्सानियत के नाते, जो गांधी थे, ऐसा परिचय दिया। साहब! एक चमत्कार हुआ। जितनी बहन-बेटियां थी, इतिहास कहता है, सबने अपना पर्दा जरा ऊपर उठा लिया गांधी को देखने के लिए। एक महात्मा के दीदार के लिए। तो किसी ने पूछा, आपने गांधीजी को देखकर नकाब क्यों ऊपर उठा लिया? तो एक आवाज़ निकली थी कि पीरों से पर्दा क्या? जहां पीर बैठे हैं, जहां नूरानी लोग बैठे हैं, जहां कोई सूफ़ी लोग बैठे हैं, वहां कहां भेद है?

तो बाप! मुझे ये फिफाद का दृश्य अच्छा लगता है। फिफाद में कभी भी फसाद नहीं होंगे लेकिन देश में भी कभी फसाद न हो ये फिफाद का संदेश होगा। फिफाद का एकमात्र संदेश कि इस मंज़र को देखकर कहीं दंगा-फसाद न हो, कोई फसाद न हो, क्योंकि ये फिफाद है। इतना छोटा गांव, इतना सुंदर माहौल बना! मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। दादाबापू, अभी आप स्मरण करा रहे थे कि कभी एयरपोर्ट पर मिलन हो गया था लेकिन आज रूबरू दर्शन हुए, मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि एक ऐसा इन्सान भी हमारी इस भूमि पर सांस ले रहा है, जो सबके लिए जी रहा है सरलता से और सरल-सहज लगते हैं। इनमें से हम सीखें साहब! इनसे हम हमारे जीवन को बनाये तो क्या नहीं होता? किस कारण भेद? क्यों भेद?

हमारे महुवा में तकरीरे होती हैं 'यादे हुसैन' के बैनर के नीचे। कई मौलाना सब आते हैं। कभी कुछ होता ही नहीं। इतना बड़ा पैगाम जा रहा है। और मैं तो प्रार्थना करूंगा कि एक किताब दादाबापू को पेश करियेगा 'मजहबे मोहब्बत', जो हमने जो-जो कहा है वो। मैं रामकथा में संकीर्तन करता हूं और बीच-बीच में 'हरि बोल हरि बोल' कराता-कराता 'अली मौला अली मौला अली मौला' बुलाता हूं और पूरी सभा अली मौला का कीर्तन करती है, तो कई धर्मगुरु मुझे भी पूछते हैं कि आप 'हरि बोल' के साथ 'अली मौला' को क्यों लाते हैं? मैंने कहा, मैं लाता नहीं हूं, अली मौला मुझसे बोल रहा है। मुझे दुनिया को खुश नहीं करनी। इस्लाम जगत तो खुश करने के लिए 'मैं अली मौला, अली मौला' नहीं बोलूंगा। आपको खुश करने से मुझे क्या लेना-देना है साहब? मुझे किसी की दाढ़ी में हाथ नहीं डालना है। मुझे खुद की दाढ़ी है। तो 'अली मौला' मैं क्यों बोलूं? मैं प्रयास नहीं कर रहा हूं कि आज-कल के लोग हम हिन्दु-मुस्लिम को राजी करके अपना-अपना काम निकालने की कोशिश करते हैं! ऐसा मैं आदमी नहीं हूं। मैं साधु हूं। तुम्हारी बोली में मैं फ़कीर भी हूं, केवल साधु नहीं। तो मैं 'अली मौला' का कीर्तन कराता हूं। आप सब जानते होंगे कि कई लोग नाराज होते हैं कि बापू, ऐसा क्यों आप करते हैं? तो मैं कहता हूं कि मुझे अंदर से उठता है तो मैं क्या करूं? मन्सूर ने रोका नहीं था। मन्सूर को कहा कि तू कहता है कि 'अनलहक', 'अनलहक', उसके गुरु ने कहा कि तू चूप रह, मौत का धंधा कर रहा है तू! 'अनलहक' की जिद्द छोड़। तो उसने कहा कि मैं करूं क्या? मेरे से वो बुलवा रहा है तो मैं जाऊं कहां? मैं नहीं बोल रहा हूं। मैं नियम जानता हूं कि ऐसा बोलने से मेरा सिर कलम होगा। मुझे ज़िंदा नहीं रहने देंगे। मैं इस पृथ्वी पर ज़िंदा नहीं रह पाऊंगा। ज़िंदगी तो मुझे भी प्रिय है। गुरुदेव, आप कहते हैं, मैं समझता हूं। मैं बहुत दबाता हूं। फिर भी अंदर से मेरी आवाज़ उठती है तो मैं जाऊं कहां?

आप तो सब जानते हैं। आपके सामने मुझे इन कथाओं क्या कहना? हिन्दी में एक कहावत है, 'नानी के आगे ननिहाल की बातें।' आप तो जानते हैं। लेकिन मन्सूर को जब चढ़ाया गया। आपने इतिहास पढ़ा होगा। न पढ़ा हो तो मैं नए दुल्हा-दुल्हन को प्रार्थना करूं कि कम से कम पढ़ियेगा। थोड़ा अपने हृदय को चौड़ा बनाइयेगा, संकीर्ण मत रहियेगा। ज़िंदगी में बहुत कुछ सीखने जैसा है। कान इतने खुले रखो कि जहां से सत्य मिले तुम ग्रहण कर सको। हम बंधियार हो जाते हैं। नदी बहती रहती है तो पवित्र रहती है और बंधियार होती है तो इसमें कीड़े पड़ जाते हैं। हमारी सोच बंधियार, संकीर्ण, नेगेटिव होती है तो इसमें कीड़े पड़ते हैं, इसमें दुर्गंध हो जाती है। विशाल हो बहुत। हम तो इसलिए कितनी आलोचना सहन करके करें?

भावनगरवाले लेखक महबूब देसाई प्रोफेसरसाहब हज पढ़ने गए। ये हज पढ़कर मेरे पास आये। तो बोले, बापू, हम आपके लिए प्रसाद लेकर आये हैं। मैंने कहा कि जरूर, मेरा सद्भाग्य है। आप लाये हैं। तो उसने खजूर दिया, इत्र दिया, ज़मज़म का पानी दिया। मुझे कहे कि बापू, ज़मज़म का पानी आप पियोगे? और वो जानते हैं कि मैं गंगाजल पीता हूं। ये मेरी मस्ती है। मैं गंगाजल पीता हूं। मेरी रोटी गंगाजल में बनती है। मैं इतने सालों से गंगाजल पीता हूं। उसने कहा, प्रेम से कहा कि बापू, मैं आपके लिए ज़मज़म लाया हूं। आप ज़मज़म पिएंगे? मैंने कहा, महबूबसाहब, ज़मज़म पिउंगा नहीं, आप बैठिये, प्लीज़ एक घंटा। मैंने तलगाजरडा के रोड के सामने से भरवाड बहन को बुलाया। उसे मैंने कहा कि ये पवित्र जल है। तू तेरे घर ले जा। उसमें से बाजरे की रोटी बना ला और मुझे दे और महबूबसाहब देखे वैसे मैं रोटी खाऊं। साहब! मुझे भेद

नहीं है। तो मैंने ये ज़मज़मवाले पवित्र पानी की रोटी खाई है। आप भी कभी लाओ तो मेरे लिए ज़मज़म का पानी ले आना। मेरे लिए गंगाजल और ज़मज़म में भेद नहीं है। मैं बिलकुल इस तरह का साधु हूं। आप ले आना, जरूर। मैं उसी की रोटी खाऊंगा। ये वादा है जनता के सामने। मैं करके दिखाता हूं। तो ये एकता हम सबमें आनी चाहिए।

एक बार क्या हुआ साहब! हमारे महुवा के तकरीर में एक हमारे मौलाना, बहुत प्यार आदर रखते थे लेकिन बहुत जोश में बोले, बहुत बोले! बापू यदि सब एकता रखना चाहते हैं तो बापू के रामजीमंदिर में हमें बुलाये और रामजी के मंदिर में हमें नमाज पढ़ने की इज़ाज़त दें। बोलो मेहंदीबापू, ये बात हुई थी? महापुरुष बोल रहे हैं तो बीच में तो मैं कुछ नहीं बोल सकता। तो बोल लिए। मेरी बारी आई। मैंने कहा, तलगाजरडा रामजी मंदिर का दरवाजा रात को बंद होता है। हमारे रामजी शयन करते हैं। लेकिन ये तलगाजरडा का मंदिर ये हमारे गांव का मंदिर है। इसलिए राम हमारे हैं। मैं जब भी चाहूं उसको जगा सकता हूं, सुला सकता हूं। आप यहां से सीधे आईये। मैं एक बजे रामजी मंदिर का दरवाजा खोलूं। दुनिया की ऐसी-तैसी! आप आओ। आदर के साथ मेरे रामजी मंदिर में नमाज पढ़ो। आओ मेरे साथ। मैंने बहुत प्यार से निमंत्रित किया। तो आपने हंसकर के मेरी बात उड़ा दी! फिर मैंने मुस्कुराते हुए कहा कि कभी मैं कहूं कि हम भी शंख और जालर लेकर मस्जिद में आये तो हमें भी आने देना। साहब! एकता हमारी तभी सिद्ध होगी जब मोहब्बत होगी।

फ़ांसले सदियों के एक लम्हें में तय हो जाते।
दिल मिला लेते अगर हाथ मिलानेवाले।

ऐसा कुछ फिफाद में हो रहा है। ये दुल्हा-दुल्हन तो निमित्त है। ये तो यहां भी शादी हो सकती थी; कोई पारिवारिक रूप में भी कर सकते थे। लेकिन फिफाद में, इस पवित्र दरगाह की छाया में ये जुड़ रहे हैं। मुझे लगता है कि ये सत्तावन दंपती हमें संदेश दे रहे हैं कि आप भी जुड़े रहना। आप धर्म के नाम पर, भाषा के नाम पर, वर्ण के नाम पर, अपने-अपने ग्रंथों के नाम पर प्लीज़ तलाक मत लेना। इतनी सुंदर एकता देख रहा हूं तो मुझे लगता है, मदीना यहां से नज़र आ रहा है। अच्छा हिन्दुस्तान, प्यारा हिन्दुस्तान, प्यारी पृथ्वी दूर नहीं है। मैं मेरी बहुत प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। इन बेटियों को और दुल्हों को और तो मैं क्या कहूं? लेकिन हमारे वल्लभभाई के बेटे ने भी बहुत योगदान दिया है। फिर ये साहब ने भोजन का और पगड़ी बांधकर के आपने अगली साल का भी डाल दिया है उसके ऊपर। समाज बहुत तैयार है साहब! ऐसे ही कोई पगड़ी बांधता ही नहीं! पगड़ी के आटे में कुछ न कुछ छिपा हुआ होता है! लेकिन ये मोहब्बत की पगड़ी थी। ये फ़कीर की उपस्थिति में पहनाई हुई पगड़ी थी। उसका कोई मूल्य नहीं कर सकता। तो ये सब लोगों ने ये पूरे उत्सव के लिए अपना योगदान दिया है प्रसन्नता के साथ। हम तो और क्या कर सकते हैं? लेकिन हम साधु के नाते हमारे रामजी के मंदिर में क्या होता है कि हम अन्नकूट भगवान को भोग धराते हैं तो तुलसीपत्र डालते हैं, तभी भगवान खाते हैं। तो मैं तो रामजी मंदिर का पूजारी, तो आपने शादी में जो छप्पन भोग परोसा है उसमें एक तुलसीपत्र डालना चाहता हूं। है छोटा-सा बिलकुल लेकिन कबूल करियेगा। ग्याहर हजार रूपिया तुलसीपत्र के रूप में मैं इसमें डाल रहा हूं। केवल छोटी बात है लेकिन ग्यारह हजार आप उसको कुबूल करें। मैं खुद बहुत प्रसन्नता के साथ आपसे विदा ले रहा हूं। लेकिन आखिर में एक-दो बात कहकर जाऊं-

तू निशान-ए बे-निशान है, तू बहारे शर्मदी है।
तुझे देखना मेरी इबादत और तेरी याद बंदगी है।

इन शब्दों के साथ मेरी बहुत-बहुत दुआएं। दादाबापू ने तो कुर्रान के पवित्र शब्दों में, या तो जो बोले नवदम्पतियों को दुआ दी है। मेरे पास तो ये जुबां नहीं है। मेरे पास ये मंत्र नहीं है। मेरे पास जो मंत्र है इससे मैं भी इन सत्तावन को दुआ दूं-

यस्याङ्के च विभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके
भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट्।
सोऽयं भूतिविभूषणः सुरवरः सर्वाधिपः सर्वदा।
शर्वः सर्वगतः शिवः शशिनिभः श्री शंकरः पातु माम्।।

'कुर्यात् सदा मंगलम्।' सबका बहुत-बहुत मंगल हो।

काबे से बुत-कदे से कभी बज्मे जाम से।
आवाज़ दे रहा हूं तुम्हें हर मकाम से।

(फिफाद(गुजरात) में आयोजित समूह-शादी अवसर पर प्रस्तुत वक्तव्य, दिनांक : ४-४-२०१८)

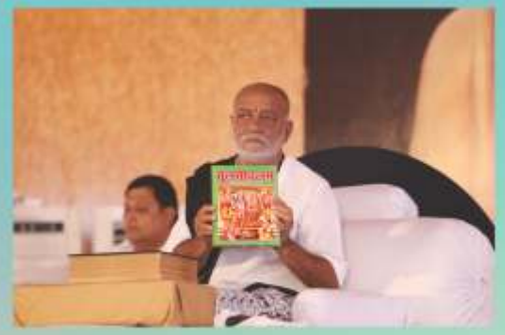

एक अर्थ में कथा उसको कहते हैं जिसमें संत, हनुमंत और भगवंत तीनों की चर्चा हो। क्योंकि तीनों विहारी हैं। संत विहारी है। 'चरैवेति चरैवेति।' साधु निरंतर विचरण करता है। हम जैसों के पास आकर हमें धन्य करता है। हनुमंत का गगन विहार है; आसमां का विहार है। श्री हनुमानजी निरंतर विहार करते हैं। रामकार्य पूरा होने के बाद श्री हनुमानजी का विहार है भगवद्कथा। श्रवण में उसका विहार है। वायु के रूप में तो सतत बहते ही रहते हैं। और भगवंत भी विहार करते रहते हैं। परमतत्त्वों का एक जगह ठिकाना नहीं होता है। ये सदा-सदा बिहारी ही रहते हैं। भगवान कृष्ण को देखूं तो भी मुझे बिहारी लगते हैं। मेरे ठाकुर राम को देखूं तो भी बिहारी लगते हैं। किसी संत को देखूं तो भी बिहारी लगते हैं। हनुमंत को देखूं तो भी बिहारी लगते हैं। और भगवंत तो बिहारी है ही। तो ये विहारलीलाओं ने हमें कृतकृत्य किया है; हमें धन्य किया है।

– मोरारिबापू

॥ जय सीयाराम ॥